













# ॥ साम्प्रतिशास्त्रम् ॥

( चत्तिप्राचीनम् )

॥ साम्प्रतिशास्त्रम् भेदासुनिना पुष्पेण कृतम् ॥

---

चतुर्वेदानुवादकेन,  
साम्प्रतिशास्त्रस्य सत्यव्रतशर्मणा सम्पादितम्,  
बोधसौकर्यायामगृह्येतीयितम् ।

---

CALCUTTA.

16—1, GHOSHĒ'S LANE, NATTA PRESS.

Printed and Published by Priya Vrata Bhattacharjya.

1890.



## ঐশ্বরভূতসূচনা ।

আমি গত তৃতীয় সন্ধ্যা সময়ে স্বাস্থ্যলাভাশয়ে বায়ু-  
রাগি-পরিবর্তনের জন্য সপরিবার ৩৬ বৈদনোপধামে অবস্থিতি  
করিতেছিলাম, সেই সময়ে মৈথিলার মধ্যে অদ্বিতীয় সাম-  
গ্যার্চক, দ্বারবন্ধাদিপতির কনিষ্ঠ সহোদর শ্রীমান রাজা,  
রামেশ্বর সিংহ বাহাদুর মহোদয়ের সান্নিধ্যাচার্য, শ্রীযুক্ত  
আচার্য অঘোধ্যানাথ গিঞ্জ মহোদয়, আমার বাসায় সপরিজন  
আগমন পূর্বক আমার সহিত বৈদিক-আলাপ করিয়া সাম-  
বেদের প্রাতিশাখ্যাাদি গ্রন্থ পাওআ যায় এবং সামসংস্কৃতের  
অন্তে যে এক-একটি অক্ষর প্রাচীন পুস্তকে দেখা যায়, তাহারও  
অর্থ আছে ও তাদৃশ-অর্থ-জ্ঞাপক পুস্তকও আছে,—ইত্যাদি  
সবিশেষ অবগত হইয়া বড়ই বিস্মিত হ'ন এবং ঐ সময়ে  
অধিগত হইবার জন্য লালায়িত হওত উপযুক্ত পরি কয়েক  
দিবস আমার নিকটে আসিতে থাকেন; পরে সেই সময়ে  
দৈববিড়ম্বনাবশে তাঁহার কাঠের পীড়া বিয়ত হয় এবং  
আমার প্রত্যাগমনের চেষ্টাও উপস্থিত হয় ততরাং তিনি  
স্বকার্য-সাধনে সম্পূর্ণ কৃতকার্য হইতে না পারিয়া ভবিষ্যতে  
ইচ্ছাসিদ্ধির আশয়ে একখানি প্রার্থনা-পত্র লিখিয়া নিজ  
ছাত্র দ্বারা পাঠাইয়া দেন । উহাতে অন্যান্য বিষয়ের সহিত  
“সামপ্রাতিশাখ্য”—প্রাপ্তির জন্ম ও প্রার্থনা ছিল। সেই মৈথি-  
লাচার্য মহোদয়ের প্রার্থনাও আমার এই সামপ্রাতিশাখ্য  
প্রচারের একটি নিদান । উক্ত মৈথিল সামগ্যার্চক মহোদয়ের  
লিখিত প্রার্থনাগুলি পরপৃষ্ঠে যথাবৎ প্রকাশ করিতেছি ॥

## ॥ सूचना ॥

बारवृत्तीधिपानुजरीजश्रीरामेश्वरसिंहवाहनपुरस सामवेदध्यापकेन निधिलोकभूषणेन  
 महामतिना श्रीमद्वीष्णुमाधमिग्रमहीदेवेन वैदिकसामवाचारेण खविध्वसुमेधमितं-  
 शुक्रीग्रमाणशेषे वैद्यनाथसेवे नक्षत्रमया प्रेषितं तत् स्वकर्कमन्त्राङ्कितं प्रार्थनम्, तद्गु-  
 रोधरसमन्वैतस्य सामप्रातिश्राव्यस्य अर्कटज्ञे योजानर . मिति, तदिह प्रकाशयते . च  
 यथायथम् । पश्यन्तावत्—

“ \* \* \* सामतन्त्र सभाष्य १ . ऋक्तन्त्र सभाष्य १  
 सामवेद कां. प्रातिश्राव्यं १ और प्रतिसाम के अन्त में एक  
 एक अक्षर लिखा रहता है उस का सूत्रावली १ इत्यादि  
 सामवेदीपयोगी यो. अपूर्व अपूर्व विषय आप का पास सुना है  
 उस सभ का नाम लिख करके भेज दीजिएगा कर्पायुक्त रहि-  
 एया एही हमारा प्रार्थना है और अर्पाने घर का ठेकाना और  
 पूरा नाम अर्पाना लिख कर दीजिएगा की उसी पते से  
 बीठी पत्रों हम लिखा करेंगे ।”

## ॥ अथ सामप्रातिशाख्यप्रकाशकोक्तिः ॥

भो भो प्रकलितवो यूयं मा भागीभिर्ख्याभिनन्दत, —  
 पश्यत तावदतिविश्रुत मप्येतद्दृष्टवरं प्रायः, प्रकानुसम्भनतल्प-  
 रणामप्यतिदुर्लभं नाममात्रावशिष्टकल्प मनिर्दृष्टकर्तृकं पुष्य-  
 विप्रशीतं वा प्रतिप्रामाणिकं प्राणिनीयादिभ्यो मीमांसासूत्रार्थ-  
 भ्यश्च पुरातनं सामगजीवनं सामर्थ्याकरणमिदं दृक्पथं नोयते  
 भवता मधिकर्णयोर्वादभङ्गनायेति । एतस्यैव हि तार्त्तीयिकं  
 सूत्रमेकमवलम्ब्यारचितं मीमांसादर्शननवमाध्यायीयनवमा-  
 धिकरणम् ; तद्योक्तमधिकरणमालायममपि “तथाच सामगा  
 आहुः—‘वृषं तालव्यमात्रं भवति’—इति”—इति ।

सोऽयं सामग्र्यो द्वादशप्रपाठकौककः । तत्राद्ययोः प्रयोः  
 प्रपाठकयोः दशरात्रसंवल्लरैकाहहोत्रसत्रप्रायश्चित्तसुद्रानुसारतो  
 हिः स्तोत्रियपरिचायकाभिधानादीन्व्यभिहितानि ; ततो दशसं  
 प्रपाठकेषु सान्नां भावादयो निरूपिताः समयाः समन्तात् ।  
 तत्राहृत्तोकांशाहं अचार्यः स्वयमेवैतन्नवमद्वितीये । तथाहि —

“अथ भावान् प्रवक्ष्यामः प्रमाणं यैर्विधीयते ।  
 आर्षिकं स्तोमिकं चैव पदं त्रिक्रियते तु यैः ॥  
 आयत्वं प्रकल्पितं त्रैष वृषं चावृषं शैव ॥  
 गतांगतं च स्तोभाना मुञ्चनीचं तथैव च ॥  
 सन्निवृत्तं पदवहानं मत्स्यं मार्भावमेव च ।  
 प्रक्षेपाद्याय विज्ञेया जहे त्वेव निबोधयुः ॥  
 संक्षेपं विकलं च व्यञ्जनं लुप्तं मतिहृतम् ॥  
 आभावाद्यं विकाराद्यं भावानहेभिस्यद्यत् ॥

एतैर्भाषैस्त्वं गावन्ति सर्वाः शाखाः पृथक्पृथक् ।  
 पञ्चदशैव तु गावन्ति भूयिष्ठानि ऋषिस्तु ॥  
 कामानि षट्सु-र्वाभ्यानि सप्तसु वै तु बीजमाः ।  
 जीवानां मन्थसा मीतिः क्खाना मधिजाच ये ॥  
 बीनिदृष्टाः समा ये ऽन्धे पादास्वचरणः कृताः ।  
 प्रायेभावश्च नेदानीं दीर्घं यजैव कथ्यते ॥  
 ऋषिणं तु निवर्त्तते काचिवावा सुपद्मे ॥  
 श्रीभाषो दृश्यते साञ्चि श्रीभाषश्च यथाक्रमम् ॥  
 प्रभुदूरे न सर्वत्र क्वहे गेती दृश्यवत् ।  
 सादिर्षेर्विनिस्त्रायां तथैकान्येषु सामसु ॥  
 ऋषिकं निधनं न्याये स्त्रीभिर्वा वा कद्वरम् ।  
 कष्टाकष्टभवेत्सार्थं मन्तीदांतं त्रये सुरम् ।  
 मन्वागमएसदहोना माविश्रासिदिदेषु जितं ।  
 त्वनाद्ययश्चिद्येतिभूरधिप्रिवसमिदिता ।  
 जसावसन्तमन्वंभेग्लुतलडाः विभिर्षयम् ।  
 न्यायादेतान्यपेतानि शतएते त्रये रवरम् ।  
 श्रीभासपीकशांतेकरविष्ठाञ्चिद्रथेषु ।  
 वेताञ्चमलश्रीकान्तीपतुःपधिडमीपुताया ।  
 मन्भासे पीकान्ते सप्त बीकान्तेषु पूर्वक.दशे ।  
 रविश्रीके इमा स्त्रीभे द्वे द्वे कायनिरीधिनी ।  
 'यथाश्रीगवकीक्रीभभर्षाञ्चिरेडु पद्मे ॥' - इति ।

एवञ्चैतद् वस्तुं प्रकृतं एव, - न चाप्याध्ययनं मन्तुः साम-  
 प्रतीत्तरदाने सामसु सुपूर्वाभ्यते, 'समकल' वा पूर्वत इति ।  
 अत्रासं प्रत्यक्षरयो बोधो यथाप्यसाममानां मन्तिदुःखः, परं

যেবা ময় মতিমবীজনীঃ; তেবা মধীর্ত্বামকন্যামন্বৈতীম  
 স্বয়ম্ ; ততঃ কিম্বৃত মিতহীকবেমি নি তমপ্রযেয়মি স্বম্মতি ন তবা  
 যম্বো যথা মূকব্ধম্বৈরতি মম্ ।

যে সকল মহোদয় প্রয়োজনীয় অতিপ্রাচীন গ্রন্থাদির  
 লাভের ইচ্ছা করেন, তাঁহারা অদ্য আমাকে আশীঃ—প্রদা-  
 নাদির দ্বারা অভিনন্দিত করুন। দেখুন—অতিবিখ্যাত  
 অথচ অদৃশ্যকল্প, এমন কি প্রাচীনগ্রন্থাদির অনুসন্ধানে বহু-  
 কটি যুরোপীয় পণ্ডিতগণেরও ছুপ্রাপ্য, এক্ষণে নামমাত্রা-  
 বশিষ্ট বলিলেও চলে, সম্ভবত পুস্তকাদক মহর্ষির প্রণীত,  
 অতিশয় প্রামাণিক, পাণিনিমুদ্রে হইতে—ঐকব্দর্শনভ্যেষ্ঠ  
 মীমাংসা হইতেও পুরাতন, সামগ্গণের জীবমঙ্গরূপ, এই  
 সামবেদীয় ব্যাকরণখানি আপনাদের চক্ষু-কর্ণের বিবাদ-  
 ভঙ্গমার্থ দৃষ্টিপথে উপস্থিত করা হইতেছে।

এই গ্রন্থের তৃতীয়াধ্যায়ের প্রথম সূত্রটী অবলম্বন করি-  
 যাই মীমাংসাদর্শনের নবমাধ্যায়ী নবমাধিকরণ বিরচিত হই-  
 য়াছে।

এই গ্রন্থখানি 'প্রপাঠক' নামক দ্বাদশ পরিচ্ছেদে বিভক্ত।  
 সামবেদের সকলগ্রন্থেরই অধ্যায়গুলি প্রপাঠক সংজ্ঞায় ব্যব-  
 হৃত দেখা যায়। প্রথম ও দ্বিতীয় প্রপাঠকে যথাক্রমে দশরাত্র,  
 সংবৎসর, একাহ, অহীন, সত্র, প্রায়শ্চিত্ত ও ক্রুর পর্বানুসারে  
 স্তোত্রিয়-সামসম্বন্ধে সংজ্ঞাগুলি সংক্ষেপে দিবার পরিচায়িত  
 হইয়াছে। তৃতীয় ও চতুর্থ প্রপাঠকে সামমধ্যে ক্রুর আই-  
 ভাব ও প্রকৃতিভাব সম্বন্ধে বিধিসমস্ত উপদিক্ত হইয়াছে।  
 পঞ্চমপ্রপাঠকে বৃদ্ধ ও অবুদ্ধতাব যথাযথ ব্যবস্থিত হইয়াছে।



ষষ্ঠপ্রপাঠকে সামভক্তিসমূহের কোথায় গীত হইবে কোথায় বা অগীত থাকিবে ইত্যাদি নির্দিষ্ট হইয়াছে । সপ্তম ও অষ্টম প্রপাঠকৃত্তয়ে লোপ, আশম ও বর্ণবিকারেণ স্থানাতি পুঙ্খানুপুঙ্খরূপে উপস্থিত হইয়াছে । নবমপ্রপাঠকে ভাবকথন । এবং অষ্টমপ্রপাঠকে কৃষ্ণকৃষ্ণ নির্ণয়াদির পরেই প্রস্তাবসম্বন্ধে লক্ষণাদি প্রকাশ করা হইয়াছে ।

এতাবত ইহা বলাই কহল্য যে এ গ্রন্থের আদ্যোপান্ত অধ্যয়ন ব্যতীত সামসম্বন্ধে কোনরূপ প্রশ্নেরই উত্তর দেওয়া যায় না সতরাং যে কোন সমিতি এই গ্রন্থখানি ভালরূপে অধ্যয়ন করেন নাই, তিনি কোনমতেই আপনাকে সম্পূর্ণরূপে সন্তোষিত বলিয়া বিবেচনা করিতে পারেন না ।

যাঁহারাই সামবেদ রীতিমত অধ্যয়ন না করিয়াছেন তাঁহাদের পক্ষে এ গ্রন্থের ভালরূপে অর্থ বোধ যদিও অতিকঠিন কিন্তু যাঁহাদের জন্য ইহা অতিপ্রয়োজনীয় তাঁহাদের অর্থাৎ সামগণ্ডের পক্ষে কঠিন নহে; অতএব আপাতত ইহার মূলরক্ষাই যাদৃশ কৰ্তব্য বিবেচিত হইল, টীকা প্রস্তুত করিয়া মুদ্রাযন্ত্রে নাহায্যে তাহা প্রকাশ করা তাদৃশ প্রয়োজনীয় বলিয়া বোধ হইল না; — মূল রক্ষিত হইলে যথাকালে টীকা ও অনেক হইতে পারিবে ॥

ভারতবাজধানী,  
মাসিকা: ১৮১১ ।

শ্রীসংস্কৃতমণি ।.

## ॥ अथ सामंप्रातिशाख्यम् ॥

॥ हरिः ॐ ॥

ॐ उच्चा मही पुनारवर्षये आत्वीशनं कयादेयं तवो-  
धसं तरोलेयं स्वादिहितं पवस्विन्द्रमच्छसफंक्ते पु-  
रःश्यावागवे ऽभिप्रिकावः स्वासुत्तीय मेद्युसाकं वयंभ  
रुमधामेधं पान्तं ह्यं प्रवःशाक्तं वयङ्काणो प्रथमः ॥ १ः

• इन्द्राकक्षमयन्दासैर्द्धुसंज्ञनमातूपारमभितार्धभं  
मिदङ्गारमिदंष्टुतश्चुन्नधनमातृ तिययोगेमेधमिन्द्रसुत्रे  
कीत्समाश्वन्द्रेणासुतासोमैकज्ञौ प्रसोजयंतचेप्रसोहि  
तमयासफमाचार एह्य्यप्रमुन्याबौ रोगीतममेकर्चावृषा  
यौक्ताथ पुनायास्यमैडे द्वितीयः ॥ २ः

एतास्वेवत्रिणिधनं वृषाशोशिष्ठमभिप्रव श्यै-  
तंत्वामिदाकृन्दसंयस्तेषातम्यवस्वमच्छुपुषासुशंकुसुज्ञा-  
नरीवितान्येकर्चाः पृषातं चैक्रीच्चवृषायंममेवामहीवि-  
श्वदेष्टुम्यूर्वमुञ्चाक्षुष्टमभिसोमदृगंतमंप्रहिन्वाष्का-  
रान्तन्तिस्वः संक्रोशोघत्वाष्टमभन्तरणिरवन्तिस्वः ष्टौहे  
तृतीयः ॥ ३

आसोसखाषाचःशौक्तएकश्चैसुताविलन्वाष्ट्रिभन्ते-  
 स्वासुहिष्ठीयंवर्षरश्चगंनिदक्षसाकामन्तवदएष्ट्रोत्तरा-  
 भीशवेस्वःपृष्ठञ्चपुनासत्राविश्रवाःशोक्तयोरापृश्नौस्मोतं  
 रएस्वासुत्वएहिहत्कमातौषासोमःपुरो नानदंवात्सपृष्ट  
 सोमःसैभ्यद्वितमग्निं वञ्चतुर्थः ॥ ४

प्रियमिमं वितं जुषस्वार्षाशकलवाशेउष्वाणमान-  
 वान्मूषवास्मान् यानियरसोशवन्तनिव्यएशुर्दुग्मं प्राणाव-  
 नक्रोशेजसावितपार्थेस्पत्यमिन्दुरातेसञ्चयमिन्द्रामितम  
 सामहामित्रमिन्द्रावृधीयक्रीञ्चे पञ्चमः ॥ ५

एतास्वैववयंमृञ्चौक्षोरग्नेस्वःरैडेजजिद्वरुणसाम-  
 गोष्ठमुत्वंहवद्देव्यरेवन्तीयम्परिस्वावेदन्वतानिदृती-  
 याद्यचतुर्थानिसमुतवेदीर्घकार्षी सोमागौरीमधुञ्चुन्नि-  
 धनेतथाक्रीञ्चेबाड्निधनमैडेश्नौष्टमयापवाग्नेगूर्दःप्रवा-  
 चीपिद्वएशपुदे षष्ठः ॥ ६

वृषातनिपृश्नैड्कूलीयानिपुनाकखतरगौङ्गवया-  
 स्थानिस्तासुप्रवदभिनिधनं वैखानसानियसोमैक्षमेषस्य  
 शार्करंप्रवःसखापुरोवितकार्षीञ्चैहविषयेसोजरावा-  
 त्समातेजद्वःसौश्रवस्यदिवीक्षमध्व्योरूपे सप्तमः ॥ ७

एतास्वैवाशुमार्गीमित्तटतसाकलम्बान्यभिसोहि-  
 हिङ्गुपार्श्वहर्मगतहाराच्छिद्राणिप्रहिन्मन्वाहुकृणमुद्

वद्वैर्यदि नैमातिथसुभयवैयङ्ग्युपकसुरुपाद्यभासका-  
 चीवतासितान्यष्टमः ॥ ८

दुस्रमैषिरंपुष्पमत्रैतमभीनोवितकौरसशुद्धाकौश्ल-  
 रयिष्ठौदलानिस्वासुधर्महिनूविशीयंसासुशनसांवर्ष-  
 मारुतानिजिघ्रतद्वत्यदारसुरुपीत्तरएहरिप्रीनिधमसैम्बु-  
 बाभ्रवेडानां संक्षारकष्यभयेति नवमः ॥ ९

तापिंपुष्पकौल्मपुष्पदैर्घवैद्यश्लाद्याभीश्वानिश्रीण-  
 न्त्तोवासिष्ठमसासामरानं एसासुश्रायंन्तीयंयंतःसम्मतंत्व  
 एसामाश्वसूतंशाम्मदावचीनेडविष्कृतांनित्यम्यंस्वपवत्त  
 मनसंपरित्यंवितनिहवहिहीथानि दशमः ॥ १०

एताखेवासितसाधुपीराणिस्वासुविधमोपोषुशुध्य-  
 ंहास्वैभवांहककुभोहृश्रीयान्युवाजिगाभीकेपुनोत्से-  
 धचीयनिषेकान्याजावितंमाचित्तिथमुदुत्वेवत्तोष्ककु-  
 लीयंपर्युषुश्यावागवेधन्वहविषंवाङ्निधममेकादशंसूर्य-  
 स्याग्निंवाजजिह्वेयं दशरात्रः ॥ ११

कृषामहीपुनामन्तंपुरसःपुष्पःपुष्पःदैर्घ्यंकापार्थमां-  
 बिंद्वत्तीयस्तेजराच्छसुंज्ञानंपुरःकौश्लंपोकावमग्निं वःसं  
 त्रापसामीश्वपुसासदेपत्रंसासुवर्तःयंतेज्ञानकाशी  
 तेपसुवितंभाजान्योकोनिधनएसत्रीरौदलंपसुन्वासाधे  
 प्रथमः ॥ १२

वृषांघ्नतयैक्तोत्तरेतोषिच्छन्दसमृचोडमाञ्जीख-  
 त्चेस्रीणन्तस्त्रिणिधनं वृषाशोपार्थमभिपवर्त्तः शंकुविते-  
 /पवस्वायम्पूषाभामहीविश्वान्दुष्टैत्तरंमुञ्चाहूपमभिसो-  
 रौरवंप्रहिन्वान्नेयमात्वावर्त्तः स्वासुक्षुल्लकवाचेसखाज्ञान-  
 दासेसुताम्बौ द्वितीयः ॥ १३

पविराजंपवस्वादारतोषिंपृश्नेकस्यींतृचेभीशवी-  
 त्तरंयैधाश्रीणमुहुवात्रस्यंसिंहयोरान्वर्त्तः स्वास्वैंस्त्राद्य-  
 सुज्ञानेपरस्त्वाष्ट्राह्ण्डेडस्वासुलोशाद्यैडशुद्धीयेचर्षास-  
 न्तन्यभिसोमानान्नानूपवामांख्यभिविसंम्यायशावर्त्ती-  
 सागौषुक्तं प्राणज्ञाने तृतीयः ॥ १४

एतांस्त्रेवदासंपवस्ववारयिष्ठमसालौशोत्तरंयजिष्ठ-  
 साध्यमिंद्राश्वसूक्तंमृज्यमतन्त्रिणिधनायास्येसाकथसि-  
 ङ्गपिवावर्त्तः परिह्वैधमत्ताहन्तवर्चिज्ञानकाशीतेस्वासु-  
 रुतांश्चेनुप्रसेचिर्वर्त्तोत्सप्रत्नवर्त्तलेये तथाभिसोमत्स-  
 परिधीन्दुहेति च चतुर्थः ॥ १५

हाउनिद्वंप्रतेलौशाद्यमन्द्रदुग्धावर्त्तलेयेद्वन्दुःस-  
 म्यापवस्वत्वाष्ट्रीदिरभ्यस्तङ्गीविल्लीशोत्तरम्यवमाहृषोवर्त्त-  
 लेयेच्ययांप्रवासिष्ठंज्योतिर्मरुतामुच्चासत्रोपुनावर्त्तीभि-  
 वायुम्प्राथंपुरीमधुश्चुच्चीर्यबृहदाग्नेयमभिसोंगौह्ववंप्रहि-  
 न्वायैधाजादिक्षुष्टम् पुञ्जमः ॥ १६

• प्राजातममभ्येडङ्गावन्तोषिमतंयधीसितं हषाया-  
ममैडङ्गत्वायत्तं स्तिसोहितएसहत्वाष्ट्रास्यसचातवोस्ते-  
घादुहाष्ट्रिशिशुंम्यार्थं दुग्मंप्राणासफशुध्येकर्चाविंदु-  
निषेधोधर्त्ताकावंक्रतुएष्टम्भएसंखापौष्कलंक्रतुएश्यैतम-  
च्छुध्ये षष्ठम् ॥ १७

क्रतुन्धसंपवनेपौष्कलमस्यामहीतोषिलेयमृच्यथए-  
सोपार्थएखानोहितंम्यवसचांपर्युदेव्यमिंदुर्युंहापरिप्रध-  
वारएसूर्यस्यकावंहवेपवंमापौरुमीठम्भन्दनवाद्यम्परि-  
धीनिवमभिसोहाजमुत्सःसिष्ठ यहापमेनमितिप्रसोंगव-  
शुद्धीयएकर्चाःक्रतुन्मीठन्त्वर्चिशुध्ये सप्तमः ॥ १८

• • • क्रतुन्मानवाद्यं प्राणापौष्कलंक्रतुञ्जनिवसोमः-  
शुध्यंक्रतुं हाजमभिसोतिथंताषिदुक्थंयस्तेसोमसोमा-  
ध्यर्धेडमदब्धःसुमाण्डवमस्यचरातोषिरवंश्वे देवानिह-  
वः संवत्सरः ॥ १९

प्रतिनानदमानेविंश्राश्यै तम्परोदलएखादोःश्यै-  
तम्पवस्वेडानांक्रर्धेपुत्रयौधाशिशुन्देव्यङ्ग्याखारम्यस्य  
म्यारिप्रधंभवसफमेकस्याभुञ्जाखारसोपस्यं शाक्करेपुनाष्ट-  
भलेयेश्रायभरन्तरोवारमच्छैकस्यांपुरस्तृचेयास्यमैडए-  
खानेधिरावस्यं मिषंपुनात्रषट्कचे प्रथमः ॥ २०

तृचेमच्छौषगवन्निषेधः श्रायमयापार्श्वमिन्द्रमहीक-  
 च्चर्षः प्रवस्यमलेयं तृचेत्सैसौ यौधादैर्घेधाद्यौतानमेन्द्रया-  
 रुतएखादिजरानदं वश्रुध्यन्दे वीदृर्षिं ज्ञीयमुत्ते महीम-  
 न्द्रजरापाहिरवंतं चेकचेदं घं विप्रवस्त्रात्समन्तन्नास्त्रेवजय  
 मिमञ्चौशने द्वितीयः ॥ २१

कयातेदेव्यमग्नयायाधसंमच्छलेयमदासएहितं म-  
 द्रोग्नेवाजंसफक्कलेकच्चैतृचेश्रुध्यं विशोत्राप्रवमृचितृचे-  
 म्बीगवञ्चौर्यंसमिद्धं ज्ञीयकावंमुपत्वावारमुच्चेषन्तोकज-  
 रात्सासुं वस्यटंप्रसं तृचेगौङ्गवएश्रुधूहारं त्वङ्कौत्सलाशु-  
 मंदच्यतः कर्चं तृतीयः ॥ २२

प्रधंसत्राप्रसुवाश्वं कर्चावैदलंतृचेप्रदैज्ञीयएखासु-  
 दैर्घएश्रुधूवर्तः खादिष्कृतमसाघ्नतंयस्ते हितमयंपूवा-  
 श्वं विपश्चितेभिर्गवएखासुयौत्तासुचंप्रसुन्वागौतमंतृचे-  
 वृप्रांजिगजारपस्ते पुत्रादैर्घयस्ते सुरूपोढतरंतृएहिशंकु-  
 सुजापवस्यदेवासितमयंपूषितिं चतुर्थः ॥ २३

उच्चार्षभषूक्तेभिस्सोमात्सधः स्वानोवारंप्रान्णाश्रुध्यं-  
 युरोनिषेधः प्रधन्वंवय्यौजिन्नमहीसाककार्यमिमाउंत्वा-  
 श्रैतंयस्रलेयंपवमांसएहितमसोमोमन्त्रेः सफश्रुध्यं भो-  
 नोवांश्यावागवच्चतेक्तावन्तोपिदंष्ट्रोत्तरमभित्वाक्कारं-  
 मानोदोविशीयं पञ्चमः ॥ २४

परित्यएष्यवागवेपविव्रं कावएखादिमौक्षं नीयच्चु  
 विशीयंल्वन्नश्चिवारमुच्चोऽवारसैभ्यु चित्तं तोषिवरुणसा-  
 मयंस्ते काचयच्छाङ्गुसंपुरोवाभ्रयवैतह्वयंसोमसामत्रासा  
 न्यग्मे ल्वएसत्राभिसीदोविशीयएखांसुवारंप्रतूर्तिषुवत्त  
 त्नामृषभंस्तोष्यत्सेधे षष्ठः ॥ २५ ॥

उत्सेधं एवशीणमच्छविशीयमयंपूनिषेधइन्दु पुष्यं  
 च्यावनमेकस्याम्यवस्वतंवःपुरेचनितेपुनातिथंतं वशुद्धा-  
 पदान्तएखादिमच्छगौषूक्ताश्वसूक्ताएकचौयज्ञैश्चं पुतन्तेशु-  
 धीतिचवाराणिपिबोत्सेधनिषेध्रावष्यापर्षमैडन्दु हा-  
 समन्तं पङ्क्तगांपुनावरुंसाम्नि सप्तमः ॥ २६ ॥

तवाहम्मतंजयेरेवतीर्देव्यएषुवासुसत्राभंरन्तवत्यत्पु  
 रोजागतंएसोमसामयदभित्यमित्यप्रत्तमहीद्रम्यस्यमैड  
 वसुरुचःसत्राधयदोविशीयंप्रत्तंमुत्सेधस्तदिदोश्यै तएर-  
 चंसुरुपोत्तरं सुमन्मावारंपुनावैयश्चूर्चोवषडन्दमुत्सो  
 यस्ते सत्रांपवस्वकाशौकीनेडमेकाहाः ॥ २७ ॥

॥ इति प्रथमः प्रपाठकः ॥



पन्यङ्गमावाविदष्टमूर्ध्वपरिखासुरूपीत्तरं सु-  
 हविषजरा मागीयवाग्नीदंवाभवत्ससाकमृच्यभिसोतंवा  
 जनित्वैच्छजराप्रसोजरासीमसामरेहितकूलीयानिप्र-  
 सोचारात् जयमुद्धेखारम्यर्षमच्छाधारमभिपिखानस-  
 मस्यप्रत्नाशुमागीयवे प्रथमः ॥ १

एतास्वमित्रटलसाकलम्बानग्रभिसोदैर्घपहिन्ना-  
 द्विहिङ्गादेव्यमेवमेवतनिहन्मोषुखापाख्यमस्तासन्तनि-  
 यस्तं सुहृपायभासासितान्यभिषुवाचःसखातृचेशौक्तमि-  
 न्द्रासितकौत्सशुद्धाकौञ्जरयिष्ठानि द्वितीयः ॥ २

इन्द्रापावरीयेखासुविशीयमुच्चासुरूपोत्तरादारसं-  
 चारास्तं पृश्नि तथाश्रीणामानोहाविष्मशाम्भदावची-  
 नेडावेष्कृतानायंपूज्जीयहिष्ठीयेधर्ताशैयम्प्रसुपारमयंपू-  
 कौञ्चाबद्धस्तन्देव्यन्तिस्रःसैधुचिते तृतीयः ॥ ३

सुतात्वाष्टीखारेपुनापृश्नाभीशवोत्तरसिष्ठमयमे-  
 दुदेव्यएखानो गौषूक्तं पाणाधारन्दक्षसासत्वापरिप्रिषाज-  
 मूर्मिणाकोशन्तोषिवास्त्रभानवानूपानिशीणाम्ने यथसो-  
 प्राःश्यावांगवनिषेधाःपवस्त्रशासागवे चतुर्थः ॥ ४

एतास्ववाकृपरं सोमाःकौञ्चावर्षसुतात्वाष्टीदे-  
 पुरःशुद्धापदान्तमसाचितमैडन्तोषियौधाद्वैगत्श्रीहन्मनं  
 पुरःपारसाधेपवस्त्रवाचं यंपरिप्रिषूक्तमेकसांप्रत्यसौ वित

मिन्द्राच्युतमसुदानोत्तरमृच्यभिप्रिशीबन्नमस्ते जराह-  
षाशीयएखासुभरमेनामित्रे पञ्चमः ॥ ५

पुवखदत्वाष्टीपंष्टीङ्गयन्तगमभिसोदएष्टीत्तरमृचिचि-  
हवेभोशवेत्तरएस्वःषष्टएह्रिवावयमेसिष्ठम्पु रःकुल्ललयं-  
न्वमिन्द्रदिहिङ्गादेव्यम्प्राणावार्शम्पवखत्रीयंषुहदाने यन्न  
रस्तोदःश्रीणम्पिवापृष्ठमध्वर्योपस्यैङ्कूलोर्येतवहन्मगत  
गौङ्गवयास्यानिखामुवारुहवाशे षष्ठः ॥ ६

पत्रस्वदेक्षिततमैङ्ङामंन्नखैतम्पुःक्रौञ्जायंगैतेमै-  
पोसारथ्यातेसौगमंतएहाउहुवाइशिशुंसिष्ठम्परित्यमूर्द्ध-  
इत्वाश्रीज्ञेयेपुनामदृगकार्खं भीनोनिषिधसाधिश्रीयानि-  
स्तोमंमन्तपुनासोमसामालेयम्पु रःशिशुमुहुवायिसिष्ठः-  
कोटसमभीनःखारंधताशार्गे सप्तमः ॥ ७

ह्यउहुवाअक्रान्वासिष्ठपरित्यमासितोत्तरमिन्द्रा-  
पारमभ्यस्तङ्गवावंसायासमैडमांजागंशनमपरिप्रधन्व-  
वाज्जिदहोनाः ॥ ८

विशोवित्तमृचितवस्तुचेशुध्यंयजिष्ठमैधोजिघ्नपथै-  
ङ्कूलोथसन्तमिनिपुनादुक्यम्पवपानोजरस्यवसेभीनः  
कार्त्तसैमागीप्रसोमदेगतहन्महारयंणानिखदिक्का-

क्षीभासे प्रसुशुभापदान्तं तृषासुरूपोत्तरर्षभे पुन्रीवृष्टे  
प्रथमः ॥ ६

एतास्त्रैवकौल्यतौषस्यशंकुकार्दमाष्कृतमभिसोपु-  
नावाशमौशनएसाकमिमाधसङ्गोमत्यैष्कलमुभयंवाश  
न्वामिमानवात्तरङ्गईहाखवम्राष्कृतमभिश्शग्धिमानवा-  
द्यामात्वाद्वाजंयोरानित्रयशस्त्वमिन्द्राग्निर्मूसापिवाज  
मवङ्गः कारवमामन्त्रैरभिनिधनयथामनाज्यन्वमङ्गमीढे  
द्वितीयः ॥ १०

आत्वेन्द्रसुतोवएशीयंप्रतिष्यैषाजराशुध्यमुत्सता-  
श्विप्रतुंज्योतिषंयत्प्रणयतेत्यत्वाद्दमाभाद्व्यैशानान्या  
शूचात्वएसत्राशुध्यम्पर्वणाभिप्रिसिष्ठंयदेषप्रकोशद्भतिज  
नंसैतावोक्तावानितोषिङ्गखवरन्तन्तेमभरम्पुनाच्छन्दसः  
मेकस्यां तृतीयः ॥ ११

तवाहंपृश्नेऽकस्यामसांमार्जीगीमांनान्नेयंपडङ्गाए  
सन्तनीद्रोगीष्टपुनापडङ्गात्तन्त्वामर्गीवयङ्गसन्तनिप्र-  
हिन्वाच्छिद्रमभीनस्ताष्ट्रेऽकस्यांस्तान्तएहिन्वन्तीडाना-  
मुपोचीनेडमुत्सोवितङ्गुविज्ञीयंपवमाकखम्यसांसाभी  
कपर्ण्डेप्रष्टीद्विष्टिकादेव्यएत्वादिशवंप्रसुवैश्वामिवकार  
कौत्से चतुर्थः ॥ १२

एतेष्वैवैकस्यं वृषाः हरिश्चीयस्ते शान्तदावांश्चसूक्ता-  
 न्ययंपूकौत्समैडमुञ्चांमित्रटतसाकलम्बान्योशनवैरूपे-  
 तिसुःसुतासाध्रंवांश्वितवाहम्पुष्यदुःखयमाहडवानिवि-  
 दावञ्चितियस्यनिधनंपरिग्रियामार्गीयवमीनिधनम्परः  
 शुद्धीयमैडंमुञ्चावैष्णावाद्ये पञ्चमः ॥ १३ ॥

उष्वावैष्णावंद्वितीयमेकस्यं वृषेसुचमसासीमसांमा-  
 ध्यह्वेडंपवस्वत्रासदस्वंपरित्यंवाड्निधनंक्रौञ्चम्पर्युवि-  
 त्मृच्योकीण्णिहमजीमृज्यकगवरमेकस्यां वृषेपुष्पोत्तरं वृ-  
 षाध्रूक्तकलेपुनेभयतस्तोभङ्गीतमंपुरस्ताष्ट्रींस्वारांतमा-  
 कारान्तस्त्रेच्चामार्गीपुनाद्विद्विद्गदेव्यगतपुष्पाण्ययुष्म  
 धुसुद्यञ्जि पुष्पोत्तरे षष्ठः . स्वायांश्चसूक्त मेकस्यां  
 सत्राणि ॥ १४ ॥

प्रत्नमुददंपशिच्चासूफमिन्द्रेविश्वालियन्तवोभरन्त्व-  
 मङ्गककुभंवरिवःसाहीयमृसाभिनिधनंकाखवमेषवृष्णा  
 लियमाष्कृततंवावयमृस्वालयमपंदविपवञ्चीयांसिसु-  
 शिच्चासफेष्कलेकचौमृत्तयलयं वृषेस्वांमुधसंमन्तरयोःक-  
 कुवात्वस्त्रेयंपरिप्रधन्वंप्रौष्कलमेकस्यांस्वादिक्कौत्समैडे  
 प्रथमः ॥ १५ ॥

सखाक्रौञ्चमयम्प्रेतियद्वितीयमेवाभरमिन्द्रवि-  
 श्वभिधधमिन्द्रायाहिधियेगायन्तिलेयमायःपुरमग्नेतक  
 मश्वमेनाप्रत्युद्गमाउत्तमितिचैकैकस्मिन्वारदेव्यश्रुधा-  
 निसम्भावनेषिवल्लेति च तानि यज्ञामहावैश्वामिचे  
 द्वितीयः ॥ १६

एतास्त्रैवदैर्घमचिक्रहितम्पवस्ववषट्कर्चःपुरोक्षीर्य-  
 मुत्तरेगायत्रांविधुवषट्बगमक्किमित्तेवितेश्रायन्तीयपव  
 स्वाम्हीपवस्वसीमोत्सीद्गीतामनेकर्चाःप्रयश्चितानि ॥ १७

अभित्पकश्वरनुत्तरेककुभाविन्दुन्नैधसःश्र्यैतेसनः  
 कौत्समैष्ठमुत्सीधसम्पूरस्तुचेपांरमभ्यस्तंयत्पूरुस्तःश्र्यै  
 तोपुरोधसं कर्चास्तंवनैधसःश्र्यैतमभिप्रवःश्र्यैतनैध-  
 सम्भित्वात्वामिद्विवारेतवोदाभिप्रवःकौंचेभित्वापूर्धक-  
 श्वरं त्वामित्पश्छोहि कश्वरंहृदयाद्यादि महावैष्टम्भे  
 त्रथमः ॥ १८

पिवाश्रुधीतिचतमसमेतास्त्रैवमरायप्रेवाद्रद्रा-  
 वारंपसोप्रसुकश्वतरंपुनापूर्षाकश्वरंहृदमिसोसुतासो-  
 ष्टम्भेतवपुरधृतितमसमेतास्त्रैवमरायमिन्द्रायष्टौवार-  
 मिसमांसितमसात्वाष्टीयदिन्द्रविप्रियंपुराम्भिरुर्माहावै-  
 श्वामिचे द्वितीयः ॥ १९

भार्यान्तिसाम्यासंबाष्ट्रं द्रया क्रीं चार्थमिमसाणायमे-  
 न्द्रया च वितानि देवः कखवरं गृत्ना कखबहृत्पु रोत्रांत्सप-  
 क्षुनिताञ्जीय एषं मुं मं रायन्व द्यां शुद्धा सुष्वा पारङ्गच्चैर्  
 सोमाः पवन्तञ्जीय एषा सुवाराघ्नजनिताश्यावास्वप्रतेशै-  
 खण्डिनङ्गो विच्छेदनस्तन्वाहवद्देव्य ए रसं मार्गीयव  
 तृतीयः ॥ २०

अथापवावार्त्ततुरञ्जोतिष्कारांतंवरुणं सामप्रवत्प-  
 क्राशिशुमुद्दकांतसामराजंप्रकार्थीयं शिशुञ्जोतिष्म  
 क्राञ्जोतिष्वात्सप्रेष्टुमाजापुनायामेवैवगोरुर्षद्भरसं  
 सोमीयमेतमत्यमिति प्रोवाराहमुहुवा यिधर्गाहाउहुवा-  
 असाविसिष्ठे प्रोपामीवधत्ताक्रन्दे साविंसिमानान्निषेधे  
 चतुर्थः ॥ २१

प्रवाजिवोधोयमदृष्ट्याभिनिधनङ्गाखवमज्ञा-  
 इन्द्रवरुणैः प्रातिथान्यच्छाश्रायन्तीयं जुद्राः श्रायन्तीयं  
 जुद्राः ॥ २२

( इति बृहत्-स्तोत्रियाधिकारः )

स्वासुतरमेनाप्रत्युद्गमाउवामितिचंत्वामिद्बृहद्भि  
 सोत्तरिचयद्गवैरूपम्पवित्रमरिष्टपवस्वदाथर्वणपिबाम  
 हावैराजमर्षायएवमिन्द्रोहृद्गिरंरस्मिन्वादेर्वाजीयप-  
 वस्ववर्षभाष्टेडाविद्रायेन्दोरेवत्यःसुरूपचष्टभउभेयच्छे  
 मद्रमानुभद्रयस्तेज्जेरक्कःपवस्वदेशिरामर्कसोषिस्थान--  
 सकृतिभर्गयशासि सुष्यसाविसेतमसोक्कः कयातरं  
 दशरात्रः ॥ २३

पुनातरमभिसोष्ठीरूपन्तोष्यावणमर्षापत्यशाकरे-  
 यत्रायञ्जाचतरस्मत्स्यहृद्प्रत्यक्षैतरंयञ्जाप्रसुखरश्चतुर्थं  
 मत्स्ययंपूषाद्वितीयमेताश्च वदतीयंप्रत्यक्षैसुतासःप्रथम-  
 स्यप्रतांभाजविभ्राट्त्वववग्नेन्द्रमिहेश्रायन्तःकौर्क्षमि  
 न्द्रकपुरःश्रायविकर्षपरिस्वानभाभाजमुच्चान्नेर्वतंमू-  
 ष्ठांपुरोभासेतवाहन्तरम्पुरोजिहृद्परीतस्तरएरेवतीरे-  
 वत्यलमग्ने बृहद्भिसोपरीतीनाक्कंजम्भाओत्तरेतदिदा-  
 विकराजनदेव्यपरिस्वानःशिरामर्कान्ने ततषड्चेलान्द-  
 एसंबत्सरः ॥ २४

पुरोवर्णएषादिशिरामर्कांषायसेवर्षाहरेभित्वा-  
 त्वांसितरहृदिपदात्तरेपर्युणुनदएसएस्तोभःपुनासप्तह-  
 मेकस्यांधत्तादीर्घतमसेःकोयंपृभर्गःस्वासुवरसामाग्नेम-

बृहद्यंस्ते स्वाशिरामर्कः किमिबृहत्पवतेयस्तेबंलभिदेक-  
 श्वैत्वमिन्द्रयशःपुरोजिभर्गः पुनास्यान्एखांसुसप्तहसि-  
 सामनीपुरद्वन्दुरेत्तैर्च एकाहाः ॥ २५

आज्यदोहानिप्रतिलोमानिप्रसुन्वावुसोतिस्त्रोवां  
 चद्रुतिश्रायंकृतिःस्वासुरश्ममश्वन्नतमभिवाजीव्याहृति-  
 भामानिपञ्चभूर्भुवःस्वःसत्यं पुरुषद्रुतिस्वर्क्षिधनिचायंपृतं  
 मसःकर्चःश्रीणास्थानन्तिस्त्रोग्ने रर्कःपरिप्रधन्वदीर्घत-  
 मसोर्कौभित्वावृषभतरंयज्जाबृहद्भिप्रिवृषापवित्वंधर्त्ता  
 इतिस्त्रोभाद्विरिडचतुरिडषडिदाष्टैडानिपुनावणंपरि-  
 प्रियास्वाशिरामर्कःसुतांबृहत्पुरोवार्कजम्भादामासो-  
 मान्तेरिद्धमभिसोवणमग्निवाजाजीयएखादग्नेरर्कीद्वियं  
 दीर्घतमसोर्कःपरिस्वापयोहीनाः ॥ २६

माभेमतरमग्निज्जस्रहेनःप्रतिवांजीयान्यभिप्रिया-  
 दीर्घतमसोर्कउरंसोभर्गःपरिधीनार्थर्वणएश्रीणन्तस्तम-  
 सःपरित्यएसंक्रत्येकंश्वःपुनायशःपुरेज्जम्भोत्तरमुत्सःसए-  
 सर्पउत्तमोभिप्रवाद्यपुरोद्वितीयुसचाशिमि ॥ २७

तबोवचमभिप्रबंधंवृषाचैकवृषंचपुनाश्विभोवृत्त-  
 स्मुरउत्तमेतास्त्रेवापांवृतेपुनामवांवृत्एखादुत्तरमेना-



पृथुद्रमां उक्तामग्ने विवस्वात्तिकाङ्किके प्रहृष्टम् विवस्वत्तर्प-  
 त्वात्सखा तौरश्वसे प्रतिलोमे याम मायङ्गौः प्राय-  
 श्चिन्तानि ॥ २८

यज्ञेन्दुरेकर्वः सखायो धावृहद्भिः सखात्रिः परि-  
 तन्दुर्यो धाहौ धौ पादौ द्विरभ्यस्येत्पुनातरमुत्सः प्रत्नं द्विर-  
 भ्यं तं मभित्वा तरवृहत्त्वामिहृहत्तरन्त्वामित्वा ह्येहि जम्भ-  
 स्वासुं ह्रस्वार्थदिन्द्रयेति च यद्यायदिन्द्रयान्तरिक्षे वा सुष-  
 भः शुधी हवमिति च त्रिकप्रोषु वक्षातीषङ्गो यदिन्द्रे द्राया -  
 ह्निपुनापुषाजम्भादां मभिसो ह्रस्वासुतासो ह्रस्वान्तरिक्षे -  
 तवपुरइति वैराज ऋषभ ए सोम उष्वापवस्वत्सास्तयोरि-  
 वातीषङ्गः प्रसोप्रसुतरं पुनापुषावृहद्भिः सुतासो रूपे तं व-  
 पुरइति महावैराजम्परिस्वारे वयोभिसो सुतातरन्तववृ-  
 हत्सोम उष्वापवस्वत्तरं मृज्यसो मूहत्प्रवस्वश्रेयः सुता--  
 सोरिष्टमग्ने आया ह्यन्तरिक्षे होतारं वत्सा अक्रान्तमसः  
 सोम उष्वापवस्वसिंसाः क्षुद्रा इति क्षुद्रा इति ॥ २९ ॥

( इति लघु-स्तोत्रियाधिकारः )

॥ इति द्वितीयः प्रपाठकः ॥

तां च व्यमायि यद्दृष्टमवृष्टं प्रकृत्येद्दृष्टेर्दृष्टितान्यायि प्रा-  
प्तमेव भवति हि शब्द एवाहिसौभरामहीयवयोरेहीमि-  
हवहैवोदासे त्वं हिकौत्मएकारश्च प्रकृतिप्राप्त ए भव-  
तीह वं ह वै वोदासे पुनश्चावृष्टमप्यायि भवतोऽशानं श्रुतरे-  
स्तावे पवंते क्रौञ्चे वसो निरेकेभिनिधने यद्दृष्टं प्रकृति-  
भवति तस्य ग्रहणं निधने हीषीस्य सर्वत्र न जिनं वृष्ठा-  
तनिनिशिशुं तिस्रोहिते च विप्रलं वीजयेभिर्न त्वे सोमजये-  
निमायस्तेहिते मम द्विपरितायां मानं जययोर्विषन्दिद्रो-  
मसन्तनिनि ॥ १

थौधादेवस्तावेऽनेषीद इन्द्रः ऋषिः येना देव्यः  
खीनां धसेभि षुधे रिर्न संहितेयोनिः द्राणे सर्वत्र  
पर्षि- सफेपीतास्तावे क्रमीत नां ए. प्कलेताइसइ  
विदे इन्द्रः अपुजित्सर्वत्र नान्तो ह शरीरं शुध्यजरावो-  
धीयेषु वाश्वे जि ती मयि घजि श्रोत्रं द्वाही सर्वत्र नं का-  
र्त्तयशोपद्रवयास्य षेधसोमसामसाधेषु श्वाची धीगवे  
घजि नस्तावे ऋभि कावेभिर तांतीं अधिदृतीयायां  
ज्ञीयेपप्रीं सर्वत्र सिषं द्राणे जेप्रुं नार्सेमई दभिः  
व्याभिः तिशू ह्याणि काण्यु तवेत यन्ति प्रथमैः ॥ २

कचेसुंते रात्रिदांसेषि रात्रिपारे कूर्मिम् चार्ष-  
भेस्राकीं गारेभयिन् ननि गोभिः त्वस्मिन् सौमेधे-

तयेद्भुवेनिधनयोः कौत्सेमेषु मनि यौधादेव संफेषि  
ऐडभास्येषसि दसि नोद्गीथादौ देवो द्वितीयः ॥ ३ ॥

सिष्ठे षिपृ थिवीं षिम एषि श्रैवेत्राणि छन्दसेग-  
हिनान्त्येति वे ष्रतेवेपूर्वं स्याभिः नध शंकुनिमहि  
क्रौञ्चेभि यामेपूर्वीं दृष्टेपतिंद्वितीयं अभि एम्भे  
ददे वोविस्सर्वत्रनामरूपमित्तविलम्बेषु मद्गभनो  
संक्रोशेचई वङ्गः तिव्र मंजी धेन कस्तिमदे एम्भे स्वब्दी  
रवेसति शैहेतिकं यन्तीस्तृतीयः ॥ ४ ॥

शौक्तेश्रिये त्वाष्ट्रीसंखे प्रमतान्वे द्युम्नी भवो भिः  
हारिवर्षे सहिः दिथ पत्नीः रश्चेपूर्धि असि थ्युषीं  
दृष्टेवे धनि शवेवेपूर्वं परि तेदि साहीयेविप्रभुवे  
शोकेमुरीं ओजि कस्ते श्विनः यदि पृश्निनिस्यद्विस्ता-  
वेओर्सायवेयाती माह्नी हत्क वच्ची नविस्तावे षादी-  
येत्वाती अग्ने अभि वात्सप्रवते द्वीः एति राणि  
सैन्धुचितेनम् चतुर्थः ॥ ५ ॥

प्रियद्द्रा ज्येष्ठं हरी वृवी त्सुरिन्द वितेहेश  
ध्रश्चेदभिः येव पैगी वास्मेमन्दौ यानिध्रश्चेतान्यग्ने-  
स्त्रिणिधनेमन्दौच शेशयूषि पतीपूर्वं नापि वने  
श्रयतिः क्रोशेप्रिया, वीणि, तेसर्वत्रविष्टन्तमङ्कारप्रत्ययं  
नमर्त् ज्यन्ते हितप्रवतेदाशस्यत्वे पार्थेजभिसर्वत्र दाश-

स्यत्वेरन्वितं साखी सञ्जयेद्यवि मित्वेकंते चिते स्ववे  
असिपूर्वं महामित्वेगहि हरीं क्रीञ्चै चैविसर्वत्र  
पञ्चमः ॥ ६

रयिपरंध्रे न्वसिरयिर्गुणसाक्षि भिर्वन्तीये विप्रले  
असिनिधनेदन्वतेप्रथमे परि त्वेसासर्वत्र तुवे सःपी-  
द्वितीये कविः तुवे श्वे सः सःपी असितृतीये दीर्घद्वन्द्वः  
आये नमि क्कार्णश्रवसद्भव वितरेसर्वत्र क्रीञ्चिभीयाः  
श्रौष्टे सूनि जन्ति मूनिगृहेष्टदी षष्ठः ॥ ६

तनिपर्णकुंलीयेषुन्वे वा शूतरेषसिपूर्वं यास्ये  
षसिदसि प्रियं षसि अभ्यं तवणे सुते रेके स्वर्दी  
कण्ठे दर्षि खानसेसहिभभ्यासे माने मौर्चेस्थाभिः  
शांकरेद्वोद्गीये वर्मा मूषेनी षीं समीः अभि यवौ  
कार्तयशेतीवे यित्वे हविषेयाहि कारसेवाहि वी-  
ह्वे स्ति वी र्शी रुपेपवि तवे द्वन्द्वो पीयूसर्वत्र  
सप्तमः ॥ ७

हीन्द्रातवेयवे पविटते तवेपर्णे पांश्वे भि हन्मग-  
तयोर्मनी हृदुक्थेभिष्टे उद्वहार्गवेभ्य वैपेन्द्रभिः नवे  
र्वशेनस्तावेष्टमः ॥ ८

ऐषिरेदीद्वितीयं देपूर्वं श्यतिः स्वरी धर्मणि-  
तादे धर्त्तासि विशावीन्दुं मही नीयां हृतिः शनेधि

तीं ये मारुतेकविः यसीः भवेस्तोत्रे संक्षरं नावी  
नपसः ॥ १०

भीशवेस्तुते सामराजेषि षिष्ठां थासि श्रायन्ती-  
येनदीपरिकृष्टं प्रतिप्रथमायां मन्तेषोविनाद्गीथे  
स्यासि काशतेव्राजित् निहवेरेणसर्वत्र दशमः ॥ ११

सितेयोदेसर्वत्र मदे नरे सर्वत्र विधर्मषिजन्ति  
वैक्लकुभेविवा पामी वंशीयेमी रे श्रामो जिंगेतेजा  
आभीकेददे ज्ञीर्येषसिपूर्व बन्ते ताम धीत रीहित-  
पूर्वसाई खचे काश्वेनाई गाजी जिये अभि धीगवे  
प्रंरि नाई महे अभिसौह्यर्थाभ्यासे देव्यप्रेद्धो  
दशरातः ॥ १२

पार्थे वक्ति ति तिसा जूति मते बांधीयेस्थाभिः  
कावेभिः धे सांहीयेनध्ने श्वे महि बर्ते भिन्न दलेत्-  
मर्वर्तत्रिवृत्तमकारप्रत्ययमध्यमः ॥ १३

हिन्वे षते हविर्दसे यानिसिष्टे तानिपार्थे  
वर्ते हस्ते स्तावेषो शङ्कुतुनिमहि दुषट्टेपति रूपेतेजा  
अग्नेद्विधिधनेभिर्ये येषौहेतेष्टस्म दासेसमी धीगवे  
वेपूर्वं द्वितीयः ॥ १४

सामराजिसद्वत वन्ति पवि धिरो भीरे भीशवे-  
स्तुते उहुवायिसिषुठेहेम भिःसं पर्ये तिर मन्ति क्षैतः

पूर्व अर्णायवेकविः शुचिः येचोत्तरे लौघेनाति शुद्धिये-  
ङ्गेन शीर्वान् गहिरिपिं मद्धि रयिं ध्राश्वेभि ऋष्टपे  
सम्पायांवाणीः वंरौ नानि व्यतिः चीने तृतीयः ॥ १५ ॥

दासेचीणि, रयिष्टोर्मणिपूर्व द्वाभ्यालौशेररजे  
साध्यश्रेष्ठ मन्तेवारे सिष्टेनुवीः नक्षे धन्वे स्त्रिया भि-  
संक्ते सुमे गति वच्चेदिये मरुताम्भेनैमुनि यदि  
नुषी वत्त देव गृधिः सर्वतनांजावितज्ञीययौर्जनकावि-  
प्रसेतरयोश्च उत्सवत्त देवश्चतुर्थः ॥ १६ ॥

हाउनितेवते तीनां देवीः राणि कवी लौघेति-  
मनीयन्ति रातिं वते वांस्ते रसेसिष्टे नेए सेह श्रौष्टे च  
यानि मरुता मिन्द्र वत्त देवस्तावे पार्थे युवी ध्वेज  
रथे यूनि षेयं ज्ञीयेत्तवे प्रश्चमः ॥ १७ ॥

ऐडकावेबृहन्नधि सितेरथि ऐडयांमेमती सखी  
वतेस्ववदी कणे संहितेहरिः पार्थेणे न ति देवीः  
कवी सफेदिदी क्तावदंभे माहि . एम्भे मनि सर्वतन-  
मीठे ष्कलेनिषी श्रिये ववी षष्ठः ॥ १८ ॥

धसेते भी ष्कलेवते पार्थे याहिं ग्राहि रुणि सृनि  
याविट् संहितेसःपी वन्तीयदन्द्रां महै स्यपे काने-  
न्द्रात् निक्त मीठेष्वातिः सप्तमः ॥ १९ ॥

ष्कलेधि ति पति त्रित हटुक्येसुते संवत्सरः ॥ २० ॥

श्रूतेसि ईशा यौधादसौसर्वतपूषायाञ्चन्स्तोभे  
प्रत्ववेयथे स्वारेपस्त्रीखीनां सफइन्द्रा पूषो बोधीयेसः-  
पी प्रथमः ॥ २१

पाश्चे क्वभिःपूर्वे सौये लेयेपीत्वास्तावे नए यौधा-  
कुवे महे तीया द्यौतानेमई यवी याभिः ह्यानि दिवे-  
पूर्व युगेमारुतएदुं धाएसि महि शुधि आश्वी जज्ञे  
बोधीयेयोनिं ज्ञीयेसिचं प्रवे वज्जि अदर्शिंज्ञीयेतानि  
त्यानि मन्तहि यौधामहे शनेदर्शि तीरुश ती सुभिः  
एवणे द्वितीयः ॥ २२

देव्यग्ने धमेघ्नाती बर्हिःरन्ति केशं अग्निं सए-  
हिन्नेग्निः तर्हिः अग्निः वाश्वेदूरी ज्ञीयेप्रियं दुरी  
परेज्ञीयेकविं जसी समी यत्त कावेकविं जसी दन्ती-  
येभिः हारायणेनिह कौत्स्मि साणि तृतीयः ॥ २३

इलेत्के ज्ञीयेप्रदे त्यानि तानि वर्ते देव स्तावे  
घतेदुङ्गेसर्वत संहितेस्थाभिः वाश्वे प्रियाः षष्ठीः  
सुचेद्रे ह द्रे स्वा जिगे हिन्वे सितेरयिञ्चतुर्थः ॥ २४

घभेददे वन्तीयेकविः यानिवारेतान्निवरीषुक्त्वं च  
यानिसिष्ठे तानिपार्थे लेयेवे तुभ्येत् अर्तं षष्ठी सए-  
हिते ज्योतिः सफेदेवा कावेनक्री ज्योतिः सुतरइन्द्र-  
नोद्गीथे षष्ठमः ॥ २५

• काविसद्वत् मौक्षेयानि विशीयेधाजे वन्तीयेत्व-  
भिरन्त्ये रुणसाम्निमुते दासेस्येत् वन्तीयेमाभिः यत्  
यादी षष्ठः ॥ २६ ॥

• षेधेरयि उत्तरेनित्त्रिभि एङ्ग्वारेदुभिः तन्तेवारेषि  
पत्नीः श्रुधीह्वारेनवी प्युषीं षेधेभि रुणसाम्निनृभिः  
सप्तमः ॥ २७ ॥

• यौधापर्युद्गन्थे देव्यैरेव चित्यस्ते वारेरन्ती  
गहि अभि साहीयेयस्ते काशी तन्ताए एकांहाः ॥ २८ ॥

॥ इति तृतीयः प्रपाठकः ॥

कक्षेमादौ नारे ऊतिः स्वर्वन्निधनेपरिपूष्ण महे  
पेष्मात् क्रत्वे प्रवेच वोधीर्यशेय धियेमांगीयवेकिने  
जयेच्चामराद्धे देव वैखानसैप्रिया प्रथमः ॥ १ ॥

तनिन्यभि पार्श्वगहि वाचं साम्निदीद्वितीयं  
देव वङ्गिस्तावे स्वरी शोक्तेश्रिये सितेसने मदे  
द्वितीयः ॥ २ ॥

• क्षीयेपरि नन्ति परेक्षीयेषिः सद्भत् विशीये-  
प्रियं सन्ति संचारेभूमि खानि धृतिःपी धर्ताक्षीये  
त्वियो मांदी देव्येदे प्रिया तृतीयः ॥ ३ ॥

मीशवेसौद् नृभिः यान्निपार्थे तानिस्मिष्ठे देव्य-



एदु सांहीयेसन्दे वृहद्गारेमाही क्रोशेधीभिः ध्रुवसुते  
धीसवषेधयोर्हीयाश्चतुर्थः ॥ ४

त्रेयेदेवे ज्ञीयेभितृतीयायां बोधीयेदेव संवे  
ज्ञीयेद्वीया पञ्चमः ॥ ५

स्वाष्ट्रीयवे भीशवे मनी सिष्ठेमथिः गहि वाशे  
प्रिया ज्ञीयेचीतीसर्वतनवास्वास्वीगवधोः हदाग्नेये-  
दूरे गतेतेदि गौगवेदिनेपूर्व परि यास्येपर्युद्गीथे  
दिवा यानिपार्थे तानिराहे वांशिशीप्रा षष्ठः ॥ ६

सारथिनिथामीत् प्रमि इव वति धियो धेन  
त्तपि तेतिः सौगर्तपनी यसी मिद्वी यानिपार्थे तानि  
हाउहुवाक्सिष्ठे ज्ञीयेतिवा द्विस परिआष्कारणिधने  
नृभिः षेथत्रयार्जे मंतेदिच्यान् दस्येसोमसान्निवसि  
दसि सिष्ठे पूर्वेषोक्तं शशो हरिः सप्तमः ॥ ७

अकान्वासिष्ठेषमे सेनः देवान् गीत देवान् द्रेप  
ज्योतिः सितेमदे यामएषि एषि श्नेमती सुरे वीषः  
जंती षापीदहीनाः ॥ ८

गतहन्मनयोरतुके प्रथमः ॥ ९ ०

शङ्कुनिवर्मी यानिपार्थे तान्यौश नेक्लेनेमि वाशे-  
षणे मानवेवेध आष्कारणिधनेवेद नेद्रे नितेस्यदी  
इन्द्रस्ययशसिताणि एकः जमवत्तेतुते अभ्यन्तेमं द्रेः

वाहिं चित् येमुं इत् अति । धन्वे हारौ गुम्भी  
सम्भे । मनाज्यगहि । कण्वे देया । मीठे ब्रवी  
द्वितीयः ॥ १०

बोधीये च्छन्नो दर्शि । परे बोधीये च्छति । शुभ्यं  
बेह । वैश्वज्योतिषि षीद येना वेद । शने यदी  
यन्ती । परे श । नश्वे नि चीद्या देव सुमे । भाशने  
देव । रथे तेह रमे । शुमार्गवे स्नानि वैधृतसिष्ठ  
याणि धियः । एताः कावे खेद । परे कावे वीत् दे ।  
भरे पत्नीः । वे पूर्व तृतीयः ॥ ११

अन्नेस्त्रिणिधने मन्दी । संक्षारे दे वे द्वे वे ।  
ज्ञीये मी वी तीसा ज्योतीं षात्रीत् । क्षारे कौस्त्रे स्त्रे  
चतुर्थः ॥ १२

श्रोनिधने द्विन्वे । कौस्त्रे प्रियाः रयिं । ऐठते  
स्नानि । शने यन्तीः । रूपे धेन ब्रह्मीः । संभ्रे  
दिवे-पूर्व । वास्त्रे तीरां वे-पूर्व । मार्गीयवे मही  
पञ्चमः ॥ १३

सुंचे मन्दी । कौस्त्रे मदे । शाकले त्र्येवर । आष्का-  
रणिधने भि-पूर्व । मार्गीयवे तेजा । हंगते सीद  
संवाणि ॥ १४

सफे शिक्षा हिश विदाः । वैकाकुभे त्रयोभि-  
गीथे । काण्वे रिन्न उपास्मै-ज्ञीये ते । दवि-ज्ञीये  
तीया हेट क्रमीत् । पव-ज्ञीये वारे नधे । सफे  
मुन्वे सुधि । प्कले शिक्षा हिश रयिं । लेये नस्ते  
हिशू । नौधसं पूर्वोक्तं । लेये स्यते । प्कल इन्द्रा  
प्रथमः ॥ १५

भरे ब्रह्म । नार्मेधे पतिं चतुर्थे खरे अभिं । लेये  
खवी । परे लेये यूषे प्लिरे । कमश्वे भिर्णी न्मावी ।  
वारे शिं सि तवेत् । देव्ये दर्शि । परे देव्ये चोदे ।  
श्रुध्ये श्रिवभ्यां द्वितीयः ॥ १६

सर्द्धिते री ये याभिः क्वत्तुमी । ज्ञीये तवे ।  
श्रायन्तीये दे वे प्रायश्चित्तानि ॥ १७

खवतरइन्द्र । धसे तवे । खे तधसे रिट खेणे नीके  
रेः । कौशे भि । परे कौशे जरि हस्ते तानी गिरेः ।  
खवतरे भिः आखेत् । एम्भे तासी प्रथमः ॥ १८

सहो-दैर्घे स्वाद्रिः । परे सहो-दैर्घे नीषा सचे  
वक्त्रि उत्तरे मराये नीषी मारे । वारे भिः । खवतरे थे ।  
एम्भे खेर्शां सखे । तव-मराये परि । वारे र्बसि ।  
त्वाष्ट्री गहि हरी । सिष्ठपिये स्ति तेदि । महामिखे  
कविः दधी स्तोमैः यसीर्द्धितीयः ॥ १९

• कौश्ले घोषे । विते त्पुरि । अस्त-वित इन्द्र ।  
 सुते श्रुतीः । गाय-विते चेत । खतरे सिचं देवः ।  
 ज्ञीये सूरी । मरांष्ट्रे जि दीधी प्रेहो । वारे पूर्वे तीयाः ।  
 वाश्वे तान्नेः । शैखंगिडन आश्वि-यदि । श्ये न ईया ।  
 मार्गीयवे सन्ते तृतीयः ॥ २०

• वार्त्ततुरे स्नेह । श्रौष्टे च यानि । प्रवङ्गार्गवे त्तिरे  
 तिसा जूतिं मते । उहङ्गार्गवे-येना येति ऋषिकृत  
 सामराजे यमे विध मन्त्रि देव वृणी सरी ज्योतिः ।  
 कुत्सस्यान्विरथीये वक्ति एति-रेभन् जूति मते ।  
 अक्राञ्जोतिष-यमे देव वृणी । अप्रे सेनः देवान्-पूर्वः ।  
 यामे क्रीत् अभि । गीराङ्गिरसे वि च । अथांसोमी-  
 येन्द्रे ण हाउहुवायि । सिहे राजे । इन्द्रस्यापामीवे  
 नानि चतुर्थः ॥ २१

अभ्यन्ते शिगा रीया रेख धो भिः प्र दै थि धी ।  
 आचाभ्यन्तइन्द्रा हरी-रसि । नैपातियेन्द्रे स्वा ।  
 श्रायन्तीये वारी चन्द्राः ॥ २२

• हस्ये द्वितीये संभितरे णोतिः । तृतीये शंदि  
 सीमी । अरिष्टे षविं काणि तिभु । वैराजे वाणि  
 बार्हङ्गिरे द्विषी हरी । रश्मइन्द्रः तमित् रसे । वाजीये  
 वरीः । अष्टेडे र्मन्धि । वतीष्विन्द्राः । रैतवर्भर्षइन्द्रः

श्येने दीर्घं शक्तिं । पूर्वं देवी । भद्रे रुद्धिः । संक-  
तिनि परि । भर्गे हविः । तमसोर्के राजे कविः । तरे  
भीषु वासि दशरावः ॥ १३ .

यज्जा-तरे तेय १. मत्स्य-बृहति प्राति । प्रत्य-तर एनं ।  
यज्जा-खरे तत्ते । प्रसु-खरे सावी । मूर्धा-भासे गिं  
तीषुरेव । बृहति हिवे । परिजम्भे हविः । राजने  
स्वादी योधीः । स्वाशिरामर्के कविः विश्वे । ब्रूलान्दं  
प्रथमाया मीयां पिभा स्थांती । द्वितीयाया मन्ने  
स्थांती । तृतीयाया महि अग्निं रेपु देवा संव-  
त्सरः ॥ १४

यस्ते-हरे वरे वे-पूर्वं नभे । सएस्तीभे धारे अभि ।  
परे सएस्तीभे तीनां । तमसोर्के नृभिः हरिः त्वभिः ।  
वदसायाङ्गभिर्द्वितीयं हरिः कृभिः प्राचीं । बृहति-  
साखी । स्वाशिरामर्के द्विवे-पूर्व । बृहत्यस्मि । वल-  
भिर्द्वि राएस्य काहाः ॥ १५ .

यानि पार्थे तानि द्वितीये दोहे । यानि संकोशे  
तानि तृतीये । रश्मेयाङ्ग वल्लीः । अश्वत्थे शरतिः ।  
अयंप-तमसोर्के पतिः । सर्वत्रिधने यानि तानि ।  
परिप्र-तमसोर्के तेसा च । तरे क्षीप्रां । बृहति  
यिषी । स्वाशिरामर्के कविः शुचिः मदी । बृहति

दिवे-पूर्व । वाजीये ग्निः । पयसि विश्वे तिमा-  
हीनाः ॥ २६

वाजीये प्रथमे ग्निः अग्निः । द्वितीये महे । तृतीये  
प्रति वाषीः तना तनी । तमसोक्तेः भि प्रि नीथ रीयं  
भिः ये अभि अधि । अध्यास्यायान्तमसोक्तेः परि ।  
संक्रति विनि परि सत्राणि ॥ २७

द्वितीये सन्धि-बृहति मही तवे । अग्ने बृहति  
शुषे श्विभ्यां । त्रिक-बृहति सर्दे । यामि क्रीमीत् यधी  
प्रायश्चित्तानि ॥ २८

रिचे वद्धं वैराजर्षभे द्विः अस्त्रि वांणि हृष्टिः ।  
उत्तरे षभे बर्कि नी षी वामीत् । वत्सुभ्यां सार्दे  
प्रोषु-वत्सायाः सङ्गे । अतीर्षङ्गी हस्तायाः सखे ।  
वत्साया मवी येव पेगा । वाज-वत्सायां वे धां वीञ्च ।  
एतान्येवातीर्षङ्गयोर्वी वर्ज । सुताः तरे वे । तव-बृहति  
दिवे-पूर्व । अरिष्टे सखे वे-पूर्व । वत्सायां मग्निं  
यन्नि परि शीनां सद्दि । तमसोक्ते मरिस । इन्द्र-  
वज्रि-आद्याया मिन्द्रो द्वितीयायां यूर्तिः स्तृतीयायाञ्छा-  
दसी । षसिमाकृतीषङ्गे न व्याख्यातः प्रकृतिभावः  
प्रकृतिभावः ॥ २९

॥ इति चतुर्थः प्रपाठकः ॥

सौभराभोवर्त्तजयानां वृद्धं तुरीय मपोयू वाजे, तौ७  
 प्यतिमंधुदस्रं मनाद्यं जये श्यावाश्वे चायावाह्लासो-  
 मधाम सफपौष्कलंयोर्वे हीष्या.मूने, द्विपदाया७ सर्वा  
 तुरीयं स्थेमहि द्वितीय मन्वयिक्या मच मीङ्क हृद्भिर्ये-  
 मिमदि मधोपारिष्टे रविभृथिं त्रिष्टुभिं चोतायां७ शने  
 च द्वितीयचतुर्थस्य मयन्तो युधा ते देखे चातये वक्तः  
 सर्वदान्ता संपुरन्धिप्रशस्तिमाधादि स्मृष्टुणास्मान्म-  
 धोवृष्णावल्हेष्वरवेष्७ षष्ठ मनो वाभरादियौधाजये  
 सर्वं मरारणस्तावापान्तान्देव्ये दाखीसो ह्यथे शी जनित्रे  
 ऋगे लिये द्विपदासुं श्रौये दान्ये सनाद्वितीयं वैरूपे  
 प्राङ्गाङ्ग७ ऋञ्चासंयोगे वक्त्याभिः सुशत्रवेष्टुणा सोम-  
 वाराणिहातयोश्च नसहंधीन्मुद्रं नद्रस्वदी चक्रं त्यानि  
 ध्येतिणिमृदं निहोताणः सोपमद्याञ्चैः परिपरिक्रतुरि-  
 मान्गोदन्वते चागिरिप्रभूतितिस्रैशोके चाद्यन्तार्यो-  
 रैटतसारथिनोरविगीतां विंश्रामित्रं च सर्वासु नवे च  
 विकल्पे नैकश्च यंवे मद्यामरसन्दोषं प्रथे चाष्योरन-  
 द्रुञ्च वैधृते चिः सर्वं जनित्रसंक्षररंथिराजेषु शीतरने  
 त्वचमध्ये चतुरक्षरं एकर्चे चोत्तरयोर्धं ग्रामि ॥ १

पृश्निन्यपादादिर्भादनीविभिरस्य कृताभङ्गपाद्यां-  
 दनुरसोपस्याभौश्वेभिगीताद्विनेचर्षय्यतस्याश्चावि-

र्येदन्तेभ्यो नोधसत्रायिन्द्रान्तादतनपुण्या विष्णुन्दसि  
 च् पृवास्त्रियप्रस्तावसद्वक्तुरीयं शिप्रमत्तिसुतक्षयोः  
 स्यादेच्च परं नोक्षरयोर्वालि प्कले योनौ हव्ये चापशि  
 परिप्रधन्व-सखा-प्राणा-तृचयोः शने च स्वास्त्रिनी-  
 राद्यायाञ्च विकल्पे हिष्ठीये चामप्रतज्जालुतो वलोपस्य  
 द्विततनीचः फी इतिकृष्णाददृष्टं श्ये ने जिग्यु यं मवोब्रू  
 प्रत्यवरोहे च शक्तो च नयं भजयेहारादंवितावभा-  
 रिया च तावनेहारादिरनेकञ्च द्वादौ भांसं च नौरश्चे  
 नित्ते च त्वेत्त च त्वाष्ट्रीसामिं हव्ये चायोन्नौ  
 मत्सरि शब्दाः स्वासूत्रयोर्देव्ये कोदे हारे ये च  
 धौ च हारे यास्ये देवी जयसाप्तमिकर्षिणाधनाया-  
 स्येषु च ये सांवादिर्यन्नाख्ययोर्हितान्तःश्वतः-पाठौहे  
 ष्टु प्रिये सोमा वार्शे सोमोः दन्ते-तुरे भाखादिर-  
 योनौ पुत्रे हे डोपाय आद्य माद्यायां वृशीये च्चाभ्य  
 आन्वीगवे च द्वितीयं मसक्तु हारे च पक्षे योनौ पृष्ठे  
 चर्मजमसुरूपाणां च मीढे व्यमशीगीथायङ्गावे ते  
 ज्ञीये स्वासु पुना-देवं आद्याया मभ्यच पुमं च्चाचयो-  
 भाद्रिष्ठाः शंमेत्वे वैश्वामित्रे कृते ये तुरीयं सर्वत्र  
 षष्ठं ध्वञ्चयोः पाजे ये भे दीर्घं परे सर्वत्राककुंभि हव्ये  
 स्त्रिवाया मपादौ घृतनिधनसांवत्स्योराचरयाम् ॥ २ ॥



वमृगाद्यन्तमैसे यच्च परात्त्वच नाहं पादत्तुरीय  
 वात्स्ये त्रिष्टुभि पाष्ठे च दीर्घे खलए षा णी दान्ते-  
 लौट्रंति चतुर्थे तौ च धीगवे स्तावर्षं प्रत्यङ्गामति  
 सर्वत्र चमं योनौ पर्युषु विशस्त्वाए रिखं षाञ्च द्विप-  
 दाखाय मायिन्द्रा सीमाभिधान् तृतीये वाहस्वतत्वा  
 राताशतादम्बायां त्वां धा मध्यं माग्नी च मा गायता  
 पहितातुविशुद्धी यौदल्योर्द्वारं वाचःसग्नि सिं ते थे  
 द्वितीय मायास्य आम्भान्तोसंयोगे है गतोऽभिगीताद्  
 वभाञ्च प्रसौमप्राञ्चयोस्तर्वमध्यमायाञ्च तृतीये बृहत्यौहो  
 वाथाः परए षष्ठं मच्चरं कृष्यते त्वमग्न आवायाद्यं  
 मध्यमायां तृतीयं मुत्तमायां चतुर्थं मनुष्टुप् प्रथ-  
 मायाञ्च श्येनात्तरयोर्द्वितीयं सप्तमद्विमित्पूर्वयोस्तव  
 मध्यमायाञ्च गौशृङ्गे द्वादशविष्टेष्टुभिष्टुभि त्रिीय-  
 तृतीयेन्तामायिन्द्रादिः सीमः प्राष्टमभिवर्षी च पञ्ज-  
 रम्भ पूर्वस्त्रौग्मतेषु न योनौ उर्वचंतद्विषा योनौ हिन्व  
 विशीये तायिष्यामादियोनौ च खासु शने द्वितीय  
 मन्त्रायाश्चाण्यस्य गौयोपान्तं त्रीषु बोधा येन  
 यानि नो प्रधान्वाचाञ्चोपायद्वितीयङ्गाखवे योनौ सिष्टे  
 च दारद्वितीयं नदेपुरोजित्यां हविषे च सवाज्य-  
 चायाए श्रुध्यं च नौ रम्भं चात्तमाया मायं ध्यमायां

तृतीयं मायायां बोधीये प्रवाज्याद्योगौथे तृतीयं द्विः  
 कृष्टचतुर्थं मन्तायां वाशे ध्यमपादयोरन्त्यानि त्रीणि  
 चत्वारि पिवन्त मन्तुः हि वैच्छन्दसेकमश्वे वनिहो-  
 जितक्षै हशन्थीः स्वप्ने भिः कृष्टानि दीर्घे ब्राह्म्याग्निष्टु-  
 तोर्गीथद्वितीयसप्तमे कृष्टे स्वांसु द्वितीयषष्ठे प्रसो तृतीयं  
 मर्मचतुर्थं धमोश्च द्वितीयं त्रितीयं सर्वत्र कंकुभि चतुर्थं  
 योनौ वैयञ्जे सप्तमं पञ्चमं मुत्तरयोरैकचर्चेष्टमत्रितीयचतुर्थं  
 च ॥ ३ .

तरे हारादिरनुत्तरयोः स्वासु नवे गीथादिरयोनौ  
 शोके. मान्तायां विच्छन्दः स्वप्नेये ककुभे च योनौ  
 सामराजे च पदात्ते क्लाम्या पदादौ च दीर्घे न  
 जाण्विदेवस्व क्वञ्चिद्वावमारुसूरिकारिदाशुपीतीरा-  
 जने चाद्ययोरत्तृतीये जगतीषु च वाराहे परयोश्चास्त्रे-  
 षु श्रूते गीथषष्ठन्विष्टुसु दशमं मध्यमायां द्वादशन्त्रि-  
 गीथषष्ठं च पञ्चमं ह्रस्वायाङ्गीथादिर्वाचीमांगासां-  
 मस्पतिः सिधे हा द्वितीये यथर्चमृषत्यपिणीदनः सर्वत्र  
 पादतृतीयतुरीयं वृषमन्तास्यावृषं धत्तं च तृतीयं  
 विश्वासां विश्वांस्ते मरायभान्वा नन्दे अनुपादं नन्दा-  
 यास्थाने यागायतापरिदुहाशकुपुरः सखातन्दुदधा-  
 दिषु च नन्दा पर मेकोञ्च षुञ्च मिन्द्रनाविकनीचं भासु

सच्चञ्चरान्तं हित मनाकारान्तं संव्युच्चैर्वा स्तं व्यु-  
च्चैर्के ॥ ४

अथ स्तोभगतागत मगतिः स्तोभस्य स्वरे प्रत्यये  
स्तोभो गतिर्विरते क्वचिद्विरतेव्यगतिर्यञ्जने प्रत्यये ग-  
तिरगतिश्च तत्र स्वरव्यञ्जनयोः प्रत्यययोरगतिमन्तः  
स्तोभा ये तान् वक्ष्यामः । कश्चिद्वहत्यायाख्यावसतौ  
पूर्वकल्पश्चादिन्द्रेत्यं त्वादत्रेकाराभ्यासस्य विकल्पो  
न गतागतस्य मध्यमश्चागतः सत्वन्नउदावृषस्वपुमा-  
नद्वितीयायाभर्दिप्रत्ययेयम्पूषायाए सर्वासु पूर्वे  
जनिवैत्यस्य स्तोभस्थागतिर्यस्य हितेत्यत्रान्तराद्यापि  
गतिर्वास्ते होइस्तोभस्यान्तरागतिरभिसोमायाया  
माथः स्तोभः स गतिप्राप्तो लुप्तगतिर्भवति क्रौञ्चयोः  
पर्याकूपारे चागतः स्तोभः पुरोजितौत्यस्मिंश्छन्दे  
गतिर्भवति न गतिमान्पूर्वः स्तोभः सोभरे सनीयुवा  
तवत्यदिन्द्रियायाए सर्वासु तवोदस्माथायाञ्चोत्तर-  
स्त्वगतिमान् भद्रा इन्द्रस्य मदत्यनुमादेववाहव्यंप्रेम-  
ध्वराय ॥ ५

अतः परमगतिमन्तः स्तोभा ये तान् वक्ष्यामो यञ्जने  
प्रच्यये स्वरे तु गतिर्भवति शाक्तेः प्रथमायाए सर्वउ-  
त्तरयोश्चक्रमांसत्वत्वेहिरण्ययुश्च कश्चि सर्वे नेन्द्रए-

सुत . इन्द्रकीर्भिराद्यागमन्नियमते \*घृतनिधनेत्यः  
सर्वासु मधुनिधनेन्तर्जन्देवोदाक्षास्थोर्यीक्तयो  
खंधाप्रत्यये माधुकुंद्सु उपखंसरं च याम्भूषन्ति सुधाः  
वसोपुनानःसो चुष्टम्बे खादिष्ठांशयोरन्तेग मद्गु  
प्रत्नकौतमैन्थो वैष्टम्बे वयं मन्त्राः सर्वासु कर्णवेभिः  
प्रत्नसधस्तोवीथान्ते न जातमाविश्वशाश्विस्तोचीयान्ते  
यदिन्द्रयानपायत्वादेवानाक्केन्दुरिन्द्रायविश्वंशेषाम --  
हस्तधावाचःसाम्नांसोप्रियदेवाय विकींशंहारिवर्ष-  
उलोककृमन्दानस्तै रश्चेः प्रत्नसृतस्याभौशवेः पुरुशि  
घृणाश्रीणक्तः समुद्रस्य पुनानायांभाद्रः सर्वासु खः-  
पृष्ठे सर्वे नाभिसोमाध्यास्यायां विचे प्रत्यये पृश्निनि  
क्केष्टं यद्वन्दन्तश्शुहस्तेनसुषादब्धः सुघृणां प्रत्नं पुरु-  
ग्यातीषादीये सर्वे रन्ध्रयोश्च सर्वं नात्तरे वृषां अचि  
वाजजिति सर्वे न रयिं मचिक्रमं वरुणसास्त्रि नयो  
ऽसुमदा धंरुणं वन्तीयद्वन्द्रे सन्तु देदिशतिरनाधृष्टां-  
भिर्मधुपर्षिपुष्यप्रगामोष्ठीं नभ्वद्वादेचन्दधातुष्टिमौम-  
ध्यन्नाविष्णुर्गोयतीव्रतानि हिन्वन्नृतांभक्तयसंयोजतउ-  
दुस्त्रियात्रर्वाद्यथं सजूरश्वीयन्तालांगोस्त्रियिर्माशेषपरि-  
क्लृणवन्तिपूर्दपूर्वयोर्हुष्माहिन्वविशीथत्तरयोरन्थो यो-  
नौ चान्थः ॥ ६

दक्षविधने गोषातिरिन्द्रायद्राणे कार्त्तयशू सर्वं  
 न तु विवसोः साम सुक्ते साकमन्वमुत्राया मायः सर्वा-  
 स्तन्यत्रं प्रथमतृतीयपञ्चमा न मध्वे सृतीयो लब्धे  
 सोममिन्द्रायशुकन्दुदुङ्गे हारायणे म्पवमानसं वरु-  
 णसामदिरोजुना वैयश्वे पुनानाया मन्तगो भासे  
 कृतुवित्तेनापवस्वमहिष्ठः सितेन्त्रः कार्सेभितृती-  
 याया मुभौ स्तोभाविन्द्राय पृषाद्ययोः स्वादिप्रथमा-  
 याञ्चोत्तरस्तस्र सखायः परित्स्त्र रक्षः सैन्धुक्षिते तिस्रो-  
 वाचोत्तमाया मन्त्रः प्रवस्त्राद्यायाञ्च मन्ते प्रत्वं पव-  
 मानगोभिः सुप्तादब्धो दुहानोदावसुनिधने त्वसो-  
 मान्तः सुर्वासु मदेषु गोषातिर्हा विष्कृते त्वसो-  
 सोमाद्यन्तयाः स्वादिप्रथमायाञ्चोत्तमश्रीयद्भन्मुताया  
 मुत्तरयोर्मेधेष्ठाप्रत्यये ॥ ७

सामराजे पवित्रायां मनाकृष्टां गोषूक्तेर्यचामरु-  
 तांश्चैना सर्वे त्वाष्ट्रीसाञ्चोच्च सर्वे न हरिं वक्षं  
 प्रवमान वाचस्पतिः सोमस्पतिः सखेन्द्रस्य पुरः  
 सखायोर्वाचीजं यज्ञं च ब्रह्मोऽऽशं युञ्चाद्यथा गिरां  
 बृहदान्मेयेर्नाम यस्तु सोमसांनि गोषातिरुत्तरे जनित्वे  
 पुरउत्तरयोरन्ताः स्वर्वन्निधनब्रह्माय स शुक्रब्रह्मस्ते  
 सुतस्थेन्द्रस्य यशस्यानुत्तो वैश्वामित्रे सरञ्जार आनि-

धने तु प्रत्यये पूर्वयोश्चाभिगीते प्रत्यय उद्वत्प्राजापत्ये  
 सर्वे न नृभिः शैखण्डिने सर्वे नर्यत्वायदीपविंशशी-  
 पतिः क्रन्देशूरः इन्द्रस्या उवाभीके सर्वत्र न सुवा-  
 इन्द्रायाच्छिद्राञ्चौरूपसन्तनिपाष्णानामाउवा सर्वत्र  
 नतालव्याद्यात्पर मतिहार भेके विरते गतिलोपो  
 न सन्धौ रुचाहराश्च उवाश्चिणीश्च ४ योरुचाहारारश्च  
 उवाश्चिणीश्च ४ योरुचाहारारश्च कृतिभिः प्ररीतोत्तरं योः श्रायन्तः  
 सर्वासु वक्त्रासु संप्राख्ये भिज्याकाः पर्वत्वाद्ययोराजुं ह्या-  
 नस्यातीषङ्गपवत्त्वाद्ययोः सिम्मासु च च्छन्दसीष्टाद्यायां  
 यस्तु हरे संयोगे प्रत्यये वृष्णिं सर्वे न वंशिप्रत्यये न  
 वशिप्रत्यये ॥ ८

वादौमन्ते मीचैः पुनाप्रबंशुच्यसुषामाहिपरिंधी-  
 दुहेमएशकियेपुनानायां प्रान्तयोः एभ्यो वयं प्रबंशु-  
 राय आसुतादएभ्यो चानिन्दं तवात्वारं पर्यां प्रान्तयोः  
 शीये विव्ययुं क्षुचितेशुभ्रए रायः सएहिष्ठीयासितयोर-  
 यमयाहरिश्रीलीये याभिसुतादिवःपीविद्याकूशुहीये  
 मिरे गिरिम्पुरोजिप्रत्पष्टेयाश्च सुतः च प्रान्तयोराग्नेये  
 पुरोव्यग्निमाशुनाध्वतवप्रसोसनः पंक्ते च प्रसोषुक्ते शुभ-  
 मुचैनायदक्षसएहितयोः स्नादिमान्तोसएद्वदाभ्यस्ति-  
 क्षश्च न षडन्ते तृचयोर्षे पुना च सेधे पुनापरितवाम-

न्तवत् प्रतः प्रपिवाभिसो हे श्रीसद्यने यंदासे च्छान्तिते  
 पद्मद् ऋचे मन्त्र मन्तवदुकथे प्रहिनोच्चैः शङ्खन्यस्य-  
 प्यप्र सर्वस्वयवाश्वेपनकार्खे श्लैते हे श्रीवाविन्द्रकृतार्था  
 च्च परमज्याः खादोर्वाष्टपुरोजोमाउल्लेति सर्वः पुरो-  
 जिगिरिं जनिच आर्षभः श्येनयोः प्रान्ते वायोर्हर्त्ते ति  
 वाम्ने भिसो हे मान्यत्र लोशे गेभ्विच्छेगनवदसाविमान्धरे  
 स्वपीत्वाकाशैति नवे मन्त्राभिमन्त्रसुषामन्त्रे चानुत्तीरा-  
 जरंधोत्तरवाञ्जजितेयोनाविनए ह्वद्वेथ्ये पुरोनदे  
 पुनायामे पुरोयज्ञावृत्तनीरापारेष्टे प्रथेनावयं पूपुरः  
 क्रौञ्चे साम्प्रमिक आयांस्ये नुत्सस्तवकावरंथन्तरयोः सर्व-  
 चो प्रोक्तं ॥६

थेषूक्ते हे साव्यामयोर्वैयञ्चे जय उतो नः शनेन्द्रः  
 कलेर्षां प्राभ्ययोराकृहविषष्टतनिधनाश्वसाध्यानां हे  
 सद्यनेयंदासे च कौत्ससांधीकाषाभौकसोमर्षभमरुतां  
 योनौ प्रमरुतां च चत्वारोन्द्रमलीये प्रवाहे स्तृणन्ति  
 देव मपां न ककुभे त्वए सर्व उयं कदांमत्तद्व्यहृणात्तेरयि  
 मिन्द्रासंवेर्भियोभरेस्थूरमेवासदेयोनौ परे च वृजिगि  
 प्रपण सोमवृत्तास्वारो योनावाधयोर्मरुहेवान्ना मूती  
 दिविद्युत्तामित्रे दिविद्युत्तास्व हे पृश्निन्येकर्षे पुनानाया  
 मन्तवत्पर्यामैतयोर्द्वेषे चैव मभिसोमघोनौमान्ते यज्ञा

सर्क. क्षिते . चामदाय काखबृहल्युपंतमं चात्रडाद्य  
पादाद्य् रहस्ये च बृहल्यत्रिष्टुतिच्छन्दोः साही-  
यग्नेत्व सर्वी विच्छन्दःसु च वत्सामु योनौ च प्रश्नयां-  
शयोरनूनेस्मग्रहणादस्ये च न सोमज्ञीयस्तु विशीयि-  
प्रक्षौशौपगवात्तरवैष्णवैकर्चतचहवद्दे व्यवरुणयववाजी-  
यसदारसृच्छुद्धीयपदनिधनचितप्रकृत्यखयामानीं विप-  
र्ययो यथा योनौ ॥ १०

ग्रहणानि खैते योनौ प्ररेवाहे शृङ्गे वत्सायां कमश्वे  
च पूर्वे हहति चायो नौ धःसन्निनि पूर्वे उउहुवद्  
गृह्. उत सुम्नावलोये मरुहविषयज्ञापस्वामृते सु-  
मार्गीद्वितीये प्रसोपास्ये षडे च लं० सर्वास्त्रिक्रमध्य-  
मायां च श्रौष्टउत्तमास्त्रयः प्रद्वौमशीये ब्रह्मायूये गिरां-  
मौठमानवयोस्तृतीयोदावसुनिधनपूर्वः नितजन्मशु-  
द्धीयविशीयवैष्णवैकर्चयैकोनिधनेषु च नौ गौजी  
च नवे च तृतीये तृतीयं तुरीयं मर्षापौशिक्ष-  
मानो गवे तृतीयो नत्तरदर्षाकरेभिपरि वैयस्ये नौच्छ-  
बैके नीचेः पृश्निनि पृता च द्विविष्ट्रिभिरित्यभि-  
गीत मेकेदष्ट उतरे विकृतस्तावात्तरं हे पार्थ एक ए हे  
जित्वे च जनितेति हे ज्ञीये वयमूर्जस्त ए सिन्धमात-  
धीति वारे वाघाच्यावसंधमासूर्यसवनोजनगृहक्षमं



अथिकाराद् वृहं धानोनाजायोरोष' मग्निस्त्वित्त-  
 माश्चत्वारस्तमसो योनौ ही द्वावत्तरावहृश्च नैपोर्जी  
 महत्ते मंज्जा चान्ता प्रयघृतवनिश्चारे' मद्वादवे फुहदा-  
 ना मृतौ यद्वणं "प्रप्रति पादादौ हे मध्ये चेन्दुर्युवम-  
 न्नीशैक मन्यव सप्तहे त्वसंयुक्तपादादौ हे मध्ये योनि-  
 न्त्ववरथ्यं मेकं मन्यव' गोष्ठप्रतोदपुष्पधर्मविधर्मपा-  
 र्खसन्तत्यवाजं ऽसदोविनरं परमज्याः पुवस्य मत्सरा-  
 सोसौमित्रसंकृतिवात्मपदंष्ट्रेत्तरभाजकीर्तायशःसत्-  
 सर्वभद्रश्रेष्ठोषत्रतैकवृषाश्रु' ह्य'रुह्वानां पादादिर्यथर्चं  
 गत्वाशोत्तरेच्छिद्ररथिष्ठयोश्चानश्यासने मरिचस्थानयो-  
 श्चाप्तीढां न हि रिच्छे न हारेत्सराराय चाकुदेवानग्निं  
 स्तोभांनावावक्रातविमायाविनउक्षां चैके भासे  
 चांनासन् पुंरःसुतापरियज्ञोश्चैर्वरिय त्रेगांवर्त्तंसत्यर्चं  
 सङ्ग'वणे' सधन्म्येनः सोमैधेहरिं हिष्ठौये वने च  
 रन्ध्रोहरे श्मेमागौतमे षष्ठे' इ हते च नक्तिः स्वगी-  
 ष्वर्कपुष्पयोर्न वरुणसाम्नि रावन् वृस्पत्ये द्विपदासु च  
 वाजंजितिं विकर्षे' चातिच्छन्दःसु च देव्येषां वृतयो-  
 र्गवाश्च पूर्वो' ख्ये योश्चादिर्यस्याश्चोत्तरयोः परि-  
 प्रत्वायाञ्च ॥ ११

नीचात्परः षः धिधमैधदैर्धवैयस्वपृश्निकौत्समद्ग-

स्थानेषु सिनिहत मसएहितं पृश्निदैर्घयोजितिभिया-  
सिते खयानमापुरुसुतमूमदोविशीयाष्टेडरूपेषु क्रौड्य-  
ष्टम्भतमच्छन्दसर्वैयुक्त्वाष्टसोमोद्धेडस्यै तसाध्राणां यथ-  
च्च स्तृतीयोदादिरश्नुष्टचारत्नधानञ्जनारत्नधावैयश्च वाशे  
चापुनामान्त्रयोऋभयं प्रान्त्रयोः प्रुक्ते चापरिप्रि. वृषा-  
मोन्वाययोर्वादिर्गीथादिर्धनादिश्च रूपे धेसे वेकृष्टा-  
द्विस्तोमुद्रोजिष्टश्च श्रवाज्यांरिन्नरोजिनदे च दुरो बध्नः  
षष्ठं पयं तुरे धारया द्विमन्नात्वासदेवकया च द्विनौचा  
सोमसाग्नि च त्रेये रयानौ सधरेवतीषु पयसि परि-  
नोयिषिवमन्तोक्तयोर्वेद्विदुष्टे प्रांसिते समीमसुजे  
हय्य हारदितोयं मपुरोजिष्णान्त्रयोर्निते पुराजिमध्य-  
सायाए शैले च थे त्रिष्टुप् प्रान्त्रयोर्नैपे गीयत्ततीयं  
चतुर्थं वष्टौहाद्यं च पञ्चमं च साग्नि च तृतीयं न  
वष्टे वएसंकृति यशसो वृण्यादिः कंसश्चे नात्तरयोः  
स्वासु षष्ठ्यं देव्ये विष्टुष्टभ्यासे मन्वाज्ये वाहिरापिरान-  
यज्ये च हरे द्वितीयो दादिरश्नुष्टारुणति सिधनायास्य  
स्त्रानोनित्रवत्तिष्टुःसु त्वप्रं दादयः पुराजिं चाषो  
वैराजे प्राभ्यासोहस्य नौ चासर्वाहस्यसोभौशंवयोर-  
हङ्गताभीशवयोः ॥ १९

॥ इति पञ्चमः प्रपाठकः ॥

अकारो वृद्धः पदगीतः प्रादान्ते घोषांकारयोः  
 प्रत्यययोः पुरोऽर्हाङ्गताधेवादाङ्गवाङ्गद्वारहाङ्गया  
 एवञ्जातीयानि सन्ध्यागीतं वज्राणामो मदः शब्दः  
 प्रथमः स्वरः पवत्तशङ्कुद्वितीयायां मत्स्यबृहति चतम-  
 द्विवा यदिन्द्रचित्रायां वसिष्ठप्रिये रथीतरो नक्षिष्ट-  
 द्रथायां मासिते हिषस्त्वे सोमयौधे पथीजी जनायां  
 वाङ्मे रसः खासु तमसोर्के पुरोऽनः प्रेङ्ङ इत्यत्र  
 मराये ॥ १

अङ्गान्तः पदगीतः सर्वत्र सन्ध्यागीतं वक्ष्यामः  
 क्रौञ्चाष्टमिके प्रवो विभाष्यत उषसोभिप्रि खरनसे  
 द्वैगते पुर्नानाया मुत्सोजिगत्तवस्ते पूतायां क्रौञ्चा-  
 ष्टमिके मानज्जर्ङ्ङत्येतोशब्दो नाधसे नेन्द्रः कर्ङ्ङ-  
 वेदाया माङ्कारणिधने काख्वे महोदिव इत्येतौ शब्दौ  
 प्रङ्ङः प्रीयूषायां प्रैधे प्रस्रवाजेषु नञ्चाध्वर्यवः सुव-  
 विद इत्येतौ शब्दावाएविदित्यत्रौशन इन्द्रः शूरश्च  
 महानान्त्रौषु यहाङ्ग रथी बोधीये वारिथादुष एङ्ङ-तृती-  
 यायां तुमद्विष्वञ्च वर्हिञ्च तन्मंदायाए सिषासन्तः  
 शुधीहवायां देवराधः सदुद्रवायां रजः सूर्यो विते  
 महस्तवानो बृहद्रथन्तरे पविश्वन्त इति देवासञ्च  
 वान्ते त्वाष्ट्रीसाम्नि ॥ २

भक्तिमध्यः पादमध्यश्च स्तोत्रे प्रत्यये पदगीतः सर्वत्र  
संध्यगीतं वक्ष्यामोऽस्मिदिन्द्रः चारे वसुरुच उत्कीचे  
तुवस्वारयोस्त्वाष्ट्रीशाम्नोः रजः सूर्यश्च पूर्वे देवो धीतोः  
मत्सरासोश्च जम्भे वृषामदः स्वरं बृहन्निधने वषः  
स्वामु वत्सास्त्रभिद्युच्यावने पांसास्यं पवस्त्रमधुमायां-  
चेन्द्रः श्येवः सन्तनिनि सांमो वांमे चन्द्रो वांमे राधः  
कौत्से मंयो भरे स्तोत्रभ्या वारे देवः पुनाभिसाम्भ्या-  
मैधष्टभ्योः स्तावे मत्सरांसश्च ॥ ३

भक्तिमध्यः पादमध्यश्च स्तोत्रे प्रत्यये संध्यगीतः  
सर्वत्र पदगीतं वक्ष्यामो देवः प्रत्युत्क्रान्त ऐडयास्त्र-  
द्वितीयायां जिगत्तवस्ते पृतीयां वाङ्निधने क्रीचे जारः  
प्रमुन्वान-द्वितीयायां विते होषोस्वर उत्सस्त्रिणिध-  
नायास्ये धृतव्रतस्त्रैशोके भरक्तः सौभरसिययोः पुरो-  
जिनर इतिगतौ शब्दौ मराये श्रुव य इमाउत्वायाए  
श्यै ते प्रवः कार्तयशौदलस्त्रविषु श्येनः सन्मिसनयाए  
सएहिते जातो वाचःसाम्नि प्रियन्देवायान्दधन्वाए  
ङाः सर्वत्र दक्षशूरावर्कं शार्गे च ब्रह्मयुजो भारद्वाजे  
पुरां दर्म चामन्दैरित्वाभिनिधने काश्वे मर्तो योय  
सहोतायां कमप्रवे श्वांययन्तोभित्वाशूरायां काश्वतर-  
स्त्रेदिन्द्रश्चाभित्वापूर्वायाए सुष्टतयो त्रषट्पायां बृहति

रुषुयस्यत इत्यत्र वाजीये दिव्यो रथन्तरवृहति राध-  
स्तत्रो वीङ्क्ते विधतोभद्राङ्गन्दायाए सौभरे भरमाणो-  
भ्यभिहि यौधे मृजानः सं ब्राह्म्यक्षायां बीधीये  
बीधीये ॥ ४ ॥

आकारो त्वम्पाशब्दः प्रकाव्याया पाथवाराहकुस-  
रथीयेष्विन्द्रायेन्दवितिं क्रीञ्चै पूर्वयोः स्तोत्रीययोर्वा-  
हाङ्गस्तोभे प्रत्यये जस्ता वैश्वमनसे वृधा-वृहङ्गारे पूर्वथा  
कण्वतरे हिता सुज्ञाने दिव्या प्रत्नम्पीयूष मित्यत्र  
जयामर्हीवोत्सधेपूञ्चैनेटत एकारे प्रत्यय आर्यः कालेय  
आसाहन्तीयोत्तमे जेथा नामधे हव्या विशीय इन्द्रावो  
कावाषाहरे गीथेभ्यासे प्रत्यय दुहा सखा मरुत्वे प्रत्यये  
वैराज आःकारो त्वमदाः सुतासोमायां इहद्रथन्तरयोः  
स्तावे तमाः श्यावेक्षाश्चाउवायां प्रत्यये नित्यवत्साती-  
षङ्गसिमास्त्रिकारो त्वमिवोक्तेर्दुहानायां प्रतीनि  
द्विहिङ्गादेव्ये षसि कण्वतरेऽङ्गिन उत्तरयोरास्तोभे  
प्रत्यय ओकारो त्वन्नद्वं ओसङ्गस्तोभ ओस्तोभे च महा-  
मिन्दवेकारोकारयोरत्वमोध्यं महं ज्ञीयेऽकारो त्वन्नो  
अर्षसि पुनानीयां साप्तमिकत्रिणिधनायास्ययोर्वा-  
धाजये च वषो अचिकायां च त्रिणिधनेयम्पूषायांञ्च  
क्रीधे वञ्च वृहति स्तावे परउत्सधे दुहानासाम्पुरी

मत्स्विप्रत्यये वैराजे पुरुषः शब्दः प्रथमस्वरो व्याहृ-  
 तिषु कामे च सर्वसु मद्भिर्यरुहशब्दा मध्यमे वि-  
 कल्पे ॥५

वृद्धं सृवंर्णां सर्वं मां भवति षंकारस्पर्शयोः प्रत्य-  
 ययोर्घृतोः का३३र्णाका३३र्द्धी३ एवं जातीयानि  
 तृकारस्तु न सर्वेषु स्पर्शाभ्र्वाभवति यथा योजो३४रि-  
 त्३भ्योमघवाग्नीषितृ३३४पां३ स्तकारस्तषयीः प्रत्यययो-  
 राभवति ता३र्त्ता ३यमंधिरोता३ र्णां३३४ओ गृ-  
 कारो हकारो पृकारः श्रिंकारे शुगा३३र्हो३३या३रुचदु-  
 षसः पार्श्विरया३या३३ यामे चायङ्कारिति न क्त श्रुत्वे  
 प्रत्यय उक्तस्त्वभ्यासादौ व्यञ्जनलोपः खानेका३श्रुत्वेन-  
 का३३ यदुक्तं पुरस्तात्षकारस्पर्शयोः प्रत्यययोरंभव-  
 तीति तत्राप्रवादाः ससृग्मवाद्ब्रुवा च्च नामधे चक्रमा  
 शाक्ता एतदेवोदाहरणं यथादानायां कौत्सकंश्वब-  
 हतोः संगृभातून इत्यत्रभ्र्वापारे मर्मु स्वासु दैर्घ्य एतदे-  
 वोदाहरणमभिक्रन्दायां धेनुवरुणयोर्गिरस्त इन्दायाच्च  
 सङ्घृष्टे नभ्र् प्रसुन्वानायां गौतमंसाभ्र्वावाञ्छादला-  
 कूपारदासवैश्रामित्रस्वारकौत्ससखतस्तेहृतरेषु नृभिः  
 प्रब्र् संधस्थमित्त्वै उयास्यगौत्सीयषेधाभीशाष्कार-  
 सोमवरुणतमतरजभ्र्प्वेतदेवोदाहरणं .. मभिसौ-

माध्यास्यायां हृदक्याग्नेस्त्रिणिधनहन्मनिषु धन्तायां  
 क्षीयकांवाभिक्रुष्टेष्ववधुतानायां च तमसोर्के कंकु  
 तन्मदायां ७ हारिभरवारिष्वे तदेद्वीदाहरण मय-  
 म्पुनानायां क्षीये तन्तामदायाञ्च संहिते प्रोष  
 वृत्तासु च ॥ ६

समृत्तवशाके वृत्तवयङ्गुत्वाया मभिनिधने  
 काखे वृषिार्यत्नानोर्वशीयद्वेपद्गुपत्वाजावार-  
 त्तीयाया मेतदेवोदाहरण मयसूर्याया मामहीयव-  
 बोधीयत्तपुभपावमानाशुभागीसौम्यैटतसाकेष्वृषिक-  
 ष्चिंशु देव्याङ्ज्योतिषिषु तिसृभिः पाहि रौरवेस्सपु-  
 रुक्कच्छ्रुध्यं हारमानवयोरुक्कृदुविल्लुनायां बोधीये पृ-  
 थिवी प्रदेभान्ते बृहति च यज्जायथाया मृधक्लोम-  
 दविज्ञायै वृद्ध मप्यार्भवति षभे धिवी धृष्ण वृषि-  
 वृषन्वारि मृत्यधेनौ कृण्वते कौञ्चे मृज्यकण्वतरे कृन्त-  
 च्छङ्गुनि माज्यमानः सुहस्त्रियाङ् निर्गा अकाएर  
 तदोर् तम्पाया संवर्ष प्राप्नु रेफः प्रथमस्तरायां  
 वृत्राया संपदिश्यते त्वाङ्पाङ्गस्थन्तरे च खदेव्यह-  
 दान्नेययोर्द्वर्वर्ष प्राप्नु मर्कारः कियते नाङ्  
 र्वना ॥ ७

ऋचि प्रसिष्टाः स्वरसन्धयः पाठमध्ये साञ्चि वि-

वृता के तान् वक्ष्यामि मङ्गवस इमा उवायां वारं देव्य  
 रथं बृहत्सु श्रुये तु प्रश्नेषाभोन्द्रं मभिवायु मिद्यत्  
 पार्थे केतवः स्वांसु मरुताङ्गर्भी महत्तत्सोमायां स-  
 र्वत्र कन्दसि तु प्रश्नेषः प्रसुन्वानाय सर्वत्र पवस्त्रयस्त्रे  
 मदायां सर्वत्र सोमसामसाहीयशास्त्रदेषु प्रश्ने षः पुरां  
 नः सर्वत्र माशिवासः सर्वत्र श्वादिर्नीवां च पिंवासी-  
 माया मृषभे प्रस्रवाजेषु नः सर्वत्र रवेद्गौषे तु  
 प्रश्ने षो नो अविभिः सुंषावसोमायां सर्वत्राष्टाद-  
 ष्टार्कपुष्पसंकृतियशःसु प्रश्ने षः ॥ ८

•सुतेचिदानवे वृद्धाच्च सर्वत्रायस्ये तु प्रश्नेषु  
 उदिन्द्र त्वच्छेहोत्यत्र कण्वबृहति पूर्वकल्मे स्तावे च  
 जम्भे प्रतिहारे कौल्मे स्तावे गायन्ता यूथादानायां  
 कण्वबृहति जम्भे च तवाद्यायां सह्यदैर्घमराययोर्वै-  
 राजे च स्तावे तवद्वितीयाया माभीशवधैगतयो  
 रहस्ये च बृहत्यरुषी प्रतिष्या सूनुरी द्वितीयायाम्बो-  
 धीये देवाङ्गर माते अग्नद्रुधीमङ्गीत्यत्र तन्नद्वन्द्वीपगवे  
 चासाहन्तीयोत्तमृत्तीयाया माप्रायेभ्यदिन्द्रायां  
 श्येने स्यार्चतोवैराजर्षभे देवाङ्गसा बृहति मही नधा  
 रांगो राजां च कावि पादान्यात्परः स्वरो विकृ-  
 ष्यते यथानूपतावद्युतानायां शचिपूजन यतइन्द्र-



द्वितीयायां दृक्षाय विधर्मणि गमिष्ठानसुस्वृत  
मित्यज्ञाशन एवञ्जातीयानि ॥ ९

अथापवादाः प्रश्लिष्टा अश्लिष्टित्यस्य शब्दस्यावृद्धा-  
परस्य प्रश्लेषः सर्वत्रेह न यदिन्द्रचिन्नायां वसिष्ठ-  
प्रियषङ्गयोर्दिवस्पदे तपोष्पवित्त्रायां क्षीये मोषुत्वा  
पाप्वे श्रुधिशब्दोभासे धियोग्मे भरामे क्षाया मन्ते जिषु  
सन्तनिनि लचि सुष्वाणायामाभ्युगवे धसस्तम्बाद-  
स्माधाया भायर्वणसौभरयोः प्रत्यस्मै तृतीयायाञ्च  
रयन्तरे वासृजोरातय इत्थितौ शब्दौ प्राप्नुवन्नासु  
युजाणिरिक्लिषायां रौरवे बोधयोमहेनायां वाजीये  
द्विते वसो वैककुभे तमोर्पायां वसोर्चतप्रिये ब्रह्मयु-  
जा कचे धसोद्वयो वाक्प्रे नदीधिमः श्रायन्ताया  
सौभरे सेन्यासिवाह्निरसन्तनिनोवाहनेनानेविवसद्-  
द्वितीयायां श्रुत्ये वृष्णउद्यस्यत इत्यत वाजीये धरया  
सेधे धियो सेधे जमवत्ते चान्ते तमथ कमम्भे तत-  
र्द्वियो देर्धश्रवस्यवो देव्ये श्रवस्यवो देव्ये ॥ १०

यः संयोगा श्रवान्तः क्वचित् संकृष्टः क्वचिद्विकृष्ट  
स्तत्र संकृष्टप्रहणं न्यर्यसाहीयपर्णवर्णमिन्नविलखेषु  
नेडे दिव्यं ज्यर्षसि यशः सएसर्पपुष्पेष्वापृच्छा मवृष्टए  
सर्वतं मदेष्वाकूलीये जिह्वं न कृत्यश्च क्षीयस्योद्गीये

विष्वाच्यश्चिनोर्व्रतंपर्याकूपारपुष्पमरायेषुं नाभगसत्व-  
 द्रयश्चैतेषु वैघने चामराये त्वमंगनये स्वासु दैर्घध्य-  
 मायाः सूर्यस्थाभिःप्रियाणीत्यत्र खगरकावञ्चीययोरेष-  
 एव शब्दः सूर्यवतीष्विनोराजद्वितीयायां चौशने ति-  
 सूर्यं पुष्पमरायकीर्त्तेश्विन्द्रः सूर्यः सुज्ञनैपकीर्त्तेश्विव  
 सूर्यः कीर्त्तौ बरगमहाः असौव्यत्र सूर्यशब्दः सर्वत्र वित-  
 नैपयोस्त्वाद्यो विकृष्टः सूर्यं महर्त्तलोमायां वैश्वज्येति-  
 षवात्प्रयोरामायामामूर्यः सर्वत्रस्यप्रत्वायां मयः  
 सूर्यशब्दः सर्वत्रात्रैव तृतीयायां नः सूर्यो भाजे सूर्यस्व न-  
 ते गिरं इत्यत्र महि सूर्यः कीर्त्तौ सूर्यस्येहवद्वामे-  
 सूर्या वैरूपान्तरिक्षयोस्त्वः सूर्यः सौमिते समु सूर्यः  
 सन्तनिनि यथर्चगीते पर्वणिष्प्रवितां दाशे महाया-  
 च्चीयविशीयवारमहामिततरेष्वेक्षक मर्ष्वे त्वामिद्वावि-  
 भरे त्वाय सर्वत्र व्याभिर्नामिधे कुण्डपाय्यः सधने-  
 व्योमनीन्द्रमुतायां वःशीये हिन्वन्त्वापसो द्विहिङ्कार-  
 गौङ्गवहैगततरेषु खतरे च पूर्वकल्पे ॥ २१

स्थोस्तन्वाभृतीयाः हाविष्प्रतसन्तन्निर्वाविभाषा  
 प्रमुन्वान-द्वितीयायाः रयन्तर इदाह्योमानवे सुप्रपमा  
 च्छन्दमे पूर्वा वषामती-द्वितीयायां च्चीये त्वामभि द्रः  
 श्रोत्तरे मच्च द्विहिङ्गहारभारमानोत्तरौरतरेषुतस्यः

वैरुपान्तरि च ह्रस्वामुवृष्णा वैरूपे हर्यश्वपिबन्सोमहि-  
 तीवायाः सहोदैर्घे मराये त्वाद्ययोः स्यन्तमा मराये वि-  
 दान् मरायवैराजर्षभयोस्त्वामिद्गुरिहितायां मराये  
 सहोदैर्घे त्वभ्यासो नप्तगोरीर्षायवयोः परिप्रियायां मा-  
 र्गीयवे च त्वच्छेत्वेतौ शब्दौ सौपसो पवित्रमत्वे ज्ञीये न-  
 क्षिष्टं क्विते साव्यः शुः सर्वत्र न सन्तनिनि पात्योः क्रौंशे-  
 ष्वैरय त्वैतक्रौशवाशेषु त्वाच्छेत्त्वाञ्च गवांष्टेडसि-  
 मासु त्वं द्याच्छुद्धीये सुहृत्स्वरभ्यांत्तरवरुणागोष्ठार्क-  
 पुष्पेषु खानः परिस्नानायां वैदन्वतहाविष्मतरैवतीष्षे  
 एव शब्दोक्रान्वासिष्ठे परीताध्यास्यायां चानवमिहनि  
 त्वं क्विर्द्धितोये दन्वते मिवाः स्वानाः सर्वत्र दध्या-  
 शिरो विते व्यट्टिभिर्यज्ञीये त्वम्मातौपगर्वे वरेण्यं प्ररा-  
 ध्यात्तीषङ्केत्यो गभस्त्योः स्वःशब्दश्च ज्ञीये स्वः कावाभि-  
 क्रन्द्योरत्योर्केत्यो गभस्त्योः स्वाविश्लेते शब्दास्रयः  
 शाने क्वरव्यानुमाथी त्यो गभस्त्योः स्वाविश्लेते शब्दाः  
 षडष्टेडे ॥ १६

॥ इति षष्ठः प्रपाठकः ॥

देवेभ्यः संचारे नर्यः परीतायां माधुयांस्यभीशरी-  
 रदुष्टज्जन्मानूपयोधैराखतरस्थानसंक्रतिभर्गयशाय-

वैणतरप्पु नवमे चाहनि सर्वत्र दैर्घवर्जं विभाषारूपा-  
 साम्नेप्र एव शब्दः संकृष्टो गामन्नष्कलैत्येष्ट्यव्यङ्ग्या-  
 लीशे तमसोर्क्त्वात् वृत्तीयाया मन्त्यः सर्वत्र न्योः  
 जसा कीर्त्तयभ्यं कीर्त्ता काशीतहाविष्कृतयोस्त्व् शब्दः  
 सर्वासु त्वां देवासो रीत्या यं इत्येतौ शब्दौ वैश्वमनस-  
 शुभयोर्चन्ताहृशोयवितयोः सान्त्वाहृ वंशैभ्ये भूर्य-  
 वंशैभ्ये लैयावतेषु पर्युष्वान्धीगुधस्य स्ताभयोस्तंरध्यै विते  
 राज्यस्त्रीगवदेव्ययोः स नित्यः सर्वत्रात्रैव वृत्तीयायां  
 त्वांश देव्ये न्तागवन्दन्ताय्य इत्येतौ शब्दौ भरायु शेष्या  
 भारद्वाजे व्यस्थिरन् षडिडे वन्तास्यस्वारंकावन्नीयः  
 योस्त्वमिन्द्रत्वं वृत्ताणीन्द्रस्य यशसि त्वं हृहृत्स्येत्येतौ  
 शब्दौ द्विहिङ्गादेव्यं त्वस्यन्ये यशसि हृत्संभीवत्ते -  
 क्षर्पितो लीशे त्वं सुवीरः श्येने व्यं शब्दः शिशुन्देव्य-  
 ज्योतिषयोः पुत्रेभ्यां भारद्वाजे प्रत्यशब्दं नानतरयोः यु-  
 ज्या विशीये व्रतान्यश्चैतवाजीययोः पूर्वा मुत्सधे  
 सृक्तभिः प्राञ्जे हरिण्या सप्तार्थेभिर्वत्सांसु ॥ १

• त्वेसामाभाभिहीत्व तौ शब्दौ दैर्घं घृत्नांश्च शुभ्ये  
 पृष्ठाध्वङ्गवतरे ज्ञातमार्युञ्जीये पाञ्चुषामिच्चरौरवे ह्य-  
 निभिश्चरत्यं स्तावे नैपे दुर्यन्तुगद्यता चाम्नीगवे न्यै-  
 रयञ्जीये त्वां दूतं ऋषीये शम्भूह्वारमानवयोस्त्व् ० ह्ये हि

जम्भे त्वम्युक्त कौत्सजम्भयोः प्रत्ययकीर्तयः कालये  
 पूर्णाः सञ्जये वीर्यस्थण्यस्य वारे शुधीहवायां माद्ये-  
 पृष्ठे सख्ये शुध्यैतयोस्तूर्माः पूर्वः व्यनहेत्वे क्रतु  
 मित्यते शब्दाः श्यैते पायै ह्यैशब्दश्च देव्ये वावृधे  
 न्यञ्च देव्ये सवाच्या नकिष्ठायोषत्या च वाशे सए-  
 सद्यत्वे देवांदनागान् ह्युशस्यमन्ते त्वमङ्ग ककुभे  
 व्यूषाः कांथे महस्वास्तनिनि वीरसेन्यः सन्तनिहङ्गिर-  
 योरोषधीष्यो ज्ञीये मत्स्यबृहति दधे वार्याणि कमख  
 स्वर्णज्योतिरुत्तरे कममे स्वशब्द एनाश्रुध्येदर्श्या बृहद्रथ-  
 न्तरयोर्वहात्वात् शुध्ये वृष्णावषट्कारणिधने कांथ  
 नाभ्यासे त्वांष्ट्विन्द्रगामष्ट्वमित्यते शब्दास्त्रयो वारे  
 त्वामित्वाङ्गाष्ठासु प्रतिहारे बृहर्तित्वात् सप्ताष्ट्विन्द्र  
 बृहत्तरे त्वांशब्दौ पूर्व्विन्द्र च जम्भे जन्निवाश्येने वीर्ये  
 व्यबृहतोरथैव कांथ्य देव्ये सख्ये स्फिग्यं च रथन्तरे  
 यामे व्यस्यत्सोवा रथन्तरे स्त्रीवा रथन्तरे ॥ २

आयिःकारस्य भे स्त्ररे प्रत्यये ग्रहणैर्विसर्गलोपः  
 स्थाभिर्यस्ते सुकूपे श्यतिरभिव्युत्तृतीयायां वचः-  
 सास्त्रिभिः धासु विशीये शुचिः परिप्रियायां मार्गी-  
 यवे गृविः प्रसोमदायां कण्वतरि सुतिः पिद्वात्वस्याभि-  
 निधने कण्वे नृभिर्दिरिन्द्रोमदायां ब्राह्मिन्तररश्योः

र्वरीः स्वासु, रश्मे गिरेर्वृष्णिज्योतिः स्तावे प्रत्यु बृहति  
सोमस्पतिर्हं प्रत्यये सहस्रधारायं त्वाष्ट्रीसाम्नोः स्वर-  
प्रथमे चारिष्टे चान्नादावद्रिरभ्यासे प्रत्ययेक्रायां वैष्ण-  
ज्यतिषवात्प्रार्केषु नकिर्नकिष्टद्रायाए स्वशब्दं प्रत्यये,  
गौरीवितासितयोः ॥ ३

• उकारस्वोहोवायां प्रत्यये ग्रहणैर्विसर्गलोपः  
पृथुः सांवर्त्ते क्रतुः परीताध्यास्याया भांथांस्वो त्रीणि  
वितायां वार्शे परिप्रियायाञ्च मार्गीयवं क्रमुरिन्द्रक्रतु  
मित्त्व एभ्यश्चैतनिव्वे ध्विन्दुर्धत्तायां वासिष्ठे रहस्ये  
च योधा बृहति वाजयुः सदीवनाथा मन्तरिक्षे सजू-  
रन्ने बृहति विसर्जनीयाकारौ जीराः सैभ्यश्चिते  
निकामवितशृङ्गयोर्न्याकाः प्रोषुवत्सास्वःकारौ गोमन्नः  
श्रुथे समुद्रः प्रथमः स्वर इमाउत्वायाश्चैतनौधसंयोः  
स्वः शब्दः पूर्वः पूर्वे योक्ते स्वः शब्दश्चैवातिहारप्राप्ते  
लोपः क्रियते सिष्टवैशोक्रयोश्च योक्ते चोत्तरेण्योर्मरा-  
येभ्यासे प्रत्यये विसर्जनीयंस्व चालोप मेके वि-  
रामे ॥ ४

तकारलोप उच्छब्दः पार्थुरश्मे श्रुदुदौराया मि-  
लान्दे न्न वच्चे प्रत्यये परिमह्विषत्स्वासु हारायणे  
दृढाचित्स्वासु वीक्षेभ्यासे प्रत्यये वाविंत्सन्नद्रायाए

सौमित्र इन्द्रोमदाया मिच्छब्दः पार्थुरस्मद्बिहिङ्गार-  
 ज्ञीययोस्त्वमिन्द्रपरित्वयोः पुङ्गैश्चामित्रे प्रसुन्वाल-  
 द्वितीयायां तवेत् प्रत्यु-बृहति. मकारलोप उत्सं न  
 क्रन्दैर्घेभ्यमिहीत्यत्र मासूर्य मायास्ये साप्रभिके  
 तवायानि मनोषां क्षौद्रेषु संहोदैर्घमरायवैराजर्षभेषु  
 स्वसामैटतंभ्यसे प्रत्यये सई च्चिकवृहति. पप्रौ यज्ञावृ-  
 हत्युकारलोप उषदृगयसूर्याया मैटंत उत विष्णाञ्च  
 जनितायां श्यावाश्वे यकारः परिष्टोभन्त्यत्यस्मि-  
 ञ्छब्दे द्वि-ज्ञीये वः शब्दः सफे प्रियन्देवायां  
 प्रथमतृतीययोर्विकल्पयोरकारः सनेमित्वाया मदे  
 वः शुध्यद्वैतष्कलेष्वघायोर्कादे प्रथमेभ्यसः लृल्लका-  
 ष्ठीगवयोर्वृडादचरवैदन्वते. प्रथमे द्वयुः सिमास्वः  
 चरन्नब्रुवत्स्ताष्ट्राद्ये गन्ते ज्ञीय आकारस्तन्त्वावि-  
 प्राया. मिहववाम इकारः प्रसोमाश्वे व्यञ्जन मप-  
 राङ्ग विरामे लुप्यतेभ्यसे च. नोर्मयोर्षसाञ्जुन-  
 ऋभस एवामृता चार्क आकारोर्नुनासिको ऋङ्गः  
 सर्वत्रारेव वैखानसंसन्तनिषु ॥ ५

आउवाव्यथहित माउ भवति सर्वे पदान्थं च  
 व्यञ्जनं लुप्यते शाता२३ उवाइ भवार. सिथी३ वां  
 ज३ या३ उवा३ शर्म मही२३४ वा३ यू३ जा३ उवा३

वाजेषु चो२३४ वा३ मधा३२ उवा२३ एवञ्चोती-  
 यान्यनाउभावो भृगवतरे रेतः श्चिनेषु मनः संन्त-  
 निन्यशिश्रयुः प्रवङ्गार्गव औष्ठाश्चान्तःपदिको नाउ भवति  
 सर्वत्र यथा मा३न्दी३ मा२३ द्वा३ ग्रतो३२ आ३३  
 उवा३४५ श्रौणन्तो२ गोर भिरु३शा३उवा२३ मरुच्च  
 नं यो३षि३ सोमसाम्नि सीदञ्छेना३४हा३इ ना३  
 या३ उवा३ नर्द्दीमा३ उवा३ सुनातसौपर्षजर्मिणावांम-  
 मैधातिथयोर्वर्ण सदस्यत्रपवटुहत्सामराजेषु स्पर्शांजाम-  
 श्लोपा यथाद्युम्ना२ निमा२ नृ३षा२ शा३४ मरुउ  
 सहोभ्रणा३ मा२उ घर्जिह्विया३४ मा२उवन्मधुमां३  
 मा२ वीरिया३ मा३उतिरेभा३ नाउधृता३ वसाना३ः  
 पा३रिया३ सी३ निर्मिजा३ मा३उ श्ये नानये३नी३  
 श्वार्त्तवा३न्ता३ मा३ सदा३ द्वा३उ म तिष्टुपशिश्रुमु-  
 इति सो३ मो२ वा३इरा३३ जसून३रा२३ जमिंश्रु३  
 १उ रहस्ये च न सर्वं माउ भवति व्यञ्जनं च न  
 लुप्यते यथा वाजीयनित्यवत्तातीष्णसिमासु यवाउ-  
 भावो व्यञ्जनलोपश्च तद् वक्ष्यामः अरान्तःकण्ठः सर्वत्र  
 त्रिणवे संहस्त्रिणा मिति यवावापत्ययोरञ्चौरैवतयोर्थ मः  
 कारश्च रैवते सिमासु सर्वं माउ भवत्यमृगन्ते ह्यान्द-  
 सीषु दिशोवसोराणाङ्गोनामृमन्तेषु चाक्षारिण्यस्य शब्दस्य



रेफलोपः खरघोषवत्सु प्रत्ययेषु ज्योक्कः शब्दस्त्वो लएहेस-  
कारलोपः श्रवस्तमः साहान् विश्वायाए सएहिते सुश-  
स्तिभिरिलान्द्वितीयायां मानस्तरभिजमवर्त्तथादौ  
लोपः पराङ् वा सुहस्ता स्तावे ज्ञीयस्य लोपः पराङ्  
वेन्द्रायेन्द्रवित्ति क्रीञ्चे वलोपः सम्भावगतिविरते द्विय-  
क्कारसंयुक्ते विकृष्टे पूर्वो यकारः भूत आकारः अस्म-  
द्यते रयि० सोमश्वा३ आश्या३यि क्रीञ्चे निधनत्वात्  
पावार माना३ शवा३४५ या३३४ पायाशब्दः कुण्ड-  
पाय्यीमहेनायां च प्रणपा३त् कुण्डपा३या३४५या३  
सत्यश्रवसि-वाय्य अत्रइस्तीभात्पर इकारः सम्पद्यते  
रा३यि० सो३मश्वा३वा३हा३इ या३म् ॥ ६

अनुस्वारः स्पर्शः खवर्गीये प्रत्यये रेफस्पर्शीभिः  
संयुक्ता एते शब्दास्त्रदीन्तःपदिकाः स्तोभ्यवहिताः  
सर्वत्रातिह्रियन्ते स्तोभान्ते विरते लोपः सम्भावलोपो  
बहिषिततुराणापिशङ्गमौशानंकृदघश०ससरा०सिस०  
हम०हेल्ये ब्रज्जातीयान्तिहारप्राप्तं व्यञ्जनं लुप्यत  
आनएश देपे ज्यौती०षि वृषन्बदर्शि वारे वर्षसो-  
दर्शतेलान्देभ्यसः स्यारे पक्के प्रश०सन्ति विशो-  
याम्हीगवयोर्हिन्वन्ति विशीये मन्दानङ्गीभिर्जनिचे  
धम्मं देवे बिन्दुः सिष्ठं इन्दव उद०शीये कम्मवत्सा-

थर्वणे सत्रं तन्दुकार्त्तयशे खरान्त मेकं विसर्जनी-  
यान्तं वा स्वासु भरे यन्तुरं लोपः पूर्वाङ्गं वा कञ्चित्  
पदान्तो लोपः प्राप्नोति ह्रियते कञ्चित् पदान्तः पूर्वाङ्गं  
प्राप्नोति ह्रियते वचनात्प्राक् स्तोभस्थे खरान्तो विरामः  
स्तोभान्ते विरते लोपः सध्यावलोपो विष्ठा अधयदि-  
माभाः सुदोविशीयोक्तधयोत्सधयोः कुविरस्वासु मांगी-  
यवे चिक्रदत्पवमानाभ्यर्षसीत्वत् कएवतरे पुरंमजीजन्तो  
हि देव्यं न दुरिताये ददति देव्य उषर्बुधोनेविवस्वद्वेव्ये  
गिर्वणस्त्वयाभूषन्ति मानवं संपतिः मिन्द्रंविश्वरायां  
लेये जन्मं च त्वामिद्धीत्यत् मधमाउवाव्यवहितं किद्रः  
मैधाञ्चोरूपेष्वृतमाउवाउवाव्यवहितं पार्श्वसन्ताच्छि-  
द्रमैधाञ्चोरूपाम्ने स्त्रिणिधनेषु ॥ ७

शवसः सञ्जये सरद्गौतमे निष्कृतं रुणसान्नि  
वृषो अविक्वायां वयु मपघ्नन् यवसायाङ्गाचीवते ध्यम  
मैषिरे मरुत्पदमानो रथीसमायां कूलोयसन्तनिषभेषु  
दूराङ्गन्तोये प्रथमे रसं सागीयवे ह्यत्वत्संसांसि शा-  
न्मदे द्रिस वक्षितायां वितशृङ्गयोरुभयं स्वासु मैधा-  
तिथे सं पवित्रायाम् सामराजे तद्यज्जायथाद्वितीयायां  
बृहद्रथन्तरवोर्यच्छ्वस्तत्रै वृहतीन्तरे प्रत्यस्मै-द्विती-  
यायां धत्विषीमायाञ्च वत्सासूद्रप्रशंसयां विशीय-

चोद्ययोश्चित्तदद्यायां वन्तीये महदकान्वासिष्ठे. रहस्यं  
 च सांभेम बृहत्सहिष् खारे पणं घतः पार्श्वं मोषु चायां  
 नप्तोः परिप्रियायाः पूक्तौर्मायुवयोर्जीये चर्षणीर्य-  
 अजिष्टायां ज्योतिरौपगवे पवमानो अजीजनाया  
 मर्वाङ्त्रिलोप मेके कोवे विते श्रुतिं युञ्जाहि केशिनाया  
 मुभयतः प्रभोः शैखण्डिने हरिः वौञ्च शुक्लरर्षभे  
 भीके विपः स्वः सर्वत्र यथा स्वविदः शाङ्गुनि साहीये च  
 स्वविदां नामधेन स्व प्रत्यये सिष्टवैशोकयोश्च सिष्ट-  
 वैशोकयोश्च ॥ ८

अट्टादियदान्तात्सुरे यकारो व्यवधीयत उप-  
 दान्ताच्च वकारो विकर्षे सर्वत्र चालोपः सन्धौ विरते  
 लोपोऽ बोधियाऽ त्रिवरूपः सुवस्तथा एवञ्जातीया-  
 नि न प्रतीनि वत्ते जठरेषूहत्काववासिष्ठाभिक्रन्दाकेषु  
 पृष्णक्तु महामित्वाष्टीतितेषु येषामृजन्ति लौशशैख-  
 ण्डिनयोरदर्शि श्रुध्ये वृत्तेषु सप्तहे इन्तस्थपरे तु लोपो  
 यथा काष्ठासुनरस्त्वाऽङ्कार्शुष्ठासु आऽर्श्वतः स्तोभ-  
 व्यवहिते त्वलोपो इन्तस्थपरे यथा भीकषूक्तयोरैटते  
 त्वभ्यासै प्रत्यये वृद्धात्परो यौ लुप्तौ तन्वाऽगिरः सुष्टु-  
 तयोऽवाजयाऽऽङ्गन्तीऽ आऽजिन्नगाऽङ्गसूऽरीऽ आऽऽऽ  
 क्तूऽषूऽ आऽ एवञ्जातीयानि न भूम्युच्चासंचारे स्नाय-

धोगिं सिधूनां मरुताभ्यनी स्वास्त्रीशने च स्वस्त्री नोक्-  
 षुद्रयायां प्रियासितयोर्मदेष्वस्त्रेदिन्द्राय एष्कलवासि-  
 योर्यज्ञाय सन्तु सक्ते हृंहंवात्प्रवैराजपदनिधनशुद्धी-  
 यवर्जं नदीषु प्रियः सूनायां यौधाजयवैगवतरेषु ।  
 धर्तायाङ्गाव्रवासिष्ठाभिक्रन्देषु संतेषु त्रयाभूषायां माधु-  
 क्कन्दसुसुनवर्योर्धुस्त्री प्रमंहिंठीये वनेष्वर्षासोमा-  
 याए शांकलवर्णसन्तनिवर्णहरेषु ॥ ६

पृच्छेषु मुञ्जानेस्वाभ्यः सोमाः प्रवन्तायो वितमध-  
 निधनाभ्योगवषधर्ज्ञायेषु संवरणेषु प्रबोयायां प्रवल्हैशु-  
 धिसीरथ्यपामीवसुसूनि प्रवमानरुर्चायां विशीये मर्त्येषु  
 द्रनाय वार्यायां लेयश्रायन्तीययोः कविमिर्षायां चै-  
 शने व्यग्रहि संक्षार पिब्रात्वस्यवर्त्ताभिनिधनयोरव-  
 न्यस्य सामराजे स्वस्तये दवि-ज्ञीमे दीयम-ज्ञीये स्वाहुतः  
 सदुद्रवायां वारदेव्ययवृहति च गीये दीर्घवृद्धोपहित  
 इपदान्त् आद्भूतोकाराकारयोः प्रत्यययोः सम्बो य-  
 कार मायद्यते गतिर्विरतो वाश्यस्यद्रोः३ प्रवमाना-  
 भा३४याषा३४सा३ एवञ्जातीयाभिं नर्षसि पुना-  
 नायां यथा गौङ्गवाभौवर्त्तयोर्भवोयसी प्रमंहिंठीयेर्च-  
 न्युहृशपुत्रे विश्वान्यर्य्यन्नापणैटतबोधीयर्षभेष्विन्द्रा-  
 यक्कन्तिस्रचश्चरन्ति नैपे दधि-यर्ज्ञीयकौञ्चयोः स्य-

प्रिदनीर्वाधीयं धाह्यने कमप्वे संतमा सहीदैर्घ-  
 र्णभायोर्वराणि ज्ञीयस्यावाश्वयोरिकारे च यकारं यु-  
 मोहतागतिमाश्च पदान्तःसन्धी. सलीपो विरते रम-  
 नाश्च येश्श्चापराश्चयेश्च तमताश्चयेश्च एकारादः-  
 काराश्च भोगः । क्वचिदिकारा दोषीकारयो रेकीभावे  
 लोपः ॥ १०

वृमन्तःपदे तालथ मा भवांतःहादो स्तोभ प्रत्यये  
 प्रतिभागं न दाश्च हाश्च प्रप्रीश्च वयममृतञ्जाताश्च  
 वा हुस्माद् महाहस्तीदन्ताश्च होश्च एवञ्जातीयानि न-  
 हिन्वितवद्यौरिन्द्रायाश्च सौभरे चिक्रमृज्यमानायां  
 रथोत्तरवाजजिन्मन्तेष्विव दुहानायां पृश्निमन्तयोगीय-  
 न्तित्रायां च त्वाष्ट्रीसाम्नि कनितिस्त्रोदाचायाश्च सैन्धु-  
 च्छित्तौशनयोः सहिते त्वा भवति वारे सर्वान्तःपदत्रा-  
 भवति खास्वा भवति निमर्त्तगादने विण्वद्वत्यतौ  
 शब्दावर्षासोमायाश्च शाकले वरिवः सनदुन्द्रायां कौत्स  
 पव्यध्वर्यो साके सवीरायां वैश्वामित्रे डिन-द्वितीयायां  
 त्वाश्चिहन्तीत्त्व च त्वाष्ट्रीसाम्नि रभिसुषावसोमायाश्च  
 रैरवे रहस्ये च संकृतिनि गौशृङ्गे स्वर्विदः सुन्नेषु  
 मानस्तरभीभीत्यत्र जमवत्तपेधयांसाश्रित्वासः प्रहिन्वान  
 इति च.पूर्वे त्वनि च गीर्भिरुत्तरे श्रीणा हविषे सत्रा-

ज्यक्षायां भवे जिपवमानस्य जिघ्रतायाञ्च व्यधयद्विभाया  
सुरसेधे हिन्वाभिसोमायान्निभीश्वयोर्दीर्घनिषेधे  
पुरोजित्यां जन्मस्वरधारनाभावस्तालव्यस्यान्तःपदिकस्य  
दीर्घशब्दस्त्वा भवति पुरोजित्यां जन्म स्वरं चा भवति  
सहावाङ्दन्त्रेष शब्द आनस्तेगन्तुमस्वर इत्यत्रावृद्ध  
मध्या भवति जितोयां दीर्घकौञ्चं षि परीतायां माधु-  
च्छदसे वरिवः सन्द्न्द्रायां मार्गीयवे जुरि स्वारं प्रथे  
मदित्तमदिष्टनागि ह्याविष्कृते यित्तवे षिन्नोर्वातो-  
चरे ॥ ११

पदान्तञ्चा भवति मातेनितमन्वायां कमप्रवे धैनां  
वारोत्तरे ज्ञीये स्यन्दते कृगवते चर्षणोरधोत्वर्षिहानवि  
ष्कृते वरिवोधायां तु व्यभीनः कौत्स हृधस्मान् पिवा-  
सुतायां पृष्ठजमवर्त्तयोः पवन्तेभिसोमायां मैधातिथे  
निष्कृतः रुखसाम्नि वृषो अचिक्रायां परीतायां च  
परिस्रवाधिसोम उष्वां वास्त्रे सुष्वाणायां चात्मीगवे  
भिप्रि-ज्ञीये चोक्तः कृपे खासु नैपे विद्द्र इन्द्र-  
सुताया मुष्वाणौवे मधुनिधने त्वचि सुष्वाणायां जि-  
त्ववे पुरोजित्यां प्रते श्रैखण्डिने पातवनेौ संहिते  
शस्रयेतं तन्वामदायां संहिते गविष्टये भिद्द्रा  
च्यावने दिवे त्वाष्ट्रीसाज्ञोः सहस्रधारायां मादेनौ

उवर्तीषति-४ मायां महानाम्नीषभि श्यैत तद्विदास-  
हृतीयायाम् ॥ १.२

॥ इति सप्तमः प्रपाठकः ॥

यकारे च प्रथये वृद्ध मन्तःपदे तालव्य मा भवति  
यच्च यकारसंयुक्तं विकृष्टं स्तौरषेरमित्रमिन्द्रप्र२३४  
यास्त्तौरमा२३ विष्वा२३वा२३४या३ एवं जातोयानि  
न रथ्य महस्तवानायां कण्वधृहति रहस्ये च बृहति  
नर्यः सनो हरीणाया मित्यवैते वाम् च परीताया मन्त्रो  
श्रुताया मुहूर्गव ईयतुस्त्वमिन्द्रप्रवृत्तिं श्वित्यत्नाभी-  
वर्षे पीर्यन्ताभात्थृहितीयायां मामहोयवे पीयत्ववे  
मानइन्द्रायां वारे स्मिग्यं माभेम बृहति हीयमहे  
नेत्तरयोर्वाजीये हृतीयमृतस्य जिह्वायां ना भवति  
सर्वत्र ज्ञीये त्वा भवति पदान्तञ्चा भवति शर्मणि प्रदे-  
ज्ञीये काण्वे रन्तास्वरे च विंशस्तवृद्ध मथा भवति  
प्रियः सनुर्गवतरे सस्मील्ये जिह्वुं न कृत्वञ्चाधिया-  
वृहणाध्यैनौ वारे प्रथमे प्रवस्वदा सुज्ञानेज्ञादा  
शङ्कुनि विष्टया वाचःसाम्नि वयुना वासिष्ठे दिवि  
यज्जायथोत्तमायां बृहति कृत्वस्तौरश्रवसे ॥ १

आधौकारयोरनन्तरः स्वरनीचाद्ययोः प्रत्यययोः

सर्वं वृद्धं मा भवत्यन्तलोपश्च यथा भरनांमैधेधवाहनि-  
ह्वंसाधेषु न कृक्यैतविशीययो रथापवादा रागः  
स्वःपृष्ठनैपातिथरंभेषु संगृभा तून इत्यत्राकूपारः  
दूरद्विराट्सु दैव्ये तकारः परिस्त्रानाया मैधवाहे  
मकारः कार्तयश मन्तयो रापृक्काए सिधे रथी नामैधे  
प्रायश्चित्तेषु पार्थुरश्मे स्वाःखाःकारवजं मीकारः  
सखायः सो शाक्ता मदायं तीनवे वायुमारो भासे  
महाश्चरसि वाशं सूर्यमरो नैपे सुषावसो च्छन्दस-  
द्वैगतयो स्तोत्रो द्वैगते सीमसुज्जाने भुवंनो टते  
पिन्नाबोत्सेध उवर्त्तु न सर्वतां भवति ग्रहणादा  
भवत्यभः स्वासु मैधातिथे नःसू वारे ग्रंथमे प्रियः  
सूनेर्दे गंतगौडवयो रिन्दुगीतमसाध्रयो रकू सिष्ठप्रिये  
यदिन्द्रचित्रायाए शिशुः सर्वत ॥ २ . :

ऋगन्तीयः स्पर्शः प्रथमस्वरो नामि विसर्जनीयश्च  
ना भवति तत्र चौहो शब्दः प्रथमात्कृष्यते सदादौ-  
२३४ द्वियामैः२३४स्तियोरैः२३४ एवं जातीयानि दैव्ये  
त्वमृगन्तोयः स्पर्शः प्रथमस्वरो नामि विसर्जनीयश्च  
ना भवति तत्र चौहो शब्दः प्रथमात्कृष्यते आ३वि-  
तां२ जशां३ई तृणां३मैः२३४आ३हू३महिश्रवस्यवा३र-  
प्रा३युभा३इरै२३४ तुरीयन्वा भवति शिशुन्दे व्ये स-



चमाऽनः समुद्रं रतुरीर्याः औऽहोरहार्दं रहस्ये  
 लृगन्तीयश्चान्तगन्तीयश्च स्पर्शः प्रथमस्वरो नामि वि-  
 सर्जनीयश्च ना भवत्यगन्ते त्वेव प्रथमस्तृष्टस्तोभइलान्द-  
 द्वितीयायां तृतीयादिन्यामौहोवायां चतुर्थस्यो वृद्धः  
 पदान्तः सर्वत्रा भवति यथास्यशिशुमकान्वासिष्ठेषु  
 श्यैतवीरयोश्च तत्रापवादा रागोन्न बृहति मूस्यबु-  
 हति स्वरः प्रत्यबृहत्यपोन्न बृहति जुष्टो यत्राबृहत्यु-  
 ज्जीये पूषा वृहति गावः श्यनेालः सिष्ठ वृषो चायास्ये  
 वृषोऽऽ औहावाइन्द्राचस्वःपेष्ठाऽइन्द्रोऽऽ औहोऽऽ-  
 ऽवर्षं तु न सर्वत्रा भवति ग्रहणादा भवन्तोन्द-  
 स्त्रिकबृहति शिशुः सर्वत्र ॥ ३'

आकारान्तःपदिका ग्रहणादा भवति नमोघो  
 व्यञ्चा ग्नाऽइन्द्रियाऽऽ औहोवाऽ तोमघाऽ औहोवाऽ  
 तालव्यं च द्वितीयात् ऋष्टं तालव्यं हार्दशब्दा-  
 भवत्योस्तोभे प्रथमादौ प्रत्यये श्रियारऽऽ औऽऽ  
 वाहाऽऽ औऽऽ हाऽऽ औऽऽ हाऽऽ हार्दं स्वासु नकारः  
 श्रायन्ताये ट् रनायाऽचोऽ ङ् इदयाऽ औऽऽ वार  
 शुक्कारमकारो च वृष्णिक्सिवास्वरः सर्व मा भवति  
 या-स्तांभे प्रत्यगे वचश्च नादभन्नित्येवाञ्जतीयानि  
 माऽइ त्वेवाऽऽ श्राऽऽ औहोवाऽचाऽनादभाऽऽयाऽ-

३४५ चौहोवा. और्षायवयोस्त्वो भवति कविक्रतेर२३  
या२२४ औहोवा३ कृतावृधो२ या२३४ चौ९ हो२ वा३  
पनिष्टयो३ या२३४ औ२ हो२ वा२ चरेवारेहत्याए सर्व६  
शुधीहवायाए स्तोत्रभ्यश्चौकारोन्तःप्रदिको ग्रहणादा.  
भवत्येकारंहकारयोः प्रत्यययोः कावृयांमवान्सौम-  
सामसु नामंतत्त२३ इ यमधिराए३ दुरितं३ सा२३४  
ए३ सुषा३ हो२३ इ वसाहो२३ श्येर्ना३ नाया२३४  
हा३ अधिगवित्यत्रात्व मौकारे प्रत्यये रधिष्ठे वृषए  
सर्व मा भवत्यौहोस्तीभे सस्वरे. प्रत्यये रेवतीर्ना औहो  
प्राणाशिशो औहो सा औहो नेन्द्रस्ते सोनहितेपृविश्वः  
स्यद्रूज्योतिष्कृणोंचोदेयाः सुरागश्च पुशब्दश्चेत्तान्दे रय-  
न्तरे सर्व मा भवति स्पर्शगभस्तोर्वर्ज्ज मोस्तीभे प्रत्यये-  
श्विनोर्व्रतपूर्वे च तालथ्यए शाक्वर्षभे त्वोष्ठास्पर्शवर्ज  
मे स्तीभे प्रत्यये वृष्णिसर्व मां भवत्यौवाया मनन्तर-  
स्वरनीचाद्यायां प्रत्यये प्रत्यये ॥ ४

ऊहगाने योनिवरस्वराः सोभाभ्यासदिरामा अन-  
भ्यासस्तुतच्छन्दसां विकारा हि प्रत्यक्षंपरोच्चादयस्ते षा  
भुक्तो नियमोऽर्तन्ये भिनयमाश्रयाः. पंकाश्रयाश्च तेषां  
नियमाश्रयाणां यथैतच्चतुर्थमन्द्रातिस्वाय्याणाए. स्वरा-  
णां ह्यन्तरं मुच्च मुच्च मुद्रुहो दीर्घकर्षणस्य वृद्धिर्नन्दायाः

त्स्त्रित्यकर्षणङ्गतिरेकारभावमाप्ताया एकारनिवृत्तिः स्तो-  
 भाणां मुह्यारो गणगीताना मन्ते निधन मेवमादयो  
 नियमाश्रया अथ पर्वाश्रयाः कृत्स्नराणि पर्वाणि  
 परिमिताक्षराणि छन्दसि तेषा मूहे ज्यायसि छन्दसि  
 यथान्याय मावापः कनीयस्यादितो लोपः पर्वणात्  
 सङ्घातानां च शुर्मदाथास्तु चक्षराय उपाद्यस्तेषो  
 वारे लेयप्रस्तावसदृशेष्वविकारो गायन्त्याद्यांयोमा-  
 ष्कारणिधनवदिश्यायाच्च त्रयोर्वयमुत्वावत्काञ्चीवत-  
 उच्चावहव्य आकाराक्षरकाराभ्यास एनातंवाग्नि  
 मिति निधने च नित्य मोत्वङ्गौषुक्ते तूचातायामूनेषा-  
 शब्दाभ्यासात्सम्प्राप्तिः क्रौञ्चे च हिशब्दाभ्यासादत्ते  
 चेकाराभ्यासात्साहीयगूर्दपुत्रेषु चातः परं पर्वविका-  
 रान् वक्षामो यदधिकृतं स्वरतः पर्वं तद्यथा योनि-  
 स्वरविकाराद्यदन्त्यत् पर्वीपद्यते तत्तेनैवोपदेक्ष्याम आम-  
 हीयवमध्यमायां मुग्रं शर्भा ररिमातां सु सामु कम-  
 श्लोत्तरयोरेभिर्वर्षां प्रवदन्त्या मादः पुमध्यमायां तु  
 मरा मन्निष्टुन्नीधरे ध्यमायां सांगायताम्बाञ्जासरोत्प-  
 तिस्र प्राक् प्रह्यसायाः श्यैतधभेदतृतीयायां चानुष्टुप्सु  
 वायिष्यतातयां कावे सामु मिशब्दादकारागम उद्-  
 पन्नायां च वाशब्दे च नित्य मोत्व पोरुह-

न्मने • सोत्रामगायताञ्चास्वरोत्पत्तिश्च • प्राक्कृता-  
याः ॥ ५ •

पृश्निनि तृतीयपादन्तं च दक्षसा पतिः कषी-  
पृतातृतद्विषां पतिः कथुत्तमे चः जमवर्त्ते ध्यमायाए.  
रनेनुमा चदक्षसां पुत्र उत्तरयोर्त्रैमिस्त्वन्नां यंशसु-  
त्तमाया मुतरातयानन्दमयन्दासीमरयोर्ज्वरिसङ्घातं  
कार्मश्रवसोत्तरयोर्जुषे जनासदावृधां मीर्गीयवे मा-  
गायता प्रथमोच्चं प्रसीमपथमाया मस्यन्ताद्ययोश्च  
वृषार्जिगप्रथमायां च घृतनिधने च्छतानुवमित्यत्र  
स्वरागमो हविवंशब्दस्य चोडाव इदं सङ्घातविष्टुसु  
पार्थवाराहवासिष्ठकुत्सरथोभ्यादिषु वाराहे शुचिं वावृ-  
धन्ता तस्तं पार्थं तु वृष्याय हीषीं प्रकृतावूहे द्वितीय  
मनुष्टुसु त्वभु सङ्घात माज्यदोहयौतानं योर्जुहूसङ्घातं  
विच्छदःसु च वैराजर्षभांरिष्टयोर्वाशिष्यमपाठ्योश्च  
दक्षसातद्विषामतं हि मने प्रथमोच्चस्य चतुरक्षरं  
माद्यं पित्रासोमां परं येनिधत्यष्टौः हात्तरयोर्वृष्यौ  
तद्विविद्धां प्रमच्छिदित्पेयायां वाघाङ्गीर्योदेवीं तद्विवि-  
द्धावृषीमहां वात्सप्रे वृधन्तादेः कर्षणेनाप्रस्योकर्षण-  
मूर्तं एकां च द्वितीयमभ्यासश्च चौद्रे तु वृषी प्रथम  
मपरोज्यत एकायाश्च वात्सर्यं साभ्यासं मानवधेः

पूर्वे च दक्षसा पतिः कवीए शुर्मदा चैकचे लुप्तो-  
पान्तां तरे चैतस्या मेवान्यत्र शुर्मदायाः पूर्वस्या  
उपान्तं नौचं प्राश्रत्वाष्ट्रीसान्नीश्व दक्षसा पतिः  
कवीए रन्धीत्तरे शुर्मदातरयोर्जातिः पृष्ठाम् ॥ ६

शने प्रेष्ठंवाजुहोतामयोनावुष्णिञ्चु च कूलीये  
वैश्वामनसे रायीतमासव्यख्यइन्द्रां वशीये गायन्ताः  
याया मर्षाहोतारं व्यी चतुरक्षरं परयोस्त्रक्षरे  
ऽष्टा पञ्चाक्षरे होता क्षरे इत्यन्यत्र मुन्नानि निधन  
मेकिने स्वरं वाचःसाम्नि स्वासूक्तमायाः तृतीय-  
पादादौ च दक्षसीतद्विषां लौशयोः पूर्वे वारवन्ता-  
तुविशुष्मां मुत्तरे चतुर्थीञ्च द्वितीयं इस्वारूपयोश्च तथा  
शार्गे तृतीयाञ्च भवे वारवन्तास्त्रिस्वरुतीये पाद्रे द्वि-  
तीये तूष्णिञ्चु चतुरक्षरा प्रथमा इक्षरे परे पूर्वे  
जनित्रे च दक्षसीतद्विषां मतंत्रस्त्रुतीयायां तवमाण्डव-  
इन्द्रावांसिष्ठे चात्रैव तृतीयाष्टमं वृद्धं प्रथमायाए रुष-  
साम्नि च घृतवत्यां तिष्ठे च योनावावए श्रुध्यमानवयोश्च  
द्वितीयं विशीये ऽक्षयंदिमायां मे प्रत्यये प्रथमोच्चान्तरस्य  
वृद्धिरुतद्विषां एतिः कवीए सीहोये शतां द्वितीयए सङ्ग-  
र्षात्तथा सर्वत्र स न्यायो मन्द्रश्चतुर्थं मयोनावैडकौलि  
च वसुरुचायां मोवाद्यस् लोपो वाशब्दे च नित्य

मोक्षं चित्ते च हाशब्दे मेधे चायो नौ बोधीये वच्यन्ते  
वा मित्यत्र खरागमो मानसश्च रागं देविशीये साव-  
हारोपायावान्तांस्थेद्वौ पूर्वौ हान्तौ ॥ ७

स्त्रीयर्चुं विशीयाद्यायां लडिंविड्डा वृणौमङ्गः  
वैष्णन्दसे समन्ते दिवा नक्ता प्रथमं दान्तास्य वृद्धिर्वि-  
ष्टारपंक्त्यां किमित्तिक्बुहृद्व्ययोवृणी प्रथमं त्वसे  
दैर्घं पराङ्गं निधमाचार्यनियमात् पूर्वांगञ्च वृदेव च  
पूर्वकल्पः शङ्कन्त्यं षस्यध्वमाया मकाराम्यासोमिंवि-  
वाजीयद्वितीयायां चैकारि च नित्यं दीर्घत्वए शङ्कनि  
कौक्ले हिशब्दो वृद्धः प्रकृतावृहे दीर्घः सर्वत्र संयेगी  
रुद्धस्वो वाशे भिद्रीशोन्मशर्मासिंषन्तीकाक्षान्तद्विविड्डां  
प्राणा संवांसु मनाज्ये लुसूतयावायोरनौ मुत्तरयोर्घ-  
ञ्जामहामिन्त्रोत्तरयोश्चतुरक्षरायां विधायां वाजीवा-  
जापिबासोमासु तरे जनित्रे पुरोजित्या मुद्गोद्यायस्य  
दीर्घत्वं दन्वते प्रथमत्रध्ये वपिया मुत्तरयोर्वात्तुरे  
गीशाद्यं प्रथमोच्चं मागायतां द्वितीये च पादे सान्त्वा-  
तस्वाज्योतिर्वरुणसाम्नायान्तयोस्त्रुतीयोच्चोत् परं त-  
मु तृतीयायां तु त्रिंभाक् चतुर्थी मध्ये निधनानि  
निगदवृत्तीनि प्रयोगवस्त्वाध्याये गिरागिरा प्रप्र  
नशंसिषं तस्य षस्त्वन्नुब्राह्मण्यं स्वाध्याये देवता-

नामधेयान्यथ निरुक्तेष्वेके यथादेशं च कालं वृत्तिना  
 मपि प्रवचनविहितः स्वरः स्वाध्याये तथा शाटपाय-  
 निनाम् समानोदकेषूदकस्थोद्धारः पूर्वयोः स्तोत्री-  
 ययोर्महेनायां तूपांश्च पदम्प्रतिस्तोत्रीयं वाजीये  
 सङ्घातैकत्वात्तथाविच्छन्दःसु नित्यवत्सासु त्रिकवृहति  
 च पूर्वैकवादिमंस्तोमसमन्ते च इत्तरं पदम् संक-  
 ष्टत्वात् ॥ ८

प्रतिस्तोत्रीयं मंत्रिकानि निधनानि स्तोभाङ्ग-  
 भूतानि च पूर्वाङ्गभूतानि च तथा हायिकारस्वारः  
 पदानुस्वाराणां मन्तःसामिकानि च स्तोभिकानि सा-  
 मान्तिकानि सामान्ते सर्वत्रान्यत्र गणगीतिभ्यः प्रति-  
 स्तोत्रीयं बोधोयधुराकमप्रवयोः कखवृहति च निधनोः  
 पायान्ताः स्तोत्रीयाः सर्वत्रेडाभिरैडाना मिडान्ताः श्रुधि-  
 यान्ताः श्रुच्चत्समाः पगवयोरभ्यस्तान्ताः पुष्पादरयिष्ठ-  
 योरुगलन्ताः प्रवदुहत्सामराजेष्वेकारान्ताः सुत्रानि स्तो-  
 भश्च सामाद्यः सामान्ते यथात्वायम् रंहस्ये तूद्धारस्तस्य  
 लक्षणेदेशः पूर्वाङ्गभूतस्थानुद्धारस्त्रिकृतस्य सामादा-  
 वाद्यं वचनं यथा भद्रश्रेयोरिष्टशांकार्षभस्वाशिरामर्क-  
 सप्तहैकवृषाणां श्रेयसि तु हाशब्दस्य लिपिर्जन्मा-  
 त्तरसंस्तोभाङ्गीरूपाणां सामान्तेत्यं वचनम् संक-





सामान्ते निधनाय स्तोभाः खर्वत इति निधनमुप-  
 ग्रहाद्विधाहृतिसामानि पञ्च भूर्भुवःख सखम्यरुष  
 इलेताभु पथगनिन्दता प्रस्तावो मन्द्रे सोमस्त्रिरुक्त  
 आनीकयां तृतीयः खर्ज्योतिर्निधन मकृष्टैकाराय यथ  
 सर्वेषा मेष विकारविधिरतेन प्रदेशेनाच्चः सामगणः  
 कल्पयितव्यः कल्पयितव्यः ॥ १०

॥ इति अष्टमः प्रपाठकः ॥

अथ त्रिकल्पा खवउमतिर्मदमदोधनकामे पुरःखामः  
 क्षरयोश्चारङ्गमानदेष्टे डरयिष्ठयोहिलनादीदिहिलर -  
 माताहृष्टमिन्नकौभ्यमषष्ठं नवमात्रं दीर्घं परयो-  
 दौषापंरं नीचैर्गात्रतृतीयदशमं कृष्टं सर्वत्र धर्मविधः  
 र्मणोः पञ्चाक्षंशो धनानि स्तावे हविष उत्तरयोः प्रथमे  
 विराट्पर्यं च देख्यं गोथस्तदादिर्नवे निहोतातिधातु-  
 वारात्वे सो दीर्घे गकारः शने राजन् भवत आसीत्  
 तृतीयाया मृते न र्यानिवन् मध्ये जाप्तु तं प्राक्तयोर्व-  
 लोपश्चात् उच्चैस्तीकारो यजिवाह इहायां भवते यशस्तु-  
 क्षरयो रग्निन्दूसां प्रस्तावे कर्त्तव्यं ह्युदा धा इति गतिः  
 षमे काम्या लव्ना वारे पुना खववहति प्रसोखतरे  
 पुनाभिंसो जग्मे चोत्तरयोः ककुभोर्विकल्पाः ॥ १

अथ भावान् प्रवक्ष्यामः प्रगाणं यैर्विधीयते । आर्चि-  
 क् सौभिकश्चैव पदं विक्रियते तु यैः । आयित्वं  
 प्रकृतिश्चैव वृषञ्चाङ्गु मेघ च । गतागतं च स्तोभानां  
 मुञ्चनीचं तथैव च । सन्धिवत्पदवङ्गान् मत्व माभाक्  
 मेव च । प्रश्लेषाश्चाथ विश्लेषां जहे त्वेव निबन्धत ।  
 कृष्टं च विकृष्टं च व्यञ्जनं लुप्त मतिहृतम् । आभा-  
 वाएश्च विकाराएश्च भावानूहभिलक्षयेत् । एतैर्भात्रैस्तु  
 गायन्ति सर्वाः शाखाः पृथक् पृथक् । पञ्चस्त्रैव तु गायन्ति  
 भूयिष्ठानि स्वरेषु तु । सामानि षट्सु चान्यानि स-  
 म्सु द्वे तु कौथुमाः । जनानां मध्यथा गीतिः पा-  
 दाना मधिकाश्च ये । धोनिदृष्टाः समा न्येन्ये पादा-  
 स्त्वक्षरशः स्मृताः । आयेभावश्च नेदानो दीर्घं यञ्चैव  
 कृष्यते । कर्षणे तु निवर्तेते त्सायिकायां सुपद्वे ।  
 ओभावो दृश्यते साम्नाभावश्च यथाक्रमम् । अम्बुदूहेन  
 सर्वलोहे गीती रहस्यवत् । स्वादिपर्वणि तिस्रायां त-  
 यैवान्येषु सामसु । आर्चिकं निधनं न्याये स्तोभिकं  
 वा यदक्षरम् । कृष्टाकृष्टम्भवेत् स्वार्थं मुक्तोदात्तं वृधे  
 स्वरम् । मणाज्जनएसदङ्गीना माविशगसिदिदेषुजित् ।  
 त्वनाद्वयुश्चियेतिर्भा रयिम्रियमभिष्टिता । जसावस-  
 न्तमन्धर्मा त्सुतउडाः षिभिर्हयन् । न्यायादेतान्यपेतानि

श्वत् एके वृधे स्वरम् । त्रीभासपौष्कलाष्टडरयिष्ठाच्छि-  
द्रधर्मसु । त्रैताश्वव्रतशौक्ताम्बीचतुःषडिडयोस्तथा ।  
षडासे पौष्कले सप्त त्रीण्यष्टडे पृथक् तच्चे । रयिशौक्ते  
तप्तास्तोभे हे हे न्याथिविरोधिनी । अश्वाम्बीगवयोः  
स्तोभधर्माच्छिद्रेषु पञ्चसु ॥ २

तृतीयोच्चान्त्ये हि स्तोभे दोर्धीभवति न वाधे  
स्पर्शान्तं व्यं च कौत्से चेकारोकारौ नञ्चाध्वयवम-  
ध्यमायां सनइन्द्रायां चौद्रे च कृते चापदान्ता  
विशीये च पूर्वे शूष-त्रिणिधने चायास्ये संधे षिणोदनः  
क्वामे च प्रथमकल्धे सर्वासु सौमे स्तावे कार्त्तं च  
पर्यश्विनोर्ब्रह्मोत्तरे शङ्कुन्येकार ऋषभे च शाक्वरे  
संभ्राल्ये लघुविभते त्वे कालिये प्रह्लामहीयवे च  
क्रौञ्चाभिनिधनसप्तहपयउत्तरधर्त्तोद्भासदस्यवेषु वृ-  
ण्यादिर्जितोश्च पूर्वे. संयोगे मपोत्तरे स्तोभे क्रौञ्चे त्व-  
संयोगे नात्राविनेमिः कौक्त्वे हि-शब्दः प्रवशार्गवे  
कृष्टादस्थाङ्कारः स्वार्त्तं च पर्से हाराद् योनौ त्व-  
ञ्चङ्ग-प्रथमायाञ्च द्वितीये सन्तः षं जनिचे रथ-  
न्तरवृषाश्विनोर्ब्रह्मोस्तोभे द्वैर्षं ब्राह्मोत्तरयोश्च थेला-  
न्दतीययोक्तेष्वौकारे स्तावाद्यं कण्वतर वैधने कृष्ट-  
वृहयोर्मध्ये रैवते च वृण्यादिः साहीये च शतायास्ता

वात्सप्रे. द्वितीयान्तः सूर्यस्य ज्ञेभिसामाद्यायां मन्थ-  
स्यान्त्यस्वीधीये मघोना मेके देव्यं दीधीं ल्वा-  
वितदेव्ययोः त्सांशुद्धः स्वरयोः ककुभे दयः श्येवे-  
नद्र दीर्घत्वम् ॥ ३ .

शाक्तेः हीष्यन्तो वृद्धो शतप्लवे वारान्तोषतयश च-  
दन्वते चाविप्रोहतिस्तावाटस्वरान्तो मगशंप्रधाचरन्ते च  
त्वाष्ट्रीसाम्नि ह्यारदिर्योनौ. नवपूर्वपञ्चरुणंसामशोक्त-  
पृश्निषु च नौदे दिरिक्ते शब्दा अरिष्टे च ये वी  
दृत्येतौ शब्दौ समुद्रच्छन्दसि चोत्तार्यां द्वितीयस्थसरप-  
विराजे स्तावाट् गेष्णादिरवृद्धः संत्तारवैश्वज्यो-  
न्निषगोराङ्गिरसेषु नियां तीदे ज्यवे व्यं द्विस्त्रेजयत्रिणि-  
धनसाम्प्रमिकेषु चये सावादिरदेवः सिष्ठे तद्विष्टायां  
अन्तो योनौ रुणसाम्नि चरूपदोः विशीय्यष्टडेष्मिणा-  
ज्ञावो जम्भे च तृतीयो दादि नित्रे च पूर्वं दैवि-  
शीये हारादिरस्थाः शृङ्गं च कौत्से वे सूष्या-त्रतुर्थं  
मेकेना मन्ते राधाया अन्यानि वर्द्धन्ते स्पत्योत्तरयोश्च  
तिरोवत्यां योनिवदायायां मन्तेः सर्वासु घृतनिधना-  
यायां च शूबत्यां मन्तवद्वाल्हे होपरि इं शाविचीनाया  
मांथं सङ्कर्षाद्वितीयं मन्थस्यां वारि. च नौ राहे नौ  
तृतीये. दे वृधन्ता तरुतां श्रीवासिष्ठउतद्विषाम्पतिः

कवीमयन्दासोत्तरयोस्तृतीयाच्चाच्छतोत्पत्तिष्कं ज्ञेजस्वर  
 उपशिक्षायां प्राक् प्रहूयसायाः क्थयायास्ये पुनान इत्यत्र  
 सोमश् सोदे वृद्धे धौ चेन्द्रमच्छायां इच्छराया मादि-  
 म्नीटे मोच्च नीचं दुयच्च पितापवमानामाशिर्वासञ्च  
 जयसितंश्यै तेषु श्रपेव धतुर्थैव वपा मन्द्रे ॥ ४

आदिदोदा • तस्याहदुक्त्वरूपयोद्धितीयङ्कं प्रत्यु-  
 क्रान्तं प्रगतं चाभिगीतं भीशवगतश्यैताजिगीत्तरनि-  
 चस्वारयामैषिरवाश्ववाषाहरवाचःसामहत्कप्रियेष्वगृ-  
 रमिस्त्रिह्वन्नपिच्छाश्चाकोधीयि सर्वमयोनी • नित्ते च  
 हविषे च गीथे न • प्रवाज्युत्तरयोस्त्रेयानिधनयोरभि-  
 हितपौष्कल्यहव्यगारमानवक्त्वीयभरपङ्क्यामसु ॥ ५

अथो स्थंभावा वृष माउ यत्पङ्क्या तस्य वचन म-  
 पदान्तः समानं चनरवे विकल्पे प्रियावसु सिसीदतु  
 भूरितेवसु न सन्निनि निधनत्वात् सोस्यं मधु व्यो-  
 कारः प्रादमध्ये येन्दो बभ्रौ रितर वसा वसूनि दाक्ते  
 यद्दो धिगो स्तावे मिन्द्रवैकार उरा विमौ मधौ मंतौ  
 तस्थौ योनौ चामे ॥ ६

रथन्तरे स्तावाद्य मायायां वृष्वर्षव श्वतरे तुरीयं  
 नीचश्च सर्वत्र च मन्नजातोद्व्यः सुदेवी वः शिषि च त-  
 तीयंचतुर्थे दे दुरितावसतर्षाजाविंतात्तरयोरेन्द्रयाहि-

पूर्वयोः पर्युषु चोपान्ताच्चां पतिगिरांसिते च  
 देवाद्ययोस्तृतीयोच्चान्ता मग्नि मी सिधे चाभिज्ञाभा-  
 ययोः पिबासु चाध्यायां चनदे च स्वास्वाद्ययोर्दिने चतु-  
 र्योच्चानि यथा योनावाद्यं द्वितीययां प्रथमे निघात्पा-  
 न्मन्द्रे तृतीयायां चप्र तृतीययोः कौत्सदृष्टासिक्कणुषा-  
 माशुभार्गवे त्यक्षरोह्वा प्रञ्चाक्षरोच्चाद्ययोर्धौनिवदस्य  
 ध्यमायां मातूनाकूपारे चाध्ययं द्यक्षरोत्तरंयोरच्छिद्रै-  
 कर्चेणी नीचः सेतःशब्दश्चावद्भो विचै प्रत्यये वृद्धः सिते  
 वृण्यन्तः क्षीवते द्वितीयपादान्ता मद्भितीयस्वरः विशीये  
 मीञ्जदिनींचो नावहिल्वन्ति सर्वासु क्षीयक्षीयायां क्षीय-  
 दस्यदुच्चं सक्तष्टं च तृतीयं नौ द्वितीयं मुत्तरयोरेका-  
 क्षरणिधने च जये शता द्वितीयम् ॥ ७

गर्ह उत्तरयोर्हीता यक्षः मृतुष्टः क्षीयवत्तारे  
 प्रस्तावो योनौ प्रत्नसधस्थायां यजिसङ्घातवरपूर्वार्क-  
 पुष्परयिष्ठयोः स्तौभिकं सर्वानुपादु सामान्ते सर्वा-  
 य्यार्चिक मक्तष्टं सर्वत्रायोनौ वैधृते ह नैथे रे च  
 द्वितीयं वाम्ने चायोभौ छिद्रैभिसोमायायां नीचं  
 ध्यभ्यासे क्षीयक्षु विशीवान्तायायां स्तौमान्माभयोरे-  
 क्त्वान्माभां संपूर्यते दिखरे विरास मेके खवबृहति  
 च शतान्माभयोरेक्षोरूपध्याया मुस्थ माउवायां वि-

रामण्डनतृतीयायाः स्वावे भ्यासार्भव मेके रंघोषे  
 वा चिसर्जनौय आम्नायसिद्धत्वाद्दृष्टी-कौञ्चे तृतीये  
 पांदे तृतीये च मभीवर्त्तवद्द्राणतृतीयायां च रक्षाश-  
 तासूत्रे पतिः कवीषु चान्तरस्य चरणाभ्यासः सर्वा-  
 खतृतीये दे कृष्णवृद्धयोर्मध्येगीतं लुप्यते कीर्त्त्य-  
 शःसःसर्पेषु वान्तरयतिशब्दो नीचावरो च यत्क-  
 वासूर्यः शैते हुम्नात्तीयप्रज्जारादिश्च गीशृङ्गे सञ्ज-  
 याभीशववैथश्वसाध्रादिषु लक्षणसिद्धत्वाद् द्रव्यान्तर  
 एकं पदं भवति नमसा लियवच्छायन्तीये मराये  
 ह्युवात्तः कृष्टे वैराजे चायेनौ विनतप्रतिषेधा  
 वैरूपे तु देवतापदं देवतापदं निधने ॥ ८

अग्नस्त्रिणिधन उष्यायां द्वितीयपादद्वितीयः  
 वृत्प्रमातगेवत्वाञ्जानीक्यायामाय नुषि च शोके  
 प्रसरे थाउत्तरे दण्डे सोशब्दे दासे दुक्त्ये भिगीत-  
 क्रमयोरहर्यमेधे हायिस्तोभात् तृतीय मयोनौ कावे  
 गैथषष्ठः सर्वत्राञ्जप्रपञ्चमं प्रोच्ययासाः सप्तमं  
 त्वान्तुतादंप्रयोश्च वैराजे प्रसशब्दाव्रवृद् वैराजे प्रस-  
 शब्दाव्रवृत् ॥ ९ ॥

॥ इति नवमः प्रपाठकः ॥

नकारश्च भवति सन्ध्यगीतः कुवित्सु नायाम्बो-  
 घीय इहवहैवोदासे चोत्तमाया मप्रथमः स्वासु साहीये  
 चोत्तमाया मभिसेत्तमाध्यास्यायाए. सर्वत्र योनौ द्वीडे.  
 धर्ता इक्षरं पर्व दीचोह्वातपरत्वां देकाक्षर मून म  
 धिकपर्वत्वाच्च प्रथमस्वरे प्रत्यये कृष्यति भिप्रि तत्रक्ष-  
 रोणि सर्वासु न. द्वितीयचतुर्थे पादे मराये भ्यास.  
 एकाक्षरस्त्रिरुक्तः : पादान्ते . सर्वत्रापुरोनः . पा-  
 दमध्ये च हिशब्दस्थाभ्यासः प्रेङ्गाया मग्नेदी-  
 दिहि ॥ १

गूहै वृद्धभ्रुवत्यकारोनिप्रत्यये वादौ. हिशब्दः  
 सौभरामहीयवकौल्मानां दासे च कावपर्णाकूलीयान्ना  
 मो भवति साहीये च भिशब्दो नुत् कावे नाध्वतवत्य-  
 पर्णाबोधीये च वाचि सर्व मोभवत्यनुस्थमो वा परा-  
 यान्तो भवत्यन्य तृतीयं कृष्ट. मप्रत्युत्क्रान्त माचतुर्थ-  
 कृष्टन्तु पादान्ते मन्द्रकृष्टंश्चामन्द्रकृष्टञ्च वृधेन्यञ्जनानाए  
 स नित्य इत्येभ्यः . परोभ्यासश्च देव्य . त्रैणांयवयो रं  
 भवति यकारे सांज्ञौ शब्दश्च सर्वत्राकारे बोधीय-  
 निधने च घोषे ॥ २

वीक्रीचप्रमशात्तंसञ्जयभरकृन्दाभिकार्शश्चव्यै-  
 ताकूपविशोविभीशककुभस्वारुपर्शरश्चादिष्वयास्य -



द्विनिकागवकार्तृयवस्त्रावाश्रयक्षेषु च त्रियासर्धसम-  
न्विता न निधनं हीषेषु या सामसु ॥ ३

श्रैते तृतीयादिन्या औहेत्यायाः परं तृतीयं  
नीचं न तदिप्रान्तयोर्बृहति च द्रासां द्वितीये कः  
सर्वत्रादर्शमप्रथमतृतीयद्वयं यीसूचाकूस्तावतृतीयं  
नोचं माद्यायां माद्यं धमायान्तमसे चास्वाद्द्वितीयं  
नेकं सर्वत्र योनौ प्रथमे दे स्तोभे चाक्षरे वकार  
ओ भवत्यन्वे हिष्ठीयगवसितेषु स च पवृत्सर्वत्रान्ता  
सयोनौ वसुच द्वितीयादसुतिथे च तृतीये प्रथमं  
योनौ जये च स्तावान्ता मयोनौ ॥ ४

कौन्डे दे च मात्प्रथमाच्चमसूरासाये च तृतीयाद्  
गेषात् तृतीयं न प्रसोश्रवसञ्चाइन्द्रान्ताज्जनिलोप  
उतद्विषायाश्चायः श्रवायाश्च सेधे तु इत्तम्पीयूषाया  
ग्रह सवाद्यस्य लोपः कृतिनि तृतीये दे सर्वत्र रम्यते-  
नुष्टुप् द्वितीये च प्रभे च प्राक् च तुर्ध्वयोनौ मिति  
च नीचः प्रवे तृतीये पतृषट्ठवरं एकचं दे दसे  
ज्ञीये हारद् योनिवदविशोत्तमायाए सोमाथयो-  
श्चानेयं जास्वरं वृन्नविष्कन्दःसु प्रहूयसाथाश्च इक्षर  
सहजादिस्तनिपापूर्वथोर्यथर्चः सर्वत्रास्तावहारयोर-  
वश्ये हिस्तोमसुं मराप्रमरञ्जीचभेचाकारान्तकान्तम-

योनावुदूहः सर्वत्रामीडे गतेश्च कनीयस्य त्वमोका-  
रश्च ह्रंतलीये त्वं पदगीतस्वसिहत्वात् ॥ ५

शुध्ये स्तावे तुरीये प्यते सर्वत्र संवत्सायां तु तृ-  
तीये गोमन्नश्च मरुता मिन्द्राः स्वासूत्तमायां धसे  
चतुर्थीद्यं योनिवद् जमायाः स्तावे द्वितीवङ्गातं  
रुणसाम्नप्रद्यान्त्रायोस्तु विकारो नामधे धाञ्छाद्ययोः  
पाञ्चुपाभापद्यतेऽथमोच्च प्रभङ्गविमजने च भुलंविः  
स्मिन्कि च वरुपृश्निश्यैतमदंगेषु षष्ठे चैशसूपे शीये  
च नाक्तदृष्टं ह्यशसि कृष्टादेकं ध्यमायां मकारो  
द्वितीयं सम्मिश्रः सुरूपे पदगीत ओष्ठेः हकारे  
च ककारश्चौ भवति मराये द्विमात्रः छेष्वाकारस्त-  
रायेषु प्यते नौ च रुणसाम्न द्वितीयं लान्देथ-  
मोच्च मकुति चतुर्थे तु षष्ठीजास्वरं सर्वत्र कास्पा-  
चयतेनयताविग्नरे च दे दे चाविधाः सर्वत्रायोनौ  
जास्वरं श्वमनसे च द्विषः श्वमनसे च द्विषः ॥ ६

सु षडन्ते रक्षाष्कारणिधनवदुप्रान्त्ये भिराय-  
वान्यत्र सुताद्यलुप्तापञ्चाक्षरश्चाभ्यासः क्रशाः राजे  
ध्यमायां पाष्ठदृष्टाद्यायां चान्त्यस्य तमसे स्वासूत्तरयो-  
र्वृणीत रुति चतुर्क्षरे नाभ्यासे मराये हाञ्चवा द्वितो-  
यात्कृष्टादान्त्वाविधाः सर्वत्र स्वासूत्तमायां प्रथमे

दे मूर्ङ्या एव दन्ताः स्वरोपधोणश्चयोहितिहारी  
स्याद्विकृतपूर्वपदवत्परिष्कृते चागमो लोप्यः ॥ ७

कांस्रश्रवसोत्तरयोऽर्थैः स्वदयासदाद्बुधादस्मत्सुरा-  
क्तोञ्चेसुभानहिवा मूञ्जिवावाजीय उपान्यं कृष्टं स-  
र्वासु त्किवत्सायां चाद्ययोः प्रथमायां चतुर्थं मुत्तरयोः  
पञ्चमं स्वासु वैराजे तृतीये प्रथमान्ते हृङ्. आप्रसं  
नाम्ने द्वितीयायां राधायां तृतीयं मयोनौ कौत्सद-  
ष्टोत्तराकूपारश्रुपश्चिमानवाद्यरुगादैधृलवासिष्ठतिय -  
कुभनित्रेषु चनोतिषङ्गशाकरयेगराम्बान्तो योनौ गि-  
स्त्री वारे रिपिन्नरपि शोके मान्गोभिस्त्रिगिधने सौ-  
हविषरन्ध्रोत्तरयोगीभिलान्दे सान्याद्य मुपान्तर म-  
योनौ ॥ ८

यस्ते हरे च श्येने दानाध्वरां प्रोवाराहञ्जाताक-  
यस्थिरां द्वितीयं कर्षणं धर्त्तासाविसेचससु सफे  
ससदा सत्तरान्देव्यं प्रहृ द्वितीयं मन्यतां वैराजे यो-  
नावन्तयोर्नतं वैश्वमनसे त्वात् स्तोभार्चिकसन्धेर्ग्रह-  
णात्सप्रे द्वितीयान्ते शोक्तमाया माद्य शोके चाद्ययोः  
शोक्ते च सुषष्ठीणाप्रतं रुणासाम्नीलाण्डे हीषीप्रभृत्युडा-  
रोन्ताया मनुद्धारस्तभसोर्के शोनावाद्ययोर्मागायता-  
हातनिघातैः ॥ ८

अथाहगीतीनां प्रस्तावोद्देशः स्तोत्रमः पुरस्ता-  
दन्तर्वा प्रस्तोतुरन्ते चाविधाय उक्तुस्तु काख्वर्षभ-  
प्लवमानजनिवाणाः हुवादिर्वासिष्ठे पद्यो नोदशे  
ह्यक्षरो वा संकृतिः कर्तव्यतयाश्चतुरक्षरो वा सुरूपा-  
जिगैडसाकमश्वानाः सदेवतोवां राजनशास्त्ररर्ष-  
भयोर्हिपाष्यञ्जयनानदगौशृङ्गराविदेवीदासानां का-  
वश्रोतकृत्तर्षभञ्जयास्यैहोत्तारम्भैडसोपक्रमोत्तमा-  
गीयवजराबोधीर्ययहाहिष्ठीयोक्तधषाम्स्वारसामराज-  
पौरुमीठपूर्ववारवन्तीयवार्चतुरयगववैरूपह्रस्वावृहदा-  
पश्चामहादिवाकीर्त्तानां वान्तःकृष्टाद् हृष्णाहिर्वार-  
वन्तीय आत्मणि च महादिवाकीर्त्ये यान्तो दाशः  
स्थत्यभासशाम्दगायत्रांसितानां जारान्ती वीङ्क्ष-  
सिष्ठप्रियपत्राणां वारान्तं वैश्वामिते हाउकारान्तः  
सन्तनिजमदन्यसवीर्त्त कार्त्तमशाकारान्तं त्वाष्ट्रीसमन्तां  
जारान्तिन्दूतोपक्रमाणान्ति एवाविभाग्यानाम् ॥१००॥

यौक्ताश्वैडयास्यत्रैशांकीकोशश्रौष्टोद्देशपुत्रदैर्घतम-  
ससिमानांनिषेधवैराजानां ह्यक्षरोभ्यस्ता ह्यक्षर आजू-  
पैटतंसौहविषवैषांवेत्तुरपयान्तःस्वराणांभ्रग्निन्दूताभ्य-  
स्तामध्यमंक्रौञ्चस्य पादोभ्यस्तो वषडन्ताभ्यस्ताकूपार-  
राजन्नपयसां हादशाक्षराणि च रैवतर्षभे वाञ्छी

बृहत्के सोमसामगार्थवीक्रीञ्चवैरूपौदलगायत्रगौशन-  
 सैश्वर्यक्षितमैधातिथरोहितकूलीयेहवदैर्धवाहेन्द्रस्यंय -  
 शःकण्वबृहत्बैष्टुभश्यावाश्रुवशौक्तवार्षाहरवाजभृत्कः-  
 र्णश्रवसानां चत्वारि द्वे वान्तायोः षट् शङ्खुबार्हतवा-  
 जजितस्वाररोहितकूलीयासितयौक्तसुचाना मष्टावौ-  
 रुक्षयजागतसामसाम्भारेकादशोत्तरे जनित्रे द्वादश  
 हरिश्रीयन्त स्तोत्र उपायन्तःपदनिधनेषु निघनश्च  
 तदङ्गं स्याद् द्विरेकवृषे त्रिर्वा पदस्त्रोभेष्विलान्दाद्ये  
 त्रिरुक्तं यथोक्त मितरेष्वन्ते वा हाक्षरो महानाम्नीषु  
 द्विपदासु प्रस्तावः शाक्तरप्रथमेष्वध्यासपुरीषेषु च  
 यथापदिष्टं कैश्चन्दसेषु गीतं प्रास्ताविकमेव स्याद्य-  
 ग्वादीनामप्रस्ताव्या उत्तराः प्रस्ताव्ये वा सन्तनिनः  
 प्रस्ताव्ये वा सन्तनिनः ॥ १.१ ॥

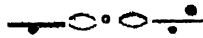
॥ इति दशमः प्रपाठकः ॥

॥ इति सामप्रातिशाख्यं समाप्तम् ॥

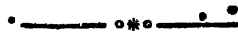
॥ अथ निदानसूत्रम् ॥

( सामवेदीयम् )

॥ ऋषिः प्रोक्तमिदम् ॥



श्रीसत्यव्रतशर्माणा सम्पादितम् ।



कलकत्ता— सत्ययन्त्रतः

( ११-३, चौथी स्तरी )

संन १९५३, श्रीमद्दुर्गाप्रसरकारिण सुश्रितम् ।

\* प्रकाशितस्य एक सन्पादकीन ।



## ॥ अथ निदानसूत्रम् ॥

॥ अथ प्रथमः प्रपाठकः ॥

॥ ॐ ॥ अथातश्छन्दसां विचयं व्याख्यास्यामस्व-  
यश्छन्दःपादा भवन्त्यष्टाक्षर एकादशाक्षरो द्वादशा-  
क्षर इति ननु मिश्रं द्वादशाक्षरो ऽष्टाक्षर आ पञ्चाक्षर-  
ताया प्रति क्रामति विश्वेषां हित इत्या चतुरं-  
क्षरताया इत्येक आ दशाक्षरताया अभि क्रामन्ति  
वयं तदस्य सम्भृतं वस्त्वित्येकादशाक्षर आ नवाक्षर-  
तायाः प्रति क्रामति यदि वा दधि यदि वा नेत्या  
ऽष्टाक्षरताया इत्येक आ पञ्चदशाक्षरताया अभि  
क्रामति सचा दधान मप्रतिष्कृतं अवाप्सि भूरीति  
द्वादशाक्षरनवाक्षरतायाः प्रति क्रामति अनूपे  
गोमान् गोभिरक्षारित्यष्टाक्षरताया इत्येक आ  
षाडशाक्षरताया अभि क्रामति त्रिकर्षणं वृचाणि  
द्विषुसि अ प्रतीत्येकं इत्यार्वित्या ऽष्टादशाक्षरताया  
इत्येक इर्चामि सत्यसत्रं रत्नधा मभि प्रियं मतिं  
कवि मिथया नो वृत्त्यप्रदेशो यच इत्यमक्षर मपी-



सप्तमं प्रादक्ष्यं \*\* सा जागती वृत्तिर्यत्र दीर्घं सा  
 चैष्टुभीः ऋखाक्षरस्योपरिष्ठाद् व्यञ्जनसन्निपाते ऽपि  
 गौरव मंष्टाक्षरद्वादशाक्षरौ लघुवृत्तौ दशाक्षरैकाद-  
 शाक्षरौ गुरुवृत्तौ ब्रह्मेतैः खलु क्वंदासि वर्तन्ते  
 पथ्यान्येवाग्रे सप्त क्षतुंरुत्तराणि व्याख्यास्यामः ॥ १ ॥

चतुर्विंशत्यक्षरा गायत्री त्रिपादा ऽष्टाक्षरपादा-  
 ऽथापि चतुःपादा भवति षडक्षरपादा तद्वापि  
 पञ्चाला उर्दाहरन्ति पेटो पालकं ते पेटो पिपिटकं  
 ते तत्र ककुप् \*\*\*\* परेहीत्यथ्यष्टाविंशत्यक्षरो-  
 ऽपि त्रिपादैः पूर्वावष्टाक्षरवृत्तमो द्वादशाक्षरो ऽथ  
 यत्र मध्ये द्वादशाक्षरः सा ककुक् यत्र प्रथमः सा पुर-  
 उष्णिगथापि चत्वारः सप्ताक्षरा इत्युदाहरन्ति नदं  
 व ओदतीना मिति द्वाविंशदक्षरानुष्टुप् चतुःपादा  
 ऽष्टाक्षरपादा ऽथापि त्रिपादा भवति मध्ये ऽष्टाक्षरो  
 ऽभितो द्वादशाक्षरौ ताः पिपीलिकमध्येत्याचक्षते  
 मध्यज्योतिरिति बहुजा एवं पादो यतो यतः परि-  
 क्रामेत् तज्ज्योतिषः मेतां ब्रवीत् पुरतो ज्योतिर्मध्ये-  
 ज्योतिरुपरिष्ठाज्ज्योतिरिति षट्त्रिंशदक्षरा  
 ब्रह्मती चतुःपादैव चस्यो ऽष्टाक्षरां द्वादशस्य उपोत्तमो  
 द्वादशाक्षरस्य पथ्येत्याचक्षते ऽपि च स्कन्धोपीवे-

त्यथ यच्च प्रथमो द्वादशाक्षरः सा पुरस्ताद्बृहती यत्र  
 द्वितीयः सोरोबृहती सैव न्यङ्कुसारिणीः यत्रो-  
 त्तमः सोपरिष्टद्बृहत्यथापि चत्वारो नवाक्षरा  
 इत्युदाहरन्त्युपेदं सुप पर्वनं मित्यथापि चिपदेन  
 भवति द्वादशाक्षरपादाः प्रत्नं पीयूषं पूष्यं यदुक्थ्यं  
 मिति तां सतोबृहत्याचक्षते बार्हतं मपि त्वचः  
 सतोबृहत्य इत्वेवाचक्षते यथा वयं च त्वा सुतावन्त  
 इति ॥ २ ॥

चत्वारिंशदक्षरां पङ्क्तिः पञ्चपदा ऽष्टाक्षरप्रदा  
 अथापि चतुःपादा भवति द्वादशाक्षरो ऽष्टाक्षर इति  
 व्यत्यासं तां सिद्धीं विष्टारपङ्क्तिरित्याचक्षते पर्यासे  
 विपरीता सैवाथ यच्च पूर्वावष्टाक्षरावुत्तरौ द्वादशा-  
 क्षरौ सा ऽऽस्तारपङ्क्तिराल्लभेर्णाविवैती पङ्क्तिपादावि-  
 त्यथ यच्च पूर्वो द्वादशाक्षरावुत्तरावष्टाक्षरौ सा प्रस्ता-  
 रपङ्क्तिः प्रस्तीर्णाविवैती पङ्क्तिपादावित्यथ यत्र मध्ये  
 ऽष्टाक्षरौ भवत्यभितो द्वादशाक्षरौ सःस्तारपङ्क्तिः  
 सःस्तीर्णाविवैती पङ्क्तिपादावित्यथ यत्र मध्ये द्वाद-  
 शाक्षरौ भवत्यभितो ऽष्टाक्षरौ सा विष्टारपङ्क्ति-  
 विमृष्ट्यादाविवैती पङ्क्तिपादाविति तद्यच्च सिद्धा  
 विष्टारपङ्क्तिर्बृहत्या वा ककुभो बोक्षरा भवति

तां प्रगाथां इत्याचक्षते अनुष्टुभा अपि प्रगाथा  
 भवन्तीत्येके अनुष्टुप् प्रथमा गायत्र्यावुत्तरे यथा  
 पुरो जिती वो अन्वस आ त्वा रथं यथोतये विशो  
 विशो वो अतिथिं पान्त मा वो अन्वस इत्य-  
 याक्षरपङ्क्ति र्यां विंशत्यक्षरास्यतुःपदा पञ्चाक्षरा  
 द्विपदा एनां एके प्रतिजाज्ञते पञ्चविंशत्यक्षरा  
 भवति पञ्चपदा पञ्चाक्षरपादा तां पदप्रक्रिरित्या-  
 चक्षते ॥ ३ ॥

चतुश्चत्वारिंशदक्षरां त्रिष्टुप् चतुःपदैका-  
 दशाक्षरपादा अथ यचोत्तमो ऽष्टाक्षरस्तां ज्योति-  
 श्मतीत्याचक्षते पञ्चपदापि भवति चत्वारो ऽष्टा-  
 क्षरा एको द्वादशाक्षरो ऽष्टाचत्वारिंशदक्षरा जगती  
 चतुःपदैव द्वादशाक्षरपादा ऽथ यचोत्तमो ऽष्टाक्षर-  
 स्तां ज्योतिष्मतीत्येवाचक्षते पञ्चपदापि भवति  
 चयोऽष्टाक्षरा द्वौ द्वादशाक्षरौ सं एष समासश्चाष्ट-  
 पदतायाः क्रमते सैषैव सती विष्टारपङ्क्तेः प्रवृद्ध-  
 पदा षट्पदापि भवत्यष्टाक्षरपादा इमे यदिन्द्र  
 रोदसी इत्येतानि खलु सप्त चतुरक्षराणि छन्दांसि  
 व्याख्यातानि प्रथमं प्रथमं त्वेवात्र न्यार्यं पथ्यं  
 विद्यादेतासां मेव द्विपदा भवन्ति यत्र द्वादशा-

क्षरौ सा गायत्र्या यत्र द्वादशाक्षराष्टाक्षरौ सा  
 विष्टारपङ्क्तिर्यत्रैकादशाक्षरौ सा चिष्टुभो यत्र  
 द्वादशाक्षरौ सा जयत्र्या विषमपादा शम्पदं प्र व  
 इन्द्राय विश्वस्येमा नु क मिति । नवाक्षरचतुर्दशा-  
 क्षरावैकादशाक्षरत्रयोदशाक्षरौ षडक्षरद्वादशाक्षरावे-  
 कादशाक्षराष्टाक्षरौ दशाक्षरपादा विराज एकपदा  
 प्रभृतयश्चतुःपदाभ्य एकादशाक्षरपादा अपि चिपदा  
 विराज इतिवाच्यते यथाग्निन्नर इति यथाग्निन्नर  
 इति ॥ ४ ॥

ऊर्ध्वं जगत्या अतिच्छन्दसौ द्वायञ्चाशदक्षर-  
 प्रभृतयश्चतुर्क्षरा द्वौ संग्रामवर्गौ चतुःशतंक्षराणां  
 परार्ध्या तासां नामधेयानि विधृतिः शक्यष्टि-  
 रत्यष्टिर्महनासरित्सभ्येति पूर्वस्य सिन्धुः सलिल  
 मम्भो गहन मर्षव आपः समुद्र इत्युत्तरस्य तान्ये-  
 तानि सर्वाणि कृतच्छन्दांसि भवन्त्यथ प्राञ्चि  
 गायत्र्याः पञ्चकृतच्छन्दांसि कृतिश्चतुरक्षरा प्रक-  
 तिरष्टाक्षरा संकृतिर्द्वादशाक्षरा विकृतिः षोडशा-  
 क्षरा अभिकृतिर्विंशत्यक्षरैः तासां मन्तरप्यन्तस्था  
 छन्दांसि द्वाविंशत्यक्षरप्रभृतयश्चतुर्क्षरास्त्रयः संग्र-  
 मर्गा द्विशताक्षराणां परार्ध्या तासां नामधेयानि

द्वाट् संघाट् विराट् खराट् स्वधशिनी परमेष्ठा-  
 न्तस्थेति पथ्यस्य प्रत्नं चामृतं च वृषा च जीवं च  
 तप्तं च रसश्च शुक्लं मितुत्तराण्यश्चाम्भश्चाप्यञ्चाम्बु  
 वार्याप उदकं मितुत्तरस्य तान्येतानि सर्वाणि  
 द्वापरं च्छन्दांसि भवन्त्यथ प्राञ्चि द्वाविंशत्य-  
 क्षरायाः पञ्चानूस्था क्छन्दांसि द्वाक्षरप्रभृतीनि  
 त्वत्तुत्तराणि हर्षीका सर्षीका स्रर्षीका सर्वमात्रा  
 विराट्कामेति ॥ ५ ॥

अथ निचृद्भुरिजो या एकेनाक्षरेणोनास्ता निचृतो  
 ऽथ या एकेन ज्यायस्यक्षा भुरिजस्तान्येतानि सर्वाणि  
 च्छिताकलिच्छन्दांसि भवन्ति तद्यत् चैतास्थानं ता  
 निचृतो ऽथ यत् कलिस्थानं ता भुरिजश्चतुष्टयेन क्छन्दो  
 जिज्ञासेत षडैरक्षरैर्वृत्त्या स्थानेनेति तेषा मेकै-  
 क्क्षिन् वृत्तिशेषेणैव जिर्जतनदृष्टस्य क्छन्दसो नोन-  
 वृत्तेर्वर्गं मस्तीति धियादथ देवासुरक्छन्दांश्चेकाक्षर-  
 प्रभृतीन्येको नूराणि रोहीणि देवक्छन्दांसि सप्ता-  
 क्षरा जगत्सृष्टाक्षरातिक्छन्दाः पञ्च दशाक्षरप्रभृतीन्ये-  
 कावाञ्चि प्रत्यवरोहीण्यासुरक्छन्दांसि नषाक्षरा  
 जगत्सृष्टाक्षरैवातिक्छन्दाः अथ प्रजापतेक्छन्दांश्छष्टा-  
 क्षरप्रभृतीनि चतुर्दशराणि रोहिणी द्वाविंशदक्षर

जगती. षट्त्रिंशदक्षरातिच्छन्दोस्तेषां. चयः चयु  
समेत्येकैकमृषिच्छन्दो भवति तदेष श्लोकः कोस्वित्  
स्वरो द्वाच्च मेकध्विगुणतिः सप्त भूर्वानु भवति  
कर्मभिः पञ्चाशतः प्रञ्च नपुंसकानां द्वे चाधिके  
विभ्रति त्र्यक्षराणा मिति देवासुराणां छन्दोभि-  
रत्स्रनश्च प्रजापतिः सप्तवर्गञ्चकारैकं सप्तमीणां  
यच्चोठवै यस्य कस्य च छन्दसः सम्पदं कश्चिदि-  
च्छति चतुर्थं तस्य सङ्गाय तावतीराहरेष्टको यद्व-  
तच्छन्द आहरेद्यदस्य सम्पदे. चतुर्थं तस्य सङ्गाय  
विद्यात् तास्तावतीर्ऋचः ॥ ६ ॥

अथावसानान्येकपदर द्विपदानां मन्ततो. ऽवसानं  
त्रिपदाप्रभृतीनां द्वावुक्ता शेषं मरह षट्पदाभ्यो  
भवति तत् त्रिपदाया मन्ततो ऽवसानं दुहीयन्मिष-  
धितय इति तथा चतुष्पदायां त्रिष्टुभी वयो वयः शय  
मिति तथा पञ्चपदायां ग्रन्मे यम् मित्यथापि द्वौ द्वां-  
वयैकं मभि न इडा यूथस्य मातेत्यथापि द्वावुक्ता ऽयैक  
मथ द्वौ तव त्यं नयं नृतम मिति षट्पदायां द्वयोर्द्वयो-  
रवसान मुभे यदिन्द्रं रोदसी इत्यथापि त्रिष्वपि  
वृक्षपुराणवदिति सप्तपदायां त्रीनुक्ता द्वौ द्वावग्नि-  
होतारं मन्ये दाखन्त मित्यथापि द्वौ द्वावथ त्रीन्

प्रोष्वच्चैः पुरो रथ मित्यष्टपदाप्रभृतीनां न प्रज्ञात  
 संवसानं विद्यते, तत्र मध्य एव पदस्य त्रावस्येदर्या-  
 भिप्रायणान् न्यूनीभावो अर्थाभिप्रायणा दतिरेको  
 ऽथ यच्चैतदक्षर मागच्छति ता मिति वा तदुतोनीक-  
 रीतेऽकाक्षरौभाविभो वा सन्वयस्तदयेतौ श्लोकौ भव-  
 तश्चरत्परि सन्धिजातानि यैश्छन्दो ऋसते न च  
 प्रश्निष्ट मभिनिहितं स्त्रिप्र मथ प्रद्रुत मेतानि सन्धि-  
 जातानि मिमाजश्छन्दो अक्षरैर्द्वैधं कुर्यात् सम्पूर्णेन  
 पूर्णे किञ्चन नेङ्गयेदिति छन्दसां विचयं जानन् यः  
 शरीरादिमुच्यते छन्दसा मेति सालोक्य माचन्यायं  
 श्रुतेः श्रिय मिति ॥७॥

अथातः स्तोमान् व्याख्यात्यामस्तेष्वर्था भवन्ति  
 युग्मतश्चायुज्जश्च तेषां विवेक एकप्रभृतयो हुत्तरा  
 अयुजो द्विकप्रभृतयो हुत्तरा युग्मत उभये सन्तो इया  
 भवन्ति समाश्च विषमाश्च यत्त्रैधं व्युत्थमानः समाः  
 पर्याया भवन्ति स समो ऽतोऽन्ये विषमा विषमो इया  
 भवन्त्येकाधिश्यो द्वाधिश्यश्च य एकया समता  
 मति आर्मति स एकाधिश्योयो द्वाभ्यां स द्वाधिश्य-  
 स्त्रिकप्रभृतयः षडुत्तरास्तेषां समाः पर्यायज्ञप्रयत्नयः  
 पर्यायाः पर्यायास्त्रिविष्टत्याः प्रथमे पर्याये प्रथमा तुच-

भागां ता मेव पर्यायभागेत्याचक्षते मध्यमावाप  
 उत्तमां परिचरा मध्यमा तृचभांगोत्तमावाप उत्तमे  
 पर्याये प्रथेमावापो मध्यमां परिचरोत्तमा तृचभागां  
 सैषा विष्टावकृतिरेकविंशतिप्रभृतिषु साधिष्ठमुप-  
 पद्यते एकप्रभृतयः षडुत्तरा एकाधिश्चया स्तेषां  
 पर्यायकृतिः समंपर्यायैर्विषमा वर्त्तते पर्याया हि ते  
 भवन्ति यावभितः समा वयुजौ तयोः पर्यायान्त्व-  
 हरेत्पूर्वस्यैकमुत्तरस्य द्वाविति युग्मताञ्च द्वाधिश्चयानां  
 युग्मायुक्पर्यायाणां सता मेष एव न्यायो ऽथ युक्-  
 पर्यायाणां पूर्वस्य द्वावुत्तरस्यैकमिति यथा युग्मतां  
 द्वाधिश्चयानां युक्पर्यायाणां मेव मयुजां मेकाधि-  
 श्चयानां युग्मायुक्पर्यायाणां पञ्चप्रभृतयः षडुत्तरा  
 द्वाधिश्चयास्तेषां पर्यायकृतिः समंपर्यायैर्विषमा वर्त्तते  
 पर्याया हि ते भवन्ति यावभितः समावयुजौ तयोः  
 पर्यायान्त्वहरेत्पूर्वस्य द्वावुत्तरस्यैकमिति युग्मतां  
 चैकाधिश्चयानां युग्मायुक्पर्यायाणां सता मेष एव  
 न्यायो ऽथ युक्पर्यायाणां पूर्वस्यैकमुत्तरस्य द्वाविति  
 यथा युग्मतां मेकाधिश्चयानां युक्पर्यायाणां मेव  
 युजां द्वाधिश्चयानां युग्मायुक्पर्यायाणां मित्य-  
 युजः ॥ ८ ॥



अथ युग्मास्तौ द्विकप्रभृतयः षडुत्तरा द्वाधि-  
 शयाश्चतुष्कप्रभृतयः षडुत्तरा एकाधिशयाः षट्कः  
 प्रभृतयः षडुत्तराः ममास्तेषां पर्यायकृतिर्याख्याताय  
 धानां विवेक एकप्रभृतयश्चतुरुत्तराः कलिस्तोमा-  
 स्त्रिकप्रभृतयश्चतुरुत्तरास्त्रेतास्तोमा द्विकप्रभृतयश्च-  
 तुरुत्तराद्वापरस्तोमाश्चतुष्कप्रभृतयश्चतुरुत्तरा कृत-  
 स्तोमा अथ येषु सप्तविषमाणां विवेक एकप्रभृतयो  
 द्वादशोत्तरा एकाधिशयाः कलिस्तोमाः षड्विप्रभृतयो  
 द्वादशोत्तरा द्वाधिशयाः कलिस्तोमास्त्रिवृत्प्रभृतयो  
 द्वादशोत्तराः समाः कलिस्तोमास्त्रिकप्रभृतयो द्वाद-  
 शोत्तराः समास्त्रितास्तोमाः सप्तिप्रभृतयो द्वादशो-  
 त्तरा एकाधिशयास्त्रेतास्तोमा एकादशप्रभृतयो द्वाद-  
 शोत्तरा द्वाधिशयास्त्रेतास्तोमा द्विकप्रभृतयो द्वाद-  
 शोत्तरा द्वाधिशयाद्वापरस्तोमाः षष्ठप्रभृतयो द्वाद-  
 शोत्तराः समाद्वापरस्तोमा दशप्रभृतयो द्वादशो-  
 त्तरा एकाधिशयाद्वापरस्तोमाश्चतुष्कप्रभृतयो द्वाद-  
 शोत्तरा एकाधिशयाः कृतस्तोमा षष्टिप्रभृतयो  
 द्वादशोत्तरा द्वाधिशयाः कृतस्तोमा द्वादशप्रभृतयो  
 द्वादशोत्तराः समाः कृतस्तोमा अथोऽन्त एषां  
 तज्जातीयविवेक एकप्रभृतयश्चात्तरा उभयेषा

मेकाधिगया. द्विकप्रभृतयोस्तुत्तरा उभयेषां इधि-  
शयास्त्रिकप्रभृतयस्तुत्तरा उभयेषां समा व्यत्यासं  
वर्तते ॥ ६ ॥

अथ कतमे सप्तच्छन्दसां स्त्रीमा इति त्रिवृत्य-  
च्छदशः सप्तदश एकविंशः पञ्चविंशस्त्रिंशवस्त्रय-  
स्त्रिंश. इत्यथ खल्वाह सांनुष्टुप् चतुस्तेराणि.  
छन्दांस्तृजन्तः षडुत्तरान् स्त्रीमान् सप्तदश इति  
सप्तदशात् त्रिकं मद्भृत्य पुरस्तात्. त्रिवृती निदध्या-  
स्तुर्दशानि शिष्यन्ते ताः पञ्चविंश उपदध्यादेव  
मेतान् षडुत्तरान् ब्रुवते अथ कतमे भागस्त्रीमां-  
इति त्रिवृत्यच्छदशः सप्तदश एकविंशेति त्रिकृतः  
पथ्यायां विवदत उद्यती पथ्या मन्थ इति गौतमः  
सा हि पथ्या स्थाने तिष्ठतीति परिवर्तिनी मिति  
धानञ्जयः सा हि विष्टुती न्यायतरेण कता भव-  
तीत्यथाप्यवर्षुकस्तु पञ्चान्यो भवतीत्युदित्यां निन्दा  
मवादीदित्यथ यत्र संहयमाणाः पर्याया ग्रथास्थानं  
भवन्ति ता मविदुष्टपर्यायेत्याचक्षते. न्यायथास्थानं  
तां विदुष्टपर्यायेत्यथ यत्र समा खाद्यता पर्यायाणां  
भवन्ति तां समास मित्याचक्षते अथ यत्र प्रत्यवरो-  
हिणस्तेनान्याय इत्याचक्षते प्रत्यवरुठपर्यायेति

चाश यत्र सञ्स्तुतस्य स्तोमस्य प्रथमा भूयिष्ठभाग्  
 भवति तां ब्रह्मायतनीयेत्याचक्षतेऽथ यत्र मध्यमा  
 तां क्षत्रायतनीयेति च गर्भिणीति चाथ यत्रोत्तमा  
 तां विडायतनीयेति स खलु पर्यायान्त्वञ्छरन्  
 मस्त्रान्यायं विडायतनीयाभिः प्रथमां पर्यायं विदोष  
 मिति वैज्यन्त्वमांत्वमा सेव चिकीर्षदिति ॥ १० ॥

अथातो विधिशेषान् व्याख्येत्सामो नोपवसथ्ये  
 ऽहनि न समामनेरन्वागाथायिनी प्रयुञ्जतेत्यथैताः  
 कुशा उपकल्पयत औदुम्बरीर्वा पालाशीर्वा यो  
 कान्यो यज्ञियो वृक्षः प्रादेशमाचीः कुशपृष्ठास्त्वक्तः  
 समा मज्जतो ऽहुष्ठपर्वपृथुमाचीः प्रज्ञातायाः कार-  
 यित्वा गन्धैः प्रलिप्य सर्पिष्वा सचेषु खादिरी दीर्घ-  
 सचेषु वैष्टुतेन वसनेन परिवेष्टौदुम्बरी मध्याधि-  
 क्तसंयेत् क्षीमञ्छाणं कार्पासं मिति वसत्रविकल्पा  
 औदुम्बरी मुष्टुत्थेन विसृजेदाच्छदिषोऽध्यूहनाह्वो-  
 भूत एतद् मुष्टुत्थैः कुशैर्वेष्टयित्वेवंजातीयैर्नैवोद्-  
 दशेन वसनेन प्रदक्षिणं परिवेष्टा स्पृष्टो ऽनपसृत  
 उद्गायेदिति गौतमो धिष्णोऽयं भवति न धिष्णा  
 मासादयेदिति धृष्ट मपश्येतेति धानञ्जय्यो पशु-  
 चकार्येयं भवतीति सा च औदुम्बरी मङ्गलायैवोभुक्त

उदकंसेवौ बहुपलाशो नातीवाफलो भवतीति प्राक्-  
समामं वोदकसमामं वोपरिदश माभ्तीर्य प्रस्तोता  
विष्टतीविदध्यादुदग्याभिः प्रथमं विष्टाव प्राक्स्त्थं  
प्रत्यक्स्त्थं मित्येके पश्चात्प्रथमस्य विष्टावस्य प्राग्-  
याभिरुदकस्त्थं द्वितीयं प्रत्यंग्याभिरित्येके पश्चा-  
दवास्य मध्यमस्य विष्टावस्योदग्याभिः प्रत्यक्स्त्थं  
तृतीयं मेतयावृताः पर्यायान्विदध्यादुदग्याभिः प्रथम  
मनुपूर्वं मुदौचंः संहतान् विष्टावपर्यायान् विद-  
ध्यादितरेष्वितरेण शिरसि कुशानु विधीयेरन्नित्येकं  
पराक्तादावर्त्यङ्गभावा तु विधीयेरन्नेतेन सुस्त्रिभक्तः  
स्त्रिवृत उद्यत्या विधाने विप्रतिपद्यते यथैकः पर्याय  
इत्येके तत्रभागा स्थानेषु पर्यायाणां पर्यायाः स्युरि-  
त्येक एतेनैकजातोया व्याख्याना व्याख्याताः ॥११॥

अथातः सामान्तानां चत्वारो भागाः समांखाः  
खरो निधन मिडा वांक्तयानि सूर्याग्नेयानि  
तानि गायत्रतया वायंयानि वा यानि निधनं-  
वन्द्यैन्द्राणि तानि जैष्टुभतया यान्यैन्द्रानि वैश्वदे-  
वानि तानि जागततया यानि वाङ्मिधनानि प्राजा-  
पत्यानि तान्यानुष्टुभतया इव खल्वस्य सर्वशंखन्द-  
सो निधनार्थेय मक्तं भवत्यथेमी खरो सन्तौ निध-

नेषु समांशयिते इकारोकारौ कश्च हेतोरिति  
 यान्यन्यानि खराण्यसिद्धोपायानि तानि भवन्त्यत्र  
 एव तेषां मध्यं न्ववस्वरणं भवत्यथैवौ सिद्धोपायौ  
 भवतो वागुपायावित्यथापि मिधनस्थानेषु युज्येते  
 स्वरैश्च सनि ए ततो निधनवादश्चैनयोर्भवति तं वैरा-  
 जस्य निधने नादृहन्नित्यथाप्येनौ वाक्यविलोपे-  
 वाहुरिहेति वेद मिति वा सदो विलुप्त ईकार ऊर्ध्व  
 मिति वा विपरीतिना सदो विलुप्त ऊकारस्ताव-  
 प्यनुनासिक्यौ ब्रुवते वाक्यविलोपत्वादेव तद्यत्र  
 यंचैते सामान्ता भवन्ति खरो निधन मिडेति तदे-  
 तान् प्रकृष्टा इत्याचक्षते ऽथ यत्र समानसामान्ते  
 सन्निपततस्तज्जर्मौत्याचक्षते समानपृष्ठे वौ अहनी  
 समानभक्तिनी च खलु नानात्वप्रक्रान्तेष्वेवाजामि  
 भवत्यथ यत्र समान मभ्यस्यते साम वरऽहर्वा जाम्येव  
 तद्भवति सामान्यान्नसामान्तेर्नानहः संयुजामि  
 भवति ॥१२॥

अथैतान्द्वन्द्वरेण व्यवयन्त्यजामिकरणानि भवन्ति  
 सोमो वषट्कारः शस्त्रं संवयवो ऽथ यत्रान्तरेण  
 सामानि गीयथातिष्कन्दसं परिमाद इति तत्तत्राय  
 यचैक सावर्त्तिस्थानं नवना सामानि समवयन्ति यथा

व्रत एकसाम्नस्थानमिति तत्तत्राय यत्र समाप्तान्ता  
 व्यत्यस्यन्ते यथा विश्वजिति तत्तत्राय यत्र समान-  
 सामान्ते सन्निपत्तनो मध्ये निधनेन तत्र यत्रो मध्ये  
 निधनेनात्रैः पृथगिति तत्तत्र यत्रो न विद्यतेऽर्थः  
 सन्निपतति त मर्थो ऽजामिकरण इति तत्तत्र सर्वत्र  
 रथन्तरसन्निपाते जामि भवति तथा बृहत्सन्निपाते  
 तत्रैतान्यजामिकरणानि सौभरं प्रब्रुवत्यो बृहदि-  
 त्येषोऽभिव्याहारो वार्कजम्नं बृहन्निधनानीत्युक्तं  
 रथन्तरसन्निपातेषु कश्चरथन्तरं सभि भवति रथ-  
 न्तरनिधनानीति बृहत्सन्निपातेष्वेतावता खलु  
 जामि कस्य् समन्वीचेत नदस्तिस्त्रिंशत्साम्बृन्दो  
 देवता नास्तौति नास्तीति धानञ्जयः किं स्वरस्य  
 हन्दो भविष्यति का देवता मित्ताक्षरो भवतीत्याश्व-  
 तरगौतमै यश्चन्दस्याया मृचि गीयते तदस्य हन्दो  
 यद्देवत्यायाः सास्य देवता तद्भिजानीमो यत्स्वयोन्यः  
 स्वयोन्यापंचिततरं भवत्यथाप्यहैन्द्र्य ऋत्न ऐन्द्र्य  
 सामेति द्रजेति ॥ १३ ॥

॥ इति निदानसूत्रे प्रथमः प्रपाठकः ॥

॥ अथ द्वितीयः प्रपाठकः ॥

ऋषिकृतस्वूहाः अनृषिकृत इति वै खल्व्वाहु-  
 र्यद्याविरता एकेहनाद्गो एव मार्षेयो भवत्यथा-  
 प्यूह इत्येव माचक्षते कर्त्तव्य इतीवैतद्भवत्यथापि  
 याज्ञिकविप्रतिषद्यन्ते यज्ञार्थः खलु पुनरूहो भव-  
 त्यथापि वृत्तार्योनिरिति गायन्ति किमु खलु स्मृतौ  
 वृत्त्यां किं योन्यां भविष्यतीत्यथापि नात्यन्तं गायन्ति  
 तत्र यद्गीतं कर्त्तव्यं नित्येवापन्ना भवत्यथापन्नसं-  
 हृतस्य संहिता मवेक्ष्यो गायन्ति तदेतत्स्मृतौ  
 नोपपद्येत इत्युषिकृत इत्यपरं कथं मेव बह्वनार्षं यज्ञे  
 क्रियेता स्यापि बृहदुत्तरयोर्नाभिपश्यामीति भरद्वाज  
 स्तपोऽतप्यत रथन्तरं मुत्तरयोरिति वसिष्ठो विद्य-  
 मानस्यैवोहस्याभिवदो भवत्यनेनैव वासिष्ठभरद्वाज  
 मित्याचक्षते स्याप्याचार्यस्मृतीनां वक्ता त मतिशङ्क-  
 मानः सर्वत्रैवातिशङ्केद्वा स्यापि योनिप्रतिषेधादस्मृतं  
 मन्येतापि नूनं समर्चं मेवाप यज्ञं मस्मृतं मन्येत  
 यज्ञे ह्यपि विप्रतिषिद्धा भवन्तीति यदेतदद्यापि रता  
 एवोहनादित्यगीतोह्वास्ते भवन्त्यप्रमाणं मु. खल्वन-  
 धीयानो यदेतद्गृह इत्येव माचक्षते इति भवन्त्ययथार्थं

माम्भेयानि यदेतद्याज्ञिका विप्रतिपद्यन्ते इत्याचार्य-  
 कल्पे याज्ञिका विप्रतिपद्यन्ते स एव विस्मृतः स्याद्  
 ब्राह्मणविप्रतिपत्यां च यज्ञ मथ स्मृतं मन्येत यदेतद्दृष्टि-  
 र्योनिरिति गायत्रीति कन्दखाद्यौर्ध्वका वृत्तियोनी  
 कल्पन्ते भवन्ति वापेत्य वृत्तियोनिभ्यां माचार्य-  
 गीतानि यथा पार्थ-लौश-शांगीणि यज्ञतन्नात्यन्तं  
 गायन्तीति कल्पा अपानत्यन्ता भवन्ति यथावाप-  
 वानेकाहः श्रीस्तोमा उत्तरा तरतिरनुब्राह्मणिना  
 मिति यदेतदन्यसंहितस्य संहिता मवेच्य गाय-  
 न्तीति कन्दस्यपि वृत्तिज्ञोऽन्यसंहितस्य संहिता  
 मवेच्य गायेत्र तावता कन्दोऽस्मृतं मन्येताथापि य  
 अवादादस्मृतं मन्येतापि नूनं संमर्त्ता मेवापि न  
 चयीविद्या मस्मृतां मन्येत सांख्येक उपवद-  
 न्तीति ॥ १ ॥

एकर्चदृष्टीनि स्मितं सामानीश्च तददृष्टीनीत्ये-  
 कर्चदृष्टीनीति शाण्डिल्यायनसंहिजानीमश्वान्दसे-  
 नाध्यायेनैकर्चान् भूयिष्ठांश्चकन्दाखधौमहेऽद्यपि नो  
 यज्ञ उपदृष्टिः प्राह यदज्ञं धृषणोत्येकर्चान्कर्तुं मथा-  
 प्येकैः स्तोमरन्त्वस्मिमत एकर्चान् ह त्रय मर्ध्वैमहे  
 नाध्वयवह्मचा उत्तरे अग्निजानतीति सच मदृष्टीनीति



धानञ्चय्य लक्षिजानीमश्छान्दसेनैवाध्यायेनैकज्ञानधी-  
 त्य तृच मुत्तम मधीमहे निदर्शनार्थी वै स भवत्येव  
 मेवातः प्रागित्यथापि नायञ्च एवोपदृष्टिः प्रश्नो काम  
 एवाचैकज्ञान् करीत्यथापि न षट्चः पूर्वा स्तोत्रियाणि  
 प्राहुर्द्वितीयायां चाथ तृतीयायां चर्चि लक्षणं  
 भवति यथाशेषं तत्साम भवतीति यथाकूपार मैषिर-  
 म्प्रीरुहन्मनं मित्यथापि छिन्न मिव वा एतद्वदे-  
 कर्वा इति ब्राह्मणवादः परिचष्टे ऽथापि जनुषै-  
 कर्षी नामाधीमहे तृचदृष्टित्वां देवाथाप्यधुनैव देव-  
 तादे यस्तुचापत्रं हन्दीऽभुजगावु त्वचदृष्टीनीति शा-  
 शिडल्योऽथ्यनृषिर्थादेवतान्यपेकाहे यथासामोमे-  
 तान्यपेकक्षां यथाभूयिष्ठान्यपि द्वयोर्यथातीषज्ञा  
 अपि तिसृषु यथा सन्तनीत्यपि चतसृषु यथेलान्द  
 मर्पि भूयसीषु यथा पुरुषत्रतं कश्यपत्रत मादित्यत्रत  
 मित्यपि त्वेतान्येके सामभुक्तानौत्याचक्षत इत्या-  
 चक्षत इति ॥ २ ॥

अथ इयानि सामानीति प्रदिशन्ति यान्यपुर-  
 स्तात्स्तोभानि पदनिधनानि लघुगीतानि तानि  
 रायन्तराणि यानि पुरस्ताहस्तोभानि बह्विर्णिधनानि  
 गुरुगीतानि (उपान्तपञ्चम्यां पक्षिपञ्चकं गच्छन्तं तानि

रायन्तराणि यानि गुरुगीतीनि बार्हतानीति \* )  
 (तानि बार्हतानि अथान्यतरतो रायन्तराणि चान्य-  
 तरतो बार्हतानि चापुरस्तात्स्तोभानि च बहिर्धि-  
 धनानि च पुरस्तात्स्तीम्भानि च पदनिधनान्यथोभ-  
 यतो बार्हतानि च पुरस्तात्स्तोभानि च पदनिध-  
 नानि गुरुगीतीनि पुरस्तात्स्तोभानि बहिर्धि-  
 नानि लघुगीतीन्येतानि विजिज्ञासितेति शाखिड-  
 ल्यायनो यानि लघुगीतीनि रायन्तराणि यानि गुरु-  
 गीतीनि बार्हतान्यपि यान्युदात्तगीतीनि तानि राय-  
 न्तराणि यान्यनुदात्तगीतीनि तानि बार्हतानीति † )  
 कुल्पो नैव यज्ञकामा व्याख्याता यथैतत् स्वर्गकामो  
 यज्ञः पशुकामो यज्ञः प्रजापतिकामो यज्ञोऽभिचर-  
 णीय इत्यप्याहुर्द्वयार्थ एव खल्वयं भवति खल्वयं  
 श्रेण्योऽन्येर्था अन्वययन्तीत्याप्तकामास्त्रिहेवाश्रूयन्ताः  
 अनाप्तकामा इत्यनाप्तकामा इति वै खल्वाहुः को  
 ह्याप्तकामस्य सुत्या कः प्रत्यर्थी भवित्यतीत्यथाप्याहुः  
 शकंदज्ञाप्तकामा एव भवन्ति तं व्यथवादेन जानीमो  
 यस्मै देवाः कामयन्ते तस्मै समर्चयन्ति क्रुतोऽनाप्त-  
 कामाः समर्चयिष्यन्ति तथापीहैव पश्याम आप्तका-

\* एतावीनयः कः पुस्तके नास्ति ।

† एतावीनयः च पुस्तके नास्ति ।

मतराणां मनमप्तकामैरीप्सां यथैतद्राज्ञा मित्य-  
थाप्राप्त्यंके मवदायाह विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहेति  
कुतो ऽनाप्तकामान् प्रति भविष्यदित्यथाप्राहुर्हि-  
स्थानां देवा भवन्ति न्यून मन्यत् स्थानं सम्पूर्णं  
मन्यद्यदु ह न्यूनं तद्वितः प्रत्नैः प्रति विभवन्ति यदु  
सम्पूर्णं तं मन्वाशिश्वः समर्द्धयन्तीति ॥३॥

कथं मु खल्वङ्गकामा इति विद्यन्त इत्येके श्रुति-  
प्रमाणा अङ्गे श्रूयभाणां कथं क्रतौ प्रसीयामेत्यथापि  
योऽङ्गकामं क्रतुं कामघेतापि नूनं सोऽङ्गे दुष्टे सर्व  
मेवापि क्रतुं दुष्टं मन्येताथापि पृष्ठहोमं सर्वेषां  
स्त्रीत्राणां मन्येतेति क्रतुकाम इत्यपरं क्रतुः खल्व-  
धिक्रतोऽङ्गैश्च कामैश्च भवत्यथापि न आर्षयकल्पो  
दर्शयति यज्जातीयान् प्रतिपद्भवति तज्जातीयानि  
द्रव्याणि कल्पयति यथा ज्योमामयाविनो वर्षकामस्य  
जग्या माविधित्समानस्येत्यथापि योऽङ्गकामं मन्ये-  
तापि नूनं स तदेवाङ्गं कृत्वा विरमेत्तस्मिन् हि स  
कामो भवतीति यद्वितदङ्गदोषात् क्रतुदोष इति  
विषये खलु दोषो भवति न तथाकामो यद्वितत्पृष्ठ-  
होमं सर्वेषां स्त्रीत्राणां मन्येतेति भवन्ति वा  
अङ्गधर्मा यथा युग्यस्य घासदान मन्त्रस्योपाञ्चन

मिति संभूय. तु खल्वर्थात्साधयन्तीति कथं मु ब्रह्म-  
साम्नि कामागान मिति यथाकामी कामाना  
मित्येक. आहुरंधादेशे. किं मन्वद्याथाकाम्यात्प्रती-  
यामीथायि रदखंब्राह्मणे दर्शयति यथाकामी  
कामाना मिति क्रतुकाम इत्यपरं मेषोऽधिकृतोऽथापि  
यः क्रतुकामेऽधिकृते सत्यन्यं कामं मुक्त्वा दयेदपि  
नूनं स पशुना तृतीयसवने चरन्तीत्यन्यं पशु मुक्त्वा-  
दयेदो मिति सति समायादपेयादादा वै त मेव  
प्रतीयाद्यः प्रतिसवने सदृशं व्याहन्याद्यदेतदेनादेश  
इत्यरदेशजातिरेषा भवति. तदादधिकारो यदेतद्-  
इत्यब्राह्मणे दर्शयतीति सर्वाभिप्राय एतदुपपद्यते  
कथं मु खल्वर्थाः समृद्धिरुपसरणानीति सर्वस्तीचे-  
ष्वित्येक आहु स्तोत्रशब्देन च न हि स्तावयत्यपि चाह  
निर्देशे किमर्थो ऽवयवं प्रतीयादिति ब्रह्मसाम्नीत्यपरं  
ब्रह्मसाम ह्याशीर्दान मित्यथापि य स्तोत्रशब्दानां-  
स्तोत्रे प्रतीयादाशीःशब्दादपि सं नाब्रह्मसाम्नि  
प्रत्येतु महतीति ॥ ४ ॥

अथतो यज्ञस्थानान्यपि च सन्धियज्ञा इत्या-  
चक्षते . ऽहोरात्राभीज्याग्निहोत्रं सायमाहुत्या  
रात्रि मभियजते सा यत्र क्व च पुरोदयाद्भूयैत खे

स्थाने जुहोतीति विद्यात्प्रातराहुत्याहः सा यत्र क्व  
 च पुरास्तमवाहूयेत स्त्रे स्थाने जुहोतीति विद्यात्  
 ते तु यदादौ निदधाति प्राप्तश्च होमकालोऽपि चैनं  
 कृत्स्ने अहोरात्रे अभीष्टे भवत इति पूर्वपक्षापरपक्षा-  
 भीज्या \* दर्शपूर्णमासौ पूर्णमासेन हविषा ऽपरपक्ष  
 मभियजते सं यत्र क्व च पुरा ऽऽमावास्या यजेत स्त्रे  
 स्थाने यजत इति विद्यादामावास्येत् पूर्वपक्षे स यत्र  
 क्व च पुरा \* पूर्णमास्या यजेत स्त्रे स्थाने यजत इति  
 विद्यात्तौ तु यदादौ निदधाति प्राप्तश्च यज्ञकालो-  
 ऽपि † वैधं कृत्स्नौ पक्षावभीष्टौ भवत इत्यु-  
 क्ताभीष्टा चतुर्मासान्योषधिभक्ताभीज्याययणेष्टी  
 उदगयन-दक्षिणावनयोः पशुसमस्तस्य संवत्सरस्या-  
 भीज्या सुत्येति तत्खल्वेतत्सकृत्प्रयुक्त माहिताग्नेः  
 कुशलेन यदग्निहोत्रं दर्शपूर्णमासौ चतुर्मासान्या-  
 ग्रयणेष्टी (पशु सोम इति वै. ३) सत्रं य देवं न करोति  
 ग्लायदिज्याः स्वादित्यननुभूतिजः स्वादिति सिद्धि-  
 दर्शी वा स्वान्मलिपूरोडाशेनाप्नोत्याज्येन च पयसा  
 च प्राणीत्यथाप्याहुरादित्यश्च वावं खलु चन्द्रमाग्नि-

\* क-पुस्तकेऽत्र पूर्वपक्षपर च संबन्धेव "भीष्टा"-इति पाठः ।

† "होमकालोऽपि"-इति क । ४ † नास्त्येकेऽत्रः क-पुस्तके ।

श्वेमानि पर्वाणि कुरुष्वी ययोरिय मभीज्या भवती-  
त्यग्निहोत्रेषादित्यस्येज्या मभियजते दर्शपूर्णमासा-  
भ्यां चन्द्रमसस्तद्ग्नहोत्रे च सायमाहुत्या प्रयुज्यते  
प्रातराहुत्याभितिष्ठते सोऽपि नः हुत्वा प्रातराहुति  
मन्यं यज्ञं मुपक्रमते कथं पूर्वस्मिन्ननिष्ठितेऽन्यं मुप-  
क्रामेतेति पौर्णमासेन हविषा दर्शपौर्णमासौ प्रयु-  
ज्यते आमावासेन निस्तिष्ठते सोऽपि नानिष्टामा-  
वासेन हविषान्यं यज्ञं मुपक्रमते कथं पूर्वस्मिन्ननि-  
ष्ठितेऽन्यं मुपक्रामेतेति ॥ ५ ॥

तदपरपरपक्षे प्रायणं परिजिहीर्षितं भवति रात्रौ  
वा यज्ञविलोपो विसृष्टितेऽपि च नो हतमस एव  
स्तम इयादिति तच्चेदपरपक्षे प्रायणं शङ्केत यावत्यो  
ऽपरपक्षस्यातिशिष्टा रात्रयः स्युस्तासां सायं प्रात-  
राहुतीः प्रतिसङ्ग्राय हुत्वा प्रत्याहुत्या ऽऽमावासेन  
हविषेष्टा समापयेयुरेव मयज्ञविलोप इति पूर्वपक्षे  
चेद्वाग्री प्रातराहुति मेव पुरस्तादाहवनीयं हरेयुः  
पश्चाद्गार्हपत्यं दक्षिणातो दक्षिणाग्निं मध्ये शरीरं तं  
दक्षिणाग्निरसं चित्वाहितं वज्रपात्रैः कल्पये-  
दध्वर्युः शिरसि कपालानि युज्यात्समन्तधानं च  
चमसं ललाटे प्राशित्रहृदयं नासिकयोः सूची कर्ण-

यीर्वाद्ये हिरस्ता मवधांयानुस्तरणिक्या गोर्वप्यामुखं  
 प्रच्छाद्यं तत्राग्निहोत्रहवणीं तिरश्चीं दक्षिणे पाणौ  
 जुहूँसस्य उपभृतं पांश्वयोः स्फोटोपवेशौ तथा  
 वृक्चौ यथास्व मुरसिंध्रुवा मुदरं पात्री मुपस्थे कृष्णा-  
 जिन मन्तरेणं सकृदिनी शम्या दृषदुपले यच्च नादे-  
 द्यामो दक्षिणस्योषस्य दक्षिणत उलूखल मनुसकृधि  
 मुसंलं पादयोः शकटशूर्पे सर्वाण्युत्तानान्यासे-  
 चनवंन्ति पृषदाज्येन पूरयित्वाथेन यथास्थानं युग-  
 पदग्निभिरुपसृजेत्सार्वस्थानिकं परिमाणं स एष  
 यंज्ञायुधी यजमानः स्वर्गं लोक मेतिति ब्राह्मणं  
 भवत्याजिं जुहोति पुत्रो भ्रमताथो वाग्यो यच्चियो  
 ब्राह्मणस्त्वस्मात्त्व मधिजातो ऽसि त्वदयं जायतः  
 पुनरसौ स्वर्गाय लोकाय स्वाहेति शान्तिर्वाम  
 देव्यं शान्तिर्वामदेव्यम् ॥ ६ ॥

एकहिङ्गारं बृहिष्पवमानं साम्नश्चैकत्वा-  
 ष्णन्दसश्चेत्याचार्याः साम्ना मनु नानात्त्र मुत्तरयोः  
 पवमानयोः पृथग्बिङ्गारा भवन्ति पर्यायाणा मनु  
 नानात्वं मावत्तिष्ठ सन्धौ \* विप्रतिपद्यन्त एकहि-  
 ङ्गार इत्येके यथा बृहिष्पवमानं त्रिराचार्या हिं

कुर्वन्ति देवताऽना मनु नानात्वं विश्वजितो वा अपि  
 वादेवमं बहिष्पवमान मथात्र सकृद्विङ्करोति सकृद्वि-  
 कृततोत्पादत्वाद् बहिष्पवमानस्येत्याचार्या अथ यज्ञा-  
 यज्ञीयानुरूपे कथं हिङ्कार इति यथोत्तरयोः पव-  
 मानयोरित्येके ऽस्ति हि सामनानात्वंग्रथा वा विश्व-  
 जिति नानादेवति सति सकृद्विङ्करोति सकृद्विङ्कृतो-  
 त्पादत्वाद्बहिष्पवमानस्य तथा वा ह्यादित्यथ योनौ  
 यज्ञं तन्वानस्य कथन्तरे तस्या रयन्तरवर्णं स्याता  
 मित्युभे यथास्थानं स्याता मिति बहिष्पवसाने  
 चोत्फन्ने भवती न चापि निवर्त्तयत्यथापि यथा  
 गायत्रं यज्ञायज्ञीयधर्मान् प्रतिपदेत् एव अपि यज्ञा-  
 दज्ञीयं गायत्रधर्मान् प्रतिपदेत् गायत्रस्य बहि-  
 ष्ववमान एष धर्मो भवतीत्यपरं वान्वत्र गायत्रान्न  
 चान्यत्र बहिष्पवमानादिति ॥ ७ ॥

गायत्रस्य कास्याः सामान्ता यावन्निगदं सुरि-  
 त्प्रके खरस्येमे प्रदयास्नायम भवन्ति तत्र किमर्थोऽवयवं  
 प्रतीयादित्यथाप्येव मन्व्याहृतं गन्धत्रं भवत्यथापि  
 याथमकाम्यस्यात्रिप्रयोगस्तत्कुशल मथाप्येष प्रयोगाणां  
 धर्मो येन प्रकृतमस्तेन समाप्तिरिति बहिष्पवमान  
 इत्यपरं मेतद्गायत्रस्य विकारस्थानं मथापेत्तदुरात्



सामान्तां नांतियन्त्यथापेव मजामि भवत्यथापेवं  
 यथाभूयिष्ठं भवतीति प्रथमाया मिति वार्षगण्य  
 एतद्बहिष्पवमानत्याशीर्द्धानि मद्र हिं काम्याः प्रति-  
 पदो भवन्तीति रथन्तरवर्णाया मित्यपर मेषा च  
 विकृततमापि च पथ्यप्रक्रमं पथ्यावसानं भविष्य-  
 तीति ब्रह्मण आज्य इत्यपरं ब्रह्मसाम ह्याशीर्द्धानि  
 मित्युत्तरयोः पवमानयोरित्यपर मेतदेतेषां सामा-  
 न्तानां स्थान मथापेव रोहो भवत्यपि वान्ताख्यानि  
 कर्माणीति यदेतज्जाभीत्यंजामि वा कल्पयेतार्थो-  
 ऽजामिकरण इति वापि तितिचेतानृच्येके गायत्रं  
 गायन्ति कस्य हेतोरिति स्मरीयैतत्स्थानं कुर्वते स न  
 इत्यं केवलः स्मरो गौतो भविष्यतीति तथा प्रक्षुदि-  
 प्रस्तुत्यानृचि गायन्तः प्रतिहारस्य चानुत्साद मनु  
 प्रायाञ्च निधनस्य चानिधनं स्वरित्वा निधन मत्सी-  
 देदित्याचार्याः ॥ ८ ॥

अथ बृहद्रथन्तरस्योर्वदति तयोः समानं निधन  
 मासीत्क्षिन्नातिष्ठेता मिति किन्निधन मित्यह-  
 रिति \* कौत्सो ऽकार मेवान्ये सकारोपसृष्टं सकार  
 मेवाह मनयोः समानं निधनं मन्य इति धानञ्जयः

स ह्यभयत्र दृश्यत इति निधनब्राह्मण. मेवाह सिदं  
मन्य इति. वार्षगण्यो हे खल्विमे पृष्ठे भवत एकं मृष्ट-  
स्थानं तस्मिन्नखार्द्ध्या महं पूर्वताया इत्यथैतेषु पुरस्ता-  
ज्जपेषु वा इत्येतदुद्वेद्येदित्येक अहुवेतानि ममसा-  
न्वोच्योद्गायेदिति हि भवतीत्यन्यदिदं तेभ्यो भवतीति  
यथाधीत मित्याचार्या न चोदासो विज्ञायते ऽपि-  
वार्यः खार्द्धयं क मथापि संशये लोपो लोपाद्यायंतर  
इति कथं पवसानगतयोरिति कर्त्तव्या इत्येके साम-  
संयुक्ता हि भवन्तर्कर्त्तव्या इत्यपरं स्थानसंयुक्ता हि  
भवन्त्यथापि पर्वमानसामनी प्रधानभूते भवत इत्यं-  
थापि यद्यु हेतान्पुरस्तात्स्तोत्रादकरिष्यद् द्विवेता-  
वुन्येः सामभिरभविष्यन् यद् हानन्तरान्तस्तोत्रव्यवांयो  
.ऽभविष्यदेतेन वामदेव्ययज्ञायज्ञीये व्याख्याते बृहतः  
स्तोत्रोत्तमायां ब्राह्मणोक्तानां रोहाणा मुत्तमं न  
रोहेदित्याचार्या अप्रथमायैव ह्याह बृहतो रोहां वृशी  
महो मद्रायिषु वान्तौ पूर्वी वृक्षे निधनोपाये च  
द्वितीय मक्षरं वृक्षे तृतीयं सुदुपरिष्ठांस्तोत्रस्य  
प्रत्यवरोहेदेव हि युवान मृत्विजं मनूचानं  
प्रेत माहुर्वृहदेन मप्रत्यवरूढं परावधीदिति ॥ ६ ॥

अथ यज्ञायज्ञीयस्तोत्रयोर्द्वाचरेण प्रमौति यथा

बृहद्रथन्तरयोस्तदपि शंखवृद्धाङ्गाणं भवति तान्नि ह  
 वा एतानि द्वादशाक्षरप्रस्तावानि ककुबुत्तराणि  
 सामानि बृहद्रथन्तरे यज्ञायज्ञीयं चेत्यथ खल्वाह  
 यदग्निष्टोमयाज्यन्त माह तदन्वस्य यज्ञः स्रवत्य-  
 क्षरेणान्ततः प्रतिष्ठाप्य मिति कि मन्तं कि मक्षर  
 मिति देख्येत्तदक्षरं वकारादि राकारो गकारान्त  
 इत्येक आहुस्तस्य गकारलोपं ब्राह्मणं क्षिप्रतीति  
 तदपित मुपेयुरिव कृत्स्नेनाक्षरेण यज्ञस्य छिद्र मपि  
 दधातीथार्चिक मेवैतदक्षर मित्यपर मेतस्मिन्हा-  
 ऽक्षरशब्दात्प्रतियस्यष्टाक्षरेण प्रथमायां ऋचः प्रस्तौ-  
 ति द्वादशेणोत्तरयोश्चतुरक्षरेण बृहतः प्रतिहर-  
 तीति न स्तौभिकैः सहोपपद्यते तस्माद्यदेवान्त्य  
 मक्षरं तन्निधनं मुपेयुर्यथाधीत मित्याचार्याः स्वर-  
 तन्वदण्यक्षराणि भवन्ति स्वरान्ततां मेवाक्षरस्यैसद्  
 ब्राह्मणं मेव संवक्ष्य दित्यथापि बङ्गलैषां कन्दसी  
 वृत्तिर्वाङ्निधनानि चैनान्याचक्षते वागुपायानीति  
 च यदंतर्दार्चिक भक्षर मिति यथाधिकार मेत-  
 इवति स्तौभिकस्यैहाधिकारी किञ्चायते ऽथापि  
 मंशये प्रकृतिसविध मेव प्रत्येतव्य मिति प्रत्येतव्य  
 मिति ॥ १० ॥

अथ द्रव्यसमुद्देशो रायन्तराणि रथन्तरपृष्ठेऽभि-  
रूपाणि बार्हतानि बृहत्पृष्ठेषूभयविधावुभयसाम्नि प्रव-  
दितानि रथन्तरपृष्ठे ऊर्ध्वेऽङ्गानि बृहत्पृष्ठे ऽथ यत्र रथ-  
न्तरपृष्ठे बार्हतानि क्रियेरन् बृहद्देश्या तानि विद्या-  
देव मेव बृहत्पृष्ठेन रायन्तराणि स्वयोनौनि सर्वत्रा-  
भिरूपतराण्यस्त्रयोनिभ्यः सामन्याक्तं ऋचाम साम-  
न्याभ्यश्छान्दसी प्रथमाः सामन्या इत्यावच्छते ऽथ या  
यज्ञप्रवादाः सन्नप्रवादाः क्रतुप्रवादाः सोमप्रवादाः  
सर्वत्र ता अभिरूपाः शुक्रवत्यो ऽप्रवादाः पूर्वयोः पव-  
मानयोर्हीतप्रवाद् हविषप्रवाद् सभिहवहीतुरा-  
ज्यं हूतवन्ति पीतवन्ति तप्तवन्त्युत्तराणि मरुत्वत्यो  
द्युप्रवादा ऋतवत्यो माध्यन्दिनीयाः परिवत्यः कोश-  
वत्यो निषस्रवत्योमाध्यन्दिनीया गायत्र्यां वातस्त्रि-  
ष्टुभि वा मरुत्वच्चिकीर्षितं भवत्यथ खल्वाह त्रौणि  
सवनानां छिद्राणि तानि तेनापि धीयन्त इति कत-  
मानि छिद्राणीति पक्मानां च देवतास्तुतयास्तानि  
छिद्राणीत्यथाप्यन्तरेण पवमानांश्चावर्त्तानि च  
हविर्भिः प्रचरन्ति तानि छिद्राणीति वामदेव्यं मैत्रा-  
वणसाम सर्वत्राभिरूपं तदपचारे तल्लिङ्गीयाश्चिकी-  
र्षेदयैतानि तात्तीयसवनिकानि रूपणि स्वाद्मत्यो

मधुमत्यो मध्वस्वत्यो विश्ववत्यश्चित्तवत्यः सूर्यवत्यो  
 दक्षिणवदं योनिदूतवच्च वृद्धवच्चोक्त्येष्वथ नामध-  
 स्तोत्रीये वदति ककुप् प्रथमा योषिणामथ पुर उषिण-  
 गनुष्टुविति ककुक्वेव प्रथमोषिण गिद्वतीया पुरउषिणक्  
 वृती िदाशतयेनाध्यायेन तां बह्वृचा अधीयते युञ्जन्ति  
 हरी इभिर्मुख गाथयोरौ रथ उरुयुगे इन्द्रवांहा वचो  
 युजेति तत्र वयं चत्वार्यक्षराण्युपाहरामः स्वर्विदेति  
 सानुष्टुब् भवत्युपगिष्टाज्जगोतिः ॥ ११ ॥

कथं मु षोडशी ज्योतिष्टोम इत्यकर्त्तव्य इति  
 शौचिवृत्तिरन्तरितेः ब्राह्मणसंमाम्नायेनेति कर्त्तव्य  
 इति गीतम् षोडशिनः स्तोत्रे देयेति हि भवतीत्य-  
 थापि न आर्षयकल्पो दर्शयति द्वादशाहस्य षोडशि-  
 मन्तावतिरात्रां वित्यथापि मन्त्रवर्णा भवति त्रीणि  
 ज्योत्स्नीषि सचते स षोडशीति त्रिरुपेतो द्वाद-  
 शां हो भवतीति वैतङ्गवति संस्था मप्यस्यैतां विद्यमानां  
 मन्य इति गीतमं एवं च रहस्यब्राह्मणे दर्शयत्यथ  
 तेन षोडशिसंस्थेन यजेतेति नाहास्येषा संस्था  
 विद्यत इति शाण्डिल्यो ऽतिरात्रे तु कृताकृतो-  
 भवत्येव मिवाध्वर्युब्राह्मणं भवति नोक्त्यो ग्राह्यो \*

\* 'नोपग्राह्यो' - इति क ।

ऽतिरात्रो याज्ञं इति सन्धी इमौ भवत इति धान-  
 च्छय्य उदयसन्धिरसावस्तमयसन्धिरपेत्साद्यः कश्चाः  
 तिरात्रः षोडशिमाभेव स कुशलेनेति तस्यैता ऋचः  
 पञ्चविंशत्यक्षराः पञ्चपदाः पञ्चाक्षरपादा नवो-  
 पसर्गाक्षराश्चादितस्त्रयाणां पादानां त्रीणि त्रीण्यु-  
 पसर्गाक्षराणि प्रादान्तेषु भवन्ति ते ऽष्टाक्षराः  
 सम्पद्यन्ते पञ्चाक्षरावुत्तरो दशाक्षरावेकस्ताञ्चतु-  
 स्त्रिंशदक्षराः सम्पद्यन्ते न स्या उयसृष्टाः कनो विद्या  
 मे तीर्थं ह्येव वय मधीमहे तथा बहुचा इति  
 ब्राह्मणेनेत्याहुश्चतुस्त्रिंशदक्षराः सस्तुतो भवती-  
 त्यनुपसृष्टः कनीयानितीवैतद्भवत्यथाप्युधीयमाणेषूप-  
 सर्गाक्षरेषु नैवार्यो हीयते न वृत्तिदुष्यत्यथापि शश-  
 देना अनुपसृष्टा आयर्वणिका अधीयतेऽथापि जिह्वा-  
 रिताना मुपसर्गाक्षराणां वदत्ये वा एता एकपदा  
 स्त्राक्षरा विष्णोश्छन्दो भुरितुः शक्यं इति चाक्षरा  
 ह्यपि भुरिजो भवन्तीति तच्चैतद्गौरिवीतं गायत्री  
 सामाभ्यासानुष्टुभ् रात्रा समानभागः समान-  
 भक्षो भवन्तीति स यद्गौरिवीत्य इमा ऋचो ऽस्वयोनिं  
 कुर्वत ऋषिः स्वयोनिर्भविष्यन्तीत्येतेन सौभरना-  
 र्मेधे व्याख्याते रेवतीषु च वारवन्तीयम् ॥ १२ ॥

ज्योतिष्टोमीत्याद मेव षोडशिनः ब्रुवते तत्र  
 चाख्यं ब्राह्मणं मधीयते ऽथापि कथं मेवं कृत्स्नं कर्मा-  
 कृतं मन्तारयिष्यदिति चतुर्थीत्यादं वयं तत्र चाख्यं  
 ब्राह्मणं मधीमहे ऽथाप्याहैकविंशायतनो वा एष  
 यत्षोडशीति तदैकविंश महर्भवत्यथा प्याह दाश-  
 तय्य ऋचो चातुर्ऋतरं छन्दःक्रमे वा एवंविध मुत्प-  
 द्यते न प्रथमकृतमवित्यङ्गो भवतीः राजेरित्यङ्गो  
 भवतीत्याहुरहवर्जं चास्य हविर्भवत्यथापि नियुक्त-  
 धर्मा भवति निर्वह्वाञ्छिल्पवांग्रहवान्यथाहरेव  
 राजेरित्यपरं राज्ञा समाप्तभागः समानमङ्गो भव-  
 तोति तौ खल्विमौ द्वौ सन्धौ भवतस्तयोरसौ नित्यः  
 कृताकृतोऽयं कस्य हेतोरिति साङ्गं तेन राज्ञिः  
 पञ्चदशविधतां लभते कृतं पञ्चदशविध महारित्य-  
 थापि न त मुद्ध्य पराक् स्तोत्रं राज्ञावलप्स्यत  
 कृतान्यत्रैन्द्रायथापि विद्यते तस्य कालस्य स्तुति-  
 नास्य विद्यते कस्मान्तु तस्य न विद्यते पराडेतस्यां  
 विलाया सादित्यो भवति नोपरां च स्तुतिर्विद्यत  
 उदाहरन्ति त्वेव परां च स्तुतिं हिरण्यसूपे भवत्य-  
 स्यादेवः प्रति दोषं गृणान इत्यथ खल्वाहं शक्नोरीषु  
 षोडशिना स्तुधीतेति तत्रैके महानाम्नीः प्रति-

यन्त्येताः शक्तयो भवन्तीत्येतास्त्वेव शक्तीप्रवादी भव-  
तीत्यपरः मेताश्चाधिकृता भवन्तीत्योद्धारो विशेषः  
श्रुतः सर्वसामसुः आदित्वेके स वाचा रथन्तरेण  
निर्वर्त्तत यथा त्रयस्त्रिंशं तृतीयसवन मित्यभि-  
परीत्य प्रत्यपकर्षस्तादृशं मेतद्भवति समुच्चयौ वा  
नानार्थत्वात्प्रस्तावशान्त्यर्था हि वागुद्गीथादिशान्त्यर्थ  
ॐकारो वाक्त्वं पूर्वा स्यादेवं यशान्तरप्रत्यसित्तिरुत्तरा  
वाजघ्न्यविधेराचारात् ॥ १३ ॥

॥ इति निदानसूत्रे द्वितीयः प्रपाठकः ॥

॥ अथ तृतीयः प्रपाठकः ॥

अथ का प्रथमा संस्थेत्याग्निष्टोमीं प्रथमां मन्य  
इति शाण्डिल्यः प्रथमां ह्येव स्थानं भवत्यथापि प्रथमं  
मधीमहेऽथाप्यणुप्रमुखानि भूताभिः भवन्ति परोव-  
रीयांस्त्वथाप्याह यज्ञमुखं मग्निष्टोम इत्यथाप्येतया  
संस्थया चरत्यथाप्येषां समारब्धतमा भवतीत्यथापि  
नाग्निष्टोम मरुत्वापरे संस्थे करोति न ह्यनु-



पादाय प्रथमा मुत्तरयोः सिद्धिरस्थनुपादाय उत्तरे  
 प्रथमां सिध्यतीत्यथंष्याह प्रजापतिर्वा एषा स  
 स्थानां यदग्निष्टोमस्तां यदकृत्वाथान्यां कुर्यात्प्र-  
 जापतिरस्य हि सा सैतः स्यादिति यावदादेश मुत्तरे  
 सर्वत्राथाप्यूर्ध्वाना मेव स स्थानां कृतानां वदति  
 देवा वा अग्निष्टोम मभिजित्योक्तानि नाशक्तु-  
 वन्नभिजेतुं देवा वा उक्त्यान्यभिजित्य राशिं नाशक्तु-  
 वन्नभिजेतुं मित्यथापि नैतद्देवताः प्राहू राका सिनी-  
 वाली सरस्वती विष्णुरिति सौविष्टकृतं खल्वेतत्  
 सोमस्य स्थानं यदाग्निमारुतं स योऽयं देवताः श-  
 शिशस्ता अपातिरात्रे सती हैव प्र व्याहृत्य शसती-  
 त्युक्तं तां प्रथमां मन्य इति गौतम एवं प्राप्ताह-  
 र्मात्रासमानि सवनान्यापुद्भियन्त आर्भक्छन्दांश्चनु  
 विधीयन्ते प्रस्थितग्राह्या ग्रहैश्च शस्त्रैश्चापह मेत  
 मेव भागूर्त्तिन मिव मन्ये यो ऽग्निष्टोमयाज्जीति  
 ध्रुव मनु हादशस्तोस्त्रात्पूर्वं तत्प्रस्थितयाज्याभिर्वि-  
 जानीम इति ॥ १॥

अतिरात्रीं प्रथमां मन्य इति धानञ्जयः कृत्स्नं  
 पूर्वं कर्मापरीपादाया इत्यथापि स मिमीत एषा वा  
 अग्निष्टोमस्य संध्या यद्वाचिरेषा वा उक्त्यस्य समा

यद्रात्रिरिति कुंतो दृष्टेन प्रमा स्यादित्यथापि बः  
 स्तोमसमाम्नायः प्राहातिरात्रस्यैव स्तोमसमाम्नीयो  
 भवत्यथापि न उक्त्यसमाम्नायः प्राहातिरात्रस्यैव  
 प्रथमं मुक्त्यानि समामनामोऽथापि न कर्मणो  
 यज्ञं सन्धिं \* प्राहुरपरि सन्धिभक्षात् स्तोमविमो-  
 चन मधीमहे यन्नून मन्या प्रथमा स० स्या भविष्य-  
 त्प्राक्तारं स्तोमविमोचनं समाम्नास्यदित्यथापि  
 शश्वद् बहुचा अतिरात्री मेव प्रथमं मधीयते तासां  
 काम्या का सर्वाभिप्रायेत्याग्निष्टोमीं चातिरात्रीं  
 च ब्रुवते शौचिवृक्षाः सर्वाभिप्राये अनवधारितकामे  
 भवत इत्येकस्मा अन्यो यज्ञः कामायां क्रियते सर्वेभ्यो  
 ऽग्निष्टोम इति न काम मवधारयति ज्योतिष्टोमे-  
 नातिराचेणर्द्धिकामो यजेतेति नैव कामं मवधार-  
 यति पशुकाम उक्त्येन स्तुवीतेति कामं मवधारयति  
 सोऽग्निथिला परिसंस्थिता भवतीति सर्वाः सर्वाभि-  
 प्रायाः सर्वास्तु काम्यानि विद्यन्त इति शाण्डिल्यस्तथा  
 गौतमधानञ्जय्यौ सर्वाभिप्रायः खल्वयं ज्योतिष्टोमः  
 स सर्वाभिरेव संस्थाभिः सर्वाभिप्रायो भवतीति  
 यदेतदवधारितकामेति पश्यामो वै वयं सर्वाभिप्रायेषु

काम भवधार्यमाणं यथोपवती ग्रामकामस्य प्रति-  
ष्ठाकामस्य रथन्तरं सन्धिषामेति ॥ २ ॥

तस्य खल्वस्य ज्योतिष्टोमस्य षड् व्यञ्जनस्थानानि  
भवन्ति प्रतिपद् गायत्रं त्रिष्विधनं विष्टुतिर्ब्रह्मसा-  
मोक्त्यप्रणयः सन्धिसामेति तेषां किं क्याम्यं किं  
सर्वाभिप्रायं मिथि प्रतिपदात् खल्वस्य ज्योतिष्टोमस्य  
चरति तत्सत्सर्वाभिप्रायं मय यत्काम्यं निवर्त्तते  
तत्कामप्रतिपत्सर्वाभिप्राया सर्वा ह्यवधारितकामा  
भवन्तीत्युपवतीत्याहुः प्रथमाञ्चैना मधीमहे ऽपि तां  
ग्रामकामस्य ह ग्रामः सर्वाभिप्रायो भवतीत्यथापा-  
स्याच्चिरं दर्शयति ततश्चतुर्षु मासेषु शुनाशीर्यस्य  
लोके ज्योतिष्टोमोऽग्निष्टोम उपवती प्रतिपदित्येषा  
रथन्तरपृष्ठे ऽग्नियवती बृहत्पृष्ठे ऽग्नियवद् बार्हतं रूप  
मुपवती रथन्तरे ऽग्नियवती बृहतीति च भास्त्रबिना  
मथापिनाः साहस्रोत्तमे स्तोत्रीयस्योत्तमां दर्श-  
यत्यौभयसाम्यात्तां न प्रथमां ब्राह्मणेनैव तद्वा-  
स्यात् मथाप्यहोभिषेचनीये यत्पयस्य वाचो अग्निय  
वति तेन यज्ञमुखात्प्रयन्तीति प्रकृत्या प्रथमं दर्शयति  
तदपि शश्वद् ब्राह्मणं भवतेते ताव प्रतिपदौ  
सर्वाभिप्राये यदुपवती चाग्नियवती च कामाय वा

इतरा आङ्घ्रियन्त इति खरो गायत्रिधनानां  
 प्रथमा(३\*) विष्टुतीनां श्येतनौधसे ब्रह्मसाम्ना षड्कु-  
 यानि सर्वाभिप्रायाणि भवन्ति साकंमश्वः सौभर-  
 नार्मेधे हारिवर्णादङ्घ्रिये आष्टादष्ट मिति तेषां  
 कान्यकथे कान्यतिरात्र इति सर्वेषां याथाकामीति  
 शाण्डिल्यो हारिवर्णादङ्घ्रिये वा हारिवर्णादष्टादष्टे  
 वोकथान्ते कुर्यादिति गौतमी इतिरात्रे सौभरनार्मेधे  
 तच्चर्या जानीमो हारिवर्णादङ्घ्रिये वा हारिवर्णा-  
 दष्टादष्टे वोकथान्ते चैव कुर्यादतिरात्रे चेति धान-  
 स्रय्यः सौभरनार्मेधे वोकथान्ते च कुर्यादिति रथ-  
 न्तरः सन्धिषाम्णाः सर्वाभिप्रायं तद्विचरति तत्र  
 यानि कामावधारणानि सर्वाभिप्राये सुतानि  
 भवन्ति तानि खल्वेतानि व्यञ्जनान्येकजातीया-  
 न्येव समादध्यादेवं चाव्याहतः क्रतुर्भवत्यपि चैव  
 मार्षेयकल्पो दर्शयति ॥ ३ ॥

अथानुष्टुभस्य भागस्य का कन्दोभक्तिरित्येका-  
 चरां ब्रुवते शौचिवृक्षास्तद्विजमनीमो बहुरक्षर-  
 प्रवादो भवत्येकाचरा वै वागक्षरेणान्ततः प्रतिष्ठाप्य  
 मक्षरं त्र्यक्षरं मष्क्यत इति हि भवतीति सर्वैव

दान्निष्शदक्षरेति शाण्डिल्यस्तथा गीतमधानञ्जय्या-  
 वेता मनुष्टुबित्याचक्षते ऽथापेना मनुष्टुबर्थे निधी-  
 यमानानां पश्यामी ऽथापि यस्तावदकुशलं ह्यन्दसा  
 मौक्तिक मनुष्टुभं पृच्छेदेता मेव दान्निष्शदक्षरा  
 माचक्षीत तत् खलु गायत्रं प्रातस्सवनं चैष्टुभं माध्य-  
 न्दिनं सवनं जगत् तृतीयसवनं यदूर्ध्वं मुक्त्येभ्य  
 आनुष्टुभः स भाग इति कथं स द्वादशस्तोत्र-  
 आनुष्टुभो भागः स्यादिति सवनानि प्रति प्रविष्ट  
 इति गीतमो ऽष्टाक्षरा नायत्री हिङ्गारो नवम एका-  
 दशाक्षरा त्रिष्टुप् द्वादशाक्षरा जगती ह्यन्दोभिरेषा-  
 नुष्टुभ माप्नोति यजमानस्थानवलोपायेत्यन्तस्थान  
 एष भाग इति श्रौचिवृच्चिरेकविंशस्तोमी वाक्सा-  
 मान्त एष नूनं द्वादशस्तोत्रस्थानुष्टुभो भागः  
 स्यादिति सर्वैव षट्विंशदक्षरेति शाण्डिल्यस्तत्रैव  
 यच्चत्वपर्यक्षराण्युपाह्वरति पंसेचीच्चिकीर्षन्निति पद्-  
 मत्यवरोहं शौचादितरेयो यथैतद् ब्राह्मणं द्वाद-  
 शाक्षर मेकादशाक्षरं मष्टाक्षरं वाग् दान्निष्शीत्यथ  
 पञ्चदशस्तोत्रे सवनानि प्रति प्रविष्ट इत्येव गीतमो  
 ऽष्ठावाकस्तोत्रीये श्रौचिवृत्त्या अथ षोडशिति सर्वैव  
 चतुस्त्रिंशदक्षरेति शाण्डिल्यस्तत्र यद् हे अक्षरे

उपाहरति परोक्षीचिकोर्षन्नित्युपसर्गाक्षराणि शौचि-  
 वृक्षा दशाक्षरं पादः शौचादितरेयो ऽथातिराचे  
 सर्वेव द्वात्रिंशदक्षरेति शाण्डिलास्तां यदभ्यासेन  
 करोति परोक्षीचिकोर्षन्निति वैतर्हव्यस्तोत्रीये शौचि-  
 वृक्षाः ॥ ४ ॥

अथायत् सन्धिरन्तर्भागं भवतीश्च बहिर्भागं मिति  
 बहिर्भागं मित्याहुः समाप्तेषु भागेष्वगच्छत्यथाप्यस्या  
 छन्दसा भक्षयति बहिर्भागं मिवैव स तत इत्यन्तर्भाग  
 मित्यपरं का सा भक्तिर्या बहिर्भागं मित्प्रथमपेन  
 मुक्त्यैः सम्मिमीते ऽन्तर्भागं मुक्त्यानि भवन्त्यन्तर्भागः  
 सन् किम्भागः स्यादिति गायत्र इत्याहुः समाप्तेषु  
 भागेषु पुनरुपक्रमे कोऽन्यो गायत्रवान् स्यादिति सर्व-  
 भाग इत्याहुः सर्वभागं पृष्ठः स्यात् रथस्तर मित्यानु-  
 षट्ठुभ इत्यपरः राजानुबन्धतयेति क्रमे भवन्तीश्च  
 समास इति क्रमे भवन्तीत्याहुः समस्तेऽक्षरे रात्रि-  
 पर्यायाः क्रमे सन्धिरित्यपि वा क्रमे रात्रिपर्यायाः  
 समस्तेऽक्षरे सन्धिरिति नैतदिहविज्ञायत इति  
 शाण्डिलं प्रायने ऽमुत्र खल्वेतद्दशरात्रे विज्ञायत इदं  
 पदस्य स्थाने मित् मन्त्रक्रमच्छेदं वृद्धेरिदं समासयेति  
 तत्रहिर्दिर्भागाः प्रकल्पयन्त इति विज्ञायत एवेति

वाजाः षट्स्यान्यहस्सवनानि क्रमे षोडशी तं स्रप्यभि-  
विहारं शसत्येत मेवाक्षरक्रम मनु चिख्यापयिषन्  
वृद्धौ रात्रिपर्यायास्तानप्राभ्यस्त्यर्थाद्यात्यसामानो  
हि कृन्दोमा इति तदपुत्रभयोः सन्ध्योः सतोरित मेव  
सन्धिरित्याचक्षते समासादित्येतेन सर्वैकाहेषु साम-  
भागा व्याख्याताः ॥ ५ ॥

अथ दंशरात्रे कथं भागा इति याथाकामिः  
भागानां मित्येकं आक्षरस्त्येवैकभाग्यं मस्ति सर्व-  
भाग्यं सपि तुं चाहःश' एवं भागाः स्युर्गायत्रः प्रथम-  
स्रप्यहस्स्रष्टुभो द्वितीयो जागतस्तृतीय आनुष्टुभः  
षोडश्यानुष्टुभं दशमं तदपेपरं मिव ब्राह्मणं भवति  
प्रातस्सवनेनैव प्रथमस्त्रिरात्रः कल्पते माध्यन्दिनेन  
सवनेन द्वितीयस्तृतीयसवनेन तृतीयो ऽग्निष्टोमेन  
साम्नैव दशमं महारित्यथापरं गायत्रं चैष्टुभं जागत  
मिति प्रथमस्रप्यह एव मेव द्वितीय एवं तृतीय आनु-  
ष्टुभः षोडश्यानुष्टुभं दशमं मथापरं गायत्रं चैष्टुभं  
जागत मिति प्रथमस्रप्यह आनुष्टुभो द्वितीयो गायत्रं  
चैष्टुभं जागत मिति तृतीय आनुष्टुभः षोडश्यानु-  
ष्टुभं दशमं मथापरं गायत्रं चैष्टुभं जागत आनुष्टुभ  
मिति प्रथमस्रप्यह एव मेव कृन्दोमचतुरहो बहिर्भागं

पञ्चमषष्ठे इत्यथापरं पदस्यः प्रथमस्राहो ऽक्षरस्यो  
द्वितीयो षष्ठिस्थस्तृतीय आनुष्टुभः षोडश्यानुष्टुभं  
दशमं ते खलु शश्वद्भ्रातृविनो भक्षाननु व्यूहन्ति  
जगतौ प्रातस्सवनं मागमं तत्र जागतच्छन्दसा भक्ष-  
यिष्याम इति न वयं मनु व्यूहामः सवनभक्तिज्ञात्रा  
एव भक्षेषु स्या इत्यथ संवत्सरे चतुर्विंशं लुब्धभाग  
मिति शौचिवृद्धिर्गायत्रं वा स्तोमज्ञात्रेण वैष्टुभं  
वा स्थानेन सर्वभागं वैकाद्यादित्यथाभिपूवां, एका-  
हिका वा स्तोमज्ञात्रेण षोडहिकां वा तन्त्रज्ञात्रेण  
त्राहभागात्स्वरसाम्ना मानुष्टुभो विषुवाञ्छातुर्याः  
त्यर्वभागो वैकाद्यादिति ॥ ६ ॥

अथाहीनेषु हिरात्राणां गायत्रं पूर्व महस्त्रिभाग  
मुत्तरं यत्प्राग् ब्रह्म सामस्तत् त्रैष्टुभं ब्रह्म सामप्रभृति  
जागत माषोडशिनः षोडशप्रभृति पर मानुष्टुभं  
त्रिरात्राणां गायत्रं प्रथमं महर्जागतं द्वितीयं चैष्टुभं  
तृतीयं वैदत्रिरात्रे सर्वभागान्यहानि चतुर्व्रत्राणां  
गायत्रं चैष्टुभं जागत मिति त्राह्ये ऽक्षराक्षरे चतुर्थ  
मिति शौचिवृद्धिः समस्ते ऽक्षर इति गौतमः पञ्चरात्रे-  
ष्वक्षराक्षरयोरेव चतुर्षुपञ्चमे इति शौचिवृद्धिः सम-  
स्ते ऽक्षर इत्येव गौतमः षड्रात्रप्रभृतिषु द्वात्रात्रिका



भागा यावदांशवदभिप्राप्तयुरथ यत्रांहीन एकांहेर्व-  
 र्त्तत सर्वभागास्तनैकाहाः स्युरित्येक आंहीनिक-  
 भागा यथास्थान मित्यपर मेतेनांहीनेषूपधीयमाना  
 व्याख्याता अथ यदूहं दशरात्रादुपधीयेरन् ये वा मध्ये  
 दशरात्रस्य भार्गपर्वणि सर्वभागा एव ते स्युरेतेन सचे-  
 षूपधीयमाना व्याख्याता आंहीनैकांहसमासा द्वेन  
 सत्राणि भवन्ति ॥ ७ ॥

अथ सुब्रह्मण्यां विचारदन्त्युगु खल्वयं भवतीः  
 सामेत्युगभवतीत्याहुर्द्वे च इवाख्य नामधेयं सुब्रह्म-  
 ण्येति सामेत्यपरं गीतं हि भवत्यथाप्याहुर्मन्त्र एव  
 खल्वयं शिथिलो भवत्याह्वानार्थस्तस्येय मभ्यायियं  
 स्यादित्यथाप्याहुर्नैवेय मृगं न साम सुब्रह्मैवेद मात  
 ब्रह्मणो भवतीः उक्तातुरिति ब्रह्मणो भवतीत्याहु-  
 र्तेन ह्यग्रे संयुज्यते ऽथापि ब्रह्मा सुब्रह्मण्य इति  
 नामधेयसाख्यादथाप्येव सर्वाहोरात्रा वषटकारि-  
 ण्यो भदन्त्युङ्गानुह्यग्नीध्रः सम्पद्यत इत्युक्तातुरित्यपरं  
 गीतकारी ह भदन्ति स गदभक्षेभ्यः पुराख्य भक्षेभ्यः  
 कर्म प्रवृज्यत इत्यथैतानागतत्वारकालादहीनेषु सत्रेषु  
 याजमानान्नामंयाहः किमर्थं इत्युच्चादचचरणास्त्रियो  
 भवन्ति स इह देवसाक्ष्ये च मनुष्यसाक्ष्ये च येषां

पुत्रो भविष्यामि याञ्च पुत्रान्वक्ष्ये ते मे पुत्रा भवि-  
ष्यन्तीति शाकटी मन्ववरुद्ध्याह्वयेद्राज्ञो ऽप्रत्यारीहा-  
यांप्रत्यासोहाय ॥ ६ ॥

अथातो दशरात्रस्तस्य ब्राह्मणैर्निध द्रव्यसमुद्देश  
उक्तौ यानि चैतानि ज्योतिष्टोमानि द्रव्याणि यानि  
च पृष्ठेः समानरूपाणि यानि च दशरात्रेण समान-  
सुह्यानि यथैतत्प्रथमानि प्रथमद्वितीयानि द्वितीय  
इति स्थानतोऽपि समानं द्रवां सम्प्रश्येदथैताः  
सप्त नाम विभक्तयः स तं तेन तस्मै तस्मात् तस्य  
तांस्मिन्नित्यामन्विता ऽष्टमी स खलु विभक्तिं मामन्वितां  
प्रथमेऽहनि करोति कस्य हेतोरिति प्रत्यक्षभक्ति रथ-  
न्दर मामन्वितस्य न परोक्ष मस्तीत्यथाप्येषा प्रथ-  
भाग्निमन्थनीया भवति तां चतुर्थे ऽहनि करिष्यन्  
भवति त मिति द्वितीया तां द्वितीये तेनेति तृतीया  
तां तृतीये तस्मा इति चतुर्थी तस्या न द्रव्यं विद्य-  
मान माङ्गरेकाः मुद्राहरन्ति प्रतव्रासीं नवासीं  
धीति मग्नय इति सैषा प्रतवती भवति भागान्ते  
ऽपरूपा स इति प्रथमा तां चतुर्थेऽहनि करोति कस्य  
हेतोरिति प्रत्यय एष भागानां प्रत्यय एषा विभ-  
क्तीनां प्रत्यये प्रत्यय मथापि मामुधान्येषा भवत्येतस्मि-

ब्रह्मन्वग्निं जनयन्ति जातस्यो नाम धीयत इति तस्य  
 ब्राह्मणं भवति देवा वै श्रिय मैच्छंस्तान् प्रथमेऽहन्य-  
 विन्दन्न द्वितीये न तृतीये तां चतुर्थेऽहन्यविन्दन्नित्येतां  
 श्रिय माह नामधेयं ह विभक्तयः श्रिता मवन्तीत्यथा-  
 प्येषां द्विसंशया षड्विंशतेऽहनि भवति तस्येति वा  
 तस्मादिति भवतीति गौतमस्तां शश्वदेके चतुर्थीं  
 ब्रुवते तां ततो नामधान्या प्रच्युता मन्यतरस्त्रिब्रह्म-  
 नुगृह्णाति तदप्राव मिव ब्राह्मणं भवति तेनो श्रीः  
 प्रत्युपोदितेति (नैव\*) ब्रह्मण आज्ये निरुच्यत इन्द्रा-  
 त्परि तन्वं मम इति तस्मादिति तस्येति भवतीति  
 धानञ्जयः सा षष्ठी ता मामन्वितया प्रच्युता मिहा-  
 नुगृह्णात्यथाप्राप्तयोः पूर्वयोस्तृतीयया समानं दिन-  
 चनं स तथैव ते उपाप्ते अमस्तापि वद प्रत्यवरोहार्थं  
 एवाकरिष्यत्समूढाज्ये निरुच्यते ऽग्नेस्तीमं मनामहे  
 सिद्धमद्य दिवि स्पृशो देवस्य द्रविणस्यैव इत्यभविष्य-  
 दित्यथापि व्यूढाज्ये एव भवति तत्र श्रियो वर्धस्यैव  
 विद्युत इति नृच्छ्रियत इत्यभविष्यदित्यामभितैव  
 षष्ठे भवत्येवमाद्यवसानसमाधिरिति ॥ ६ ॥

अथैषा स्वदविभक्तिरौशनं प्रथमे वासिष्ठं

द्वितीय उभयतःस्तोमं गौतमं तृतीय आभीशवं चतुर्थ  
 आनूपं प्रथम इहवदामदेव्यं षष्ठे ऽथैषा निधन्विभ-  
 क्तिर्नौधसं प्रथमे श्यैतं द्वितीये मंहावैष्टभं तृतीय  
 आथर्वणं चतुर्थे बार्हद्विरं पञ्चमे गोष्ठः षष्ठे ऽपैषिडा-  
 विभक्तिः कालियं प्रथमे माधुच्छन्दसं द्वितीये रौरवं  
 तृतीये पृश्नि चतुर्थे रायोवाजीशं पञ्चमे गोष्ठ एव  
 षष्ठे ऽथैषा कन्दोमेष्विडाविभक्तिर्जरावीधीषं सप्तम  
 इडानां सङ्गारो ऽष्टमस्य सती नवमे ऽहनि क्रियते  
 प्रतीचीनेडङ्गाशीतं नवम उदसेधो दशमे ऽथ नौधसे  
 वंदस्तीन्द्रङ्गीभिर्हवामह इति तत्खलु हवामह इत्येव  
 क्तस्य विधिप्रमाणाः कथं मथथाविधि कुर्या-  
 मेत्याम्नायदैतेन ब्राह्मण सुपवर्णयतीत्यपरं तन्नि-  
 योगाय न प्रभवतीत्येतेनैतद्वाख्यातं मक्रान्तसमुद्रः  
 परमे विधमन्निति यानि चैवञ्जातीयान्यथाचारे षट्ति  
 यः पुरा पुरयो भूत्वा पञ्चात् पापीयान्त्खादाचारं  
 ब्रह्मसाम कुर्वीमेति किं तस्य स्थाने स्यादित्येते एवा-  
 न्योन्यस्य \* स्थानं व्यतिहरन्नीधसं मुष्णिहि कुर्यादिति  
 तदाहूर्ध्वप्रतिहरति चेद्यत्र बृहत्षोडशिसाम ख्याङ्गीरी-  
 वितं नूनं द्वितीयस्याङ्गः पृष्ठं कुर्यादित्यथ वै सञ्चारये-

दिति \* सञ्चारयति चेद्गौरीवित मेवानुष्टुभि कुर्या-  
 द्गौरीवित् षोडशिसामेत्यथ वै प्रतिनिदध्यादिति  
 प्रतिनिदधाति चेद्यत्र बृहत्षोडशिसाम स्यात् किं  
 तत्र बृहत्सदृशं द्वितीयस्याङ्गः पृष्ठं कुर्यादित्यथ कथं  
 स्यादिति सञ्चारयेदहर्नानाहासु यानि सञ्चारि-  
 धर्माणि स्युः प्रतिनिदध्यात् समानेऽहनि व्यतिहरद्यत्र  
 व्यतिहार मभिरूपं मन्येत प्रतिनिधिस्त्वहाभिरूप-  
 तरः पौष्कल मुष्णिहि कुर्यादेतच्च ज्योतिष्टोमानां  
 द्रव्याणां दशसत्रे ऽनिहितं भवत्यपि च पदनिधनं  
 सथन्तरे ऽहनीति श्रज्जायज्ञीय मग्निष्टोमसाम यज्ञे  
 यज्ञे कुरुतेति तदेवाभिवदत्यथापेष् तृतीयसवनं  
 सामान्तस्त मदिदर्शयिषीत् ॥ १० ॥

अथ वैरूपे वदति यथा मण्डूक आट् करोत्येवं  
 निधनं मुपयन्तीति कखेदं ब्राह्मणं स्यादिति कृता  
 राथन्तरीडाकृता बाह्वीति क्वीत्सस्तदिद मकृत-  
 कारं ब्राह्मणं मण्डूकब्राह्मणं स्यादिति पञ्चमेऽयं  
 प्रत्याहता भवतीति गौतमस्तां प्रोक्षीकृत्याभि-  
 व्याहरेयु रेवं पञ्चमेऽहन्ययातयामा भवतीति तद-  
 पेव मिव ब्राह्मणं भवत्ययात्यामताया इति तत्र

कः परोक्षीभावं इत्याकारटकारौ वा कुर्युःरिक्भर-  
णकारौ वैव मेकवर्णविकार इकारन्वेवायिकारी-  
कुर्युरेतस्मिन् परोक्षीभाव उपलभ्यत इति पदद्वैवतं  
व्यत्यस्यति वैरूपे विरूप मचिकीर्षदवर मेवेद महः  
सत्पर मभ्यस्तं भवतीत्यपरं वात्यासे वात्यासं करि-  
ष्यामीति स्तोत्रं वशेनेति धानञ्जय्यो यदवात्यस्यन् यद-  
द्वैवतं पदा यत् प्रतिहारयिष्य दतिप्रत्यवेतस्तथा प्रति-  
हारो ऽभविष्यद्यद्यु वै दैवतायै कर्हिर्ऋचं प्रतिहारो  
ऽभविष्यदथेत्य मनतिप्रत्याहृतोऽन्तर्ऋचं भवतीत्यथा-  
प्यस्यैतं कान्दस मध्यायं विद्यमानं मां हुरप्यथ खल्वाह  
द्वादश वैरूपाणि भवन्तीति कस्येदं ब्राह्मणं स्यादिति  
संवत्सरब्राह्मण मित्याहुः संवत्सरे द्वादशकृत्वो  
हातृषाम भवति तस्येदं संवत्सराग्निं वदेदिति ॥११॥

अथ प्रमर्हिष्ठोये वदति हिंसितो ऽन्वीचेत य  
मिच्छेत्प्रसृज्यमानं ( न \* ) प्रखियादिति त मनुगा-  
येदं चिणं मन्विति कुच्यं सर्वां सकृद्युद्धृष्टाशायं न  
प्रखियादिति काकुभ उक्तयः प्रणयः पृष्ठच्छन्दो-  
ऽन्वभिवृद्धि रथ स्वःपृष्ठस्याङ्गिरसस्य निधनयोरानु-  
पूर्वा विवदन्ते स्वःपूर्वं मिडोत्तरेत्येके एव मेतयोः

सामान्तरयोरानुपूर्वा भवतीडां वयं पूयां कूर्य एव  
 मनयाः समानोपायाद्भिव्याहारं पश्यामो यथा  
 राजने माधुच्छन्दस इत्यथ वैराजं त्रानुतोदं मेके  
 कूर्वन्त्येवं छान्दसोऽध्याय इति चतुरनुतोदं वय मेव  
 माचार्यवच इति तेन वात्सप्रु समादध्यायदीदं  
 त्रानुतोदं तद्यदि चतुरनुतोदं तदपेर्वं मितब्राह्मणं  
 भवत्येतस्मिन् वैराजं प्रतिष्ठितमित्यथ कतमे विष्टम्भा  
 इति देवता इत्याहुर्देवताभिः पदानि विष्टम्भानीति  
 तंहाङ्गरेकादशेमा देवता दशकृत्वो विष्टम्भातीति  
 दंशैताः सत्यम्प्रायां भवन्त्यपि वा य एते देवतान्तरेषु  
 दशस्तोभास्तान् विष्टम्भानवोचत्तैर्देवताविष्टम्भा इत्य-  
 थैतयोश्चरयोर्विवदन्त ऋगक्षरे स्तोभाक्षरे इत्यृगक्षरे  
 इति लामकायनस्तदभिव्याहारेण जानीमो यादृशे  
 इमे ऋगक्षरे तद्दृशे इमे भवत इत्यथरप्राहित्यसदृशं  
 वैराजं यादृश इत अदित्येस्तादृशः परस्तात्तद्गुपं  
 दिदर्शयिषन् प्रथमे ऋगक्षरे अन्तं परिहरत्यथापुं-  
 चावचाः सामपृत्तशो भवन्ति यथैकवत्साभ्युपेतानि  
 पुनरारब्धानीति नान्यां मन्येत स्तोभाक्षर इति  
 धानञ्जयः पश्यामः खिलु पदानुरूपान्तस्तोभान्चो-  
 वावयन्तो यथैतज्जनइध्या ऋचि जनहान्तस्तोभी

ऽप्रस्मिद्धवतोऽपि राक्षोघ्नोष्वेव मिमे पीतवत्यां सृचि  
 पीतवतीः स्तोभाक्षरे भवत इत्यथाप्रादित्यसदृशं  
 वैराजं यादृशं वृत्तं आदित्यस्तादृशः परस्तात्तद्रूपं  
 दिदंशयिषन्त्यदानुरूपे स्तोभाक्षरे अन्तं परिहरति नो  
 एतत् क्वचन पश्यामः प्रथमे ऋगक्षरे अन्तं परि-  
 क्रियमाणे इत्यथैषाति जगती भावप्रत्यये कन्द-  
 स्तोमरोह मद्रिदृशयिषीदिराजं वा वैराजे ऽहन्त्य-  
 चिकीर्षीदिराडियं पञ्चाशदक्षरा बृहत्यावुत्तरे तेन  
 बृहतीभ्यो ऽनपेतं भवतीत्यनपेतं भवतीति ॥ १२ ॥

अथैतांसु महानाम्नीषु विप्रतिपादयन्ती दशाः  
 क्षर मिद् मशाकूर मित्यंशाकूरी प्रथमा द्विपदा शाकः  
 शाणि त्रीणि पराणि पदानि धातुरंशकूरः पञ्चाक्षरः  
 स एष कृत्स्नकृतो भवति वत्सो शाकूरी ऽष्टाक्षर  
 ऊधः शाकूर स्रष्टाक्षर मभ्यासवत्तस्य इक्षरान् पांदा-  
 दीन् प्रतीतोदा इत्याचक्षीति पुरुषे, शाकूरः पञ्चाक्षरः  
 शाकराखेव त्रीणि पदान्यध्यासो शाकूरोऽष्टाक्षरस्य  
 प्रस्तावयति न प्रतिहारयत्येते नैषोत्तरयोः शाक-  
 राणि चाशाकराणि च व्याख्यातानि इध्यासोत्तमा  
 शाकूरी भवत्यध्यासा किमर्था इति लोकोक्ताः शक-  
 र्यः साध्यासा इमे लोका भवन्त्यग्निर्वायुरिति पूर्वयो-



राद्रित्यश्चन्द्रमा इत्युत्तमस्य तस्माद् इन्द्रासासोत्तमा  
 शक्वरी भवत्यथ खल्वाह व्यौपशाः सन्तुता भवतीति  
 कथेदं ब्राह्मणं स्यादित्युत्तमाया इन्द्रासाया इत्या-  
 हुरेकाध्यासे पूर्वे इन्द्रासासोत्तमा तस्या इदं मभिनन्दं  
 ब्राह्मणं वदेदित्यपि वा समस्तब्राह्मणमेव स्याद् वगौप-  
 शोत्तमेत्युधसोभ्यासब्राह्मणं मन्य इति वार्षगण्य एव  
 मिव ब्राह्मणं भवतीडे अमितो अकारं तस्माच्छृङ्गे-  
 तीच्छीयसी स्तूयादित्युपशोक्तानि शृङ्गाणि भवन्ती-  
 त्यथ खल्वाह दिशः पञ्चपदा दाधारत्तून् षट्पदा  
 ऋन्दांस्ति सप्तपदा पुरुषं द्विपदेति प्रतिलोमं  
 वदति \* वादतश्चिद्रोहो भविष्यतीति सप्तपदा प्रथमा  
 शक्वरी षट्पदा द्वितीया यद्धि प्रथमाया उत्तमं पदं  
 तद् द्वितीयाश्चः प्रथमं प्रगाथः सानुपृष्ठमिति पञ्च-  
 पदीत्तमा यद् द्वितीयाया उत्तमं तत् तृतीयायाः  
 प्रथमं च द्वितीयं च नवपदाः पुरो बभूवुरिति लाम-  
 कायनस्ताभ्यो रेवत्यो निर्मिता इ प्रथमायाः पदे  
 त्रीणि द्वितीयायाश्चत्वारि तृतीयायास्तदप्येव मिव  
 ब्राह्मणं भवति सिमाभ्यो अंधि रेवत्यः प्रजायन्त  
 इति नवपदा एव भविष्यन्तीत्युधश्चाभ्युख पदं चानु-

संहरत्यथापि नवपदा एताभिरूपतरां न विपर्याये  
त्रिणव इति ॥ १३ ॥

॥ इति निदानसूत्रे तृतीयः प्रपाठकः ॥

॥ अथ चतुर्थः प्रपाठकः ॥

अथ खलवाह गायत्र भयनं भवति चैष्टुभ मयनं  
भवति जागत मयनं भवतीति किंमयनं स्यादित्यूनं  
धसि विकारो दृष्ट इति गौतमधानञ्जयौ य एष  
मध्य ऊधसो ऽथकारस्तः खरिति कुर्यात्तद्वायव  
मयन मथेति चैष्टुभ मिडेति जागतं तदाहुर्विकृतो  
ऽथकारो ऽविकृतस्य को विकारो ये चाभित इडेति  
विकुर्यादिति सर्वं भेवोर्धर्विकारार्थं प्रागुक्ततीत्यपरं  
सर्वं भेवोर्धर्विकुर्यादित्यथाप्याहुर्विकृतं भेवोर्धः स्या  
दन्त्येडा मेव कुर्यादन्ताखानि कर्माणीत्यथाप्याहु-  
र्विकृतैवान्त्येडां स्याद्यदेव प्रागन्त्येडायास्तद्विकुर्या-  
त्तद्वायनं भवतीति ते कस्यहेतोर्जागतं मयनं समा-  
रस्यन्तीति नेदं जागतं मिति शाण्डिल्यायनो यानि

त्वञ्च निधनानि तानि खरिति कुर्यात्तद्गायत्रं मयन  
मपोत्ति चैष्टुभ मिडिति जागत मपोदं मिश्रणिधनं  
सर्वाभिंप्रायं यथेद मधीमह इत्युद्धं शकरीभ्यः पञ्च  
पुत्रीषपदानि पञ्चाक्षराणि तेभ्यः प्रस्तावयति न प्रति-  
हारयति न शश्वदेकेऽध्यासपुरीषपदानां प्रस्तावयन्ति  
प्रतिहारोपायांन् 'प्रस्तावोपेधादिति' 'प्रस्तावयामो  
वयः मन्यदिदं शकरीभ्यस्तत्कश्च मप्रस्तुतं क्रिय-  
तेति स्रुधीधत्तु नूनं प्रतिहारोपेधात्ते खल्विमे  
बहवः प्रस्तावाः कथं भोङ्कार इति प्रस्तावनिमित्त  
ओङ्कार इत्येके प्रस्तावे प्रस्ताव ओङ्कारेणाददीता-  
थाप्याह रभो वा एष साम्नां यदोङ्कारो नैतेनाति-  
रेकोऽस्तीति प्रथम एव प्रस्ताव इत्यपरः स्तोत्रीयाया  
एतान्यज्ञानि भवन्ति सकृन्नु खलु स्तोत्रीयाया ओ-  
ङ्कारो भवत्यथापि परिचष्ट ऊर्ध्वं प्रतिहारादोङ्कारेणा-  
दानं मथाप्येव मन्यैः सामभिः समाधिरिति ॥ १ ॥

ते खलु शश्वदेके पुरीषपदैः प्रतिषद्यन्ते पञ्च-  
विधेन पञ्चमस्याङ्गः पृष्ठं प्रतिपत्स्यामह इत्यथाप्ये-  
व शकृषवसानं स्तोत्रं भविष्यतीत्यथाप्याह  
गोष्ठः पुरीष मिति कृत्वा वै गोष्ठं षण्णुपाकुर्वन्त्य-  
न्ततो वयं कुर्म एवं च कान्दसोऽध्यायोऽपि धैवंपञ्च-

विधं पञ्चमस्त्राङ्गः पृष्ठं मनुसंस्थायत इति यदे-  
तद्गोष्ठः पुरीष मितिष्टा वै पशून् गोष्ठं कुर्वन्त्यथापि  
पञ्चाङ्गसेवि पुरीष मिति तत् खलु सर्वाभिः सह  
स्यादित्याहुस्तृचदंष्टंय इमा भवन्ति लोकदृष्टयस्तदि-  
दं मन्ते ऽनुषङ्गस्थाने समांमनात् भवत्यथापोव सर्वाः  
सपुरीषा भविष्यन्तीति व्यवायद्याभविष्यदतिगुरु चाथ  
वै विष्टावान्तेषु विष्टावसमीधय इति व्यवायञ्चैव  
गुरु चाथ वै पर्यायान्तेषु पर्यायसमीधय इति व्यवाय-  
ञ्चैव गुरु चाथ वा उत्तमम. मेवानुचरेदेतया हि  
संहेत्यन्नं भवतीति व्यवायञ्चैव गुरु च सकृदन्तः  
स्यादित्याहुरेतच्चासां लघिष्ठ मपि चैव मय्येत्नायो-  
ऽथापि परिनिष्ठायाशिष्य मुदित्वान्ते ऽनुज्ञां वदि-  
ष्याम इत्यथापि पञ्चाङ्गसेवि पुरीष मिति तासां धर्मो  
नियुज्यते न व्याहरेद्भाश्रीयादभिनवाक्षत्यासीत् पुत्रे  
कोऽयं ब्रह्मणो भवतिस्तन्नो ह प्रतिलभ्य प्रदहेदेत  
मेवाह ब्रह्मचर्यधर्मं मन्य इति गौतमस्तत्ततिगुरु  
चमभविष्यदपि च नो ह मरणांशङ्क मिसस्तु सर्वक-  
न्दस्या सवन्त्यासां मे चरतः सर्वकन्दसा मिव व्रतं  
चरितं भविष्यतीत्यथाप्याहुर्यान्नि रूपाणि ब्रह्मचारी  
न पश्यति तान्यासन्नाश्राति लब्ध्वा हैनांस्वमावत्य

भवति त मेतद्रूपेभ्यश्च रसेभ्यश्च सप्तत्रयं गमस्यत  
इति ॥ २ ॥

तासां खलु त्रैलोक्यवत्सरान् ब्रह्मचर्यं चरेत् कृष्ण-  
वस्त्रः कृष्णभक्षः आचार्याधीनरूपं स्त्री तिष्ठेद्दिवा-  
ऽऽसीत् नक्तं सत्रयं प्रातरुदकोपस्य र्शी सर्वभूतेभ्यः  
पत्न्यान्मदददर्षति शरणं तृतीयाङ्गित्यं स्त्रिगधवासा  
बुभूषेदुदकसाधवो हि महानाम्नां इत्येवं खलु चरतः  
कामवर्षी पजन्यो भवत्युदकोपस्पर्शनं किमर्थं  
मित्यनुक्ताः शक्यं स्ता एव प्रविशन्मन्यत इत्यपि वा  
पशूनामेव पायनार्थं स्थात् पशूक्ताः शक्यं इति  
खलु प्रथमं स्तीत्रीया मनुगायाहोरात्रे वाग्यतः  
परिणह्यात् आसित्वा तस्याः संवत्सरं ब्रह्मचर्यं चरेदेव  
मेव द्वितीयाय एवं तृतीयायास्ते खलु शश्वदेके  
प्रथमं एव परिणहन्ति प्रथमत एव यथा न प्रवक्ष्य-  
तौत्यध्वासं प्रत्येकेऽध्वासं प्रत्यध्वासिष्यामह इति तं  
प्रातरभिवीक्षयन्ति यान्यप्रवक्ष्यं मज्यन्ते योऽग्निं  
वत्सं मादित्यं सपोऽभिव्यक्ष्य मित्यपोज्योतिर भिव्यक्ष्य  
मित्यग्निं पशून्भिव्यक्ष्य मिति वत्सं स्वरभिव्यक्ष्य  
मित्यादित्यं मथप्येतदिवैवैता भवन्त्याप्त इवाग्नि-  
रिव वत्सं इवादित्यं इवेत्यथ खल्वाह पार्थरश्मं प्राज-

न्याय ब्रह्मसाम कुर्याद् बार्हङ्गिरं ब्राह्मणाय रायो-  
वाजीयं वैश्यायेति पार्थुरश्मं चेद् ब्रह्मसाम ख्याद्बार्ह-  
ङ्गिरस्यैर्क्वु कुर्याद्यद्यु वै रायोवाजीयं मेते एव बार्ह-  
ङ्गिरं रायोवाजीयं सप्तोत्तरीये अन्योन्यस्य स्थानं  
व्यतिहरेत् कथं मुभयेषु समवयत्स्विति भुक्तौ वशं  
नयेद्बृहपतेरित्येकेऽपि वा बार्हङ्गिरं भवे कुर्यान्नित्यञ्च  
श्रेष्ठवर्णीयं चेति वैश्वामित्रस्तीक्ष्णीये षोडशिनो स्तूय-  
मान आष्टमिकं मुक्त्यस्तीक्ष्णीयं प्रति निदध्यात्सञ्चा-  
राय वीङ्गस्तीक्ष्णीये वसिष्ठस्यप्रियं मनुकल्पयेद् वसि-  
ष्ठस्यप्रियं मनुकल्पयेत् ॥ ३ ॥

अथ षष्ठेऽहनि रेवतीषु वारवन्तीयं पृष्ठं भवति  
तदेके प्रत्यक्षं ब्रुवत एतत्पृष्ठतौ दृष्टं भवतीत्यथापि  
यद्रेवत्यः पृष्ठं संभविष्यत्यवमान आसां धर्मं संक-  
रिष्यन्नित्यथाप्यानुरूपपाग्निष्टोमसाम्नि वारवन्तीयस्यै-  
वानुरूपं कल्पयतीति रेवत्ये इत्यौष्वाङ्गी रेवती षष्ठा-  
नां सृष्टिब्राह्मणं भवति तासां धर्मा नियुज्यते  
तद्गवां घोषोऽन्वसृज्यतेत्यथापि प्रतिपद्भिः पृष्ठानि  
संवर्णयन् रेवतीरेवाभिः संवर्णयति षष्ठं च विश्वजिति  
चाथापि पृष्ठास्तोमात् पृष्ठानि च्यावयन् रेवतीरपि  
च्यावयत्यथाप्यनुगृह्णीतपृष्ठे रेवतीरेवानुगृह्णातीत्य-

थापि परोक्षपृष्ठीपाङ्गपृष्ठयोरनुगृहीतपरोक्ष इति बार-  
वन्तीय मेवानुगृह्णाति यद्देतदेतत्प्रकृतौ दृष्टं भव-  
तीति ब्राह्मणेनैव कारणं वदति यद्देतद्यवमान  
आसां धर्मं मकार्ष्यन्नित्युपाप्तं पृष्ठत्वञ्च स्तोत्री-  
येण मन्यते यद्देतद्दारवन्तीयस्यैवानुरूपं कल्पयती-  
त्युक्तं चारयन्तीयस्य परोक्षं तदेतद्रेकतीपरोक्ष मेव  
भवतीति ॥ ४ ॥

अथ खल्वाह प्रायणतो द्विपदाः कार्याः उदय-  
नताः इति कथं प्रायणतः स्युरिति प्रथमेऽहनीत्याङ्ग-  
रेतद्धि प्रायणं भवत्यथापि दृश्यते प्रायणीयस्योक्त्यत्वं  
स्वतुर्विशेष्य तथा षष्ठ्याऽभिष्टोम्यं यथाभिपूविक  
द्वितीय इत्यपरं मेतदुक्तानां प्रायणं भवत्यथापेव  
मुक्त्यत्यतिहारः सिध्यत्यथापेवं प्रकृतिसविधतरं  
भवतीति कतमावृत्ते पृष्ठे संस्थाधर्मा इत्यावृत्त-  
स्यापन्त एव स्युरित्येके यथा षडहः सन्निष्ठत इति  
हि भवतीत्यथापि षडहधर्मा इत्यावृत्तते न चैतत्  
षष्ठ्य सांध्यो यथो च अथमस्य त्रयस्त्रिंशस्य त्वेव  
संस्थायां मित्याचार्या एतदावृत्ते रूपं यं इत उपक्रम  
धर्मः स परस्तात्संस्थाधर्मा यः परस्तात्संस्थाधर्मः  
स इत उपक्रमधर्म इत्यथापि ब एनानावृत्तस्यान्तं

परिहरेत्सर्वाण्येव नूनं सोऽन्तलक्षणाभ्यां वृत्तस्थानं  
परिहरेदिति ॥ ५ ॥

त्रैविणं दशरात्रस्य . विच्छिन्नानीति शाण्डिल्यः  
पञ्चम मभितो द्वेषष्ठे . पूर्व मेकं \* तेषां सन्तानाय  
सन्तनीत्यनुपूर्वं सूक्तानुरूपाच्छन्दोमान् करोति  
पृष्ठाच्छन्दोमाना मकृतकारायथाप्यप्रकृतवादेः प्राक्-  
सूक्तानुरूपयतेत्यथापि प्रजापयति सस्तावेषु प्रजा-  
स्थान मभ्यवर्द्धयिषीद् बृहद्रथन्तरे पृष्ठे न हि षाड्हि-  
कान्यनुभवन्ति नो व्यलुलुप्सीदथापि शिथिलोक्तास्तेषां  
प्रत्यक्षाभ्यां पृष्ठाभ्यां दृढीभावो भविष्यतीत्यथापि तम्  
उक्तास्ते एते ज्योतिषीः साम्नाः स कस्य हेतोर्बृहत्पूर्वं  
युक्त इति कृतयोः क्रियमाणयोरेषाकृतकृतिरथापि  
स्तोमप्रत्यवाये पृष्ठतो रोह मद्रिदर्शयिषीद्वर्षीक्तं बृह-  
दित्यथापौदं वृत्तस्थानः बृहदाप्नितयां व्रतस्य मभनस-  
तया ते व्यत्यासमप्रयुक्ते नृकुशलं वाङ्मिधनानि माध्य-  
न्दिनान्यन्त्यान्यैहान्यार्भवान्थानि सवनच्छन्दसो  
रनुग्रहाय ॥ ६ ॥

अर्कपृष्ठान्यैङ्गिनो ऽधीयते मेषां छन्दोमानां  
पृष्ठभक्तिस्तेषां पृष्ठत्वे तिष्ठमानो न साक्षात् करोति



बृहद्रथन्तरे वा निकामयमानः पूर्वा चार्भवे करो-  
 त्येवं नेदीयसि पृष्ठानां सप्तमे ऽहनि कृताकृती भव-  
 त्यब्राह्मणविहितत्वाकर्त्तव्य इत्याचार्याश्चन्द्रोमानां  
 चार्कसमाधिर्यथा चैतान्येद्भिन्नो ऽधीयते कन्दोगाञ्चा-  
 पो न मेके ऽधीयते ऽथापि स्रोधे ऽनुगृह्यते यथा त्रिवृ-  
 त्ति दशरात्रं इति नवमे ऽहनि त्रमे स्तोत्रे सति साध्या-  
 सां बृहतीं करोति कस्य हेतोरिति साध्यासा पूर्वे  
 ऽहनि कृतान्स एव सप्रत्ययवायो ऽथापि बह्विधं चरति  
 तस्याः पथ्यता सापिपादप्रिषीद्वाशरात्रिकाणां  
 द्रव्याणां पथ्याख्या ऽथाप्येतस्या मेवैतत् सामयोगत्  
 साधीयोभ्यश्नुत इति चैककुम्भस्य निधने विवदन्ते  
 पदनिधनाना मित्येके यादृशे इमे ऋगक्षरे तादृशे  
 इमे भवत इति बह्विर्निधन मित्यपरं बह्विर्निधन-  
 स्थाने च युज्यते ऽपि चास्य निधनवांदो भवति बह्वि-  
 र्निधनाना मुत निधनवादः भवन्तीत्यथाप्यापद्यते  
 ज्योतिर्विचारान्यत्पदनिधनं सभत्रिष्यद्यत् परेद्यत्  
 ज्योतिष्ठीमीं भात्रीं नास्य प्रतिनिष्कारं कल्पयति  
 बह्विर्निधनस्यैव सत् इति सत् इति ॥७॥

अथ दशमे ऽहनि चतुर्दशं हीतुगज्यं समा-  
 मनामस्तस्य मध्यमे भवतस्तानूनपाती च नाराशंसी

च इयानि कुलानि भवन्ति. तानूनपातन्तानूनपातेषु  
 कुर्यान्नाराशुसीं नाराशुसेषु वंसिष्ठशुनका अत्रयश्च  
 वध्यश्चाश्वकखोश्च सङ्कृतयश्चैतानि नाराशुसान्वये-  
 तराणि तानूनपातन्तीति कथं मुभयेषु समवयः  
 त्स्विति भूमौ वशं नयेद्गृहपतेरित्येके ऽपि वा तानून-  
 पाती मेव कुर्यादेषा भूयिष्ठानां कुलानां भवत्यपि  
 चैता मेवैके ऽधीयते ऽथाप्येव्वां समारब्धतरा भवतीत्यथ  
 मानसं दशमस्य भवतीः सर्वस्याहो एव दशरात्र-  
 ख्येति दशमस्येत्याहुर्नैतद्दशमेनाहः\* विप्रयुज्यमानं  
 पश्यामी ऽथापि दशमधर्म इत्थांचक्षते ऽथापि सङ्घं  
 मानसेन विराट् सम्पत्सिद्धात्यथाप्याहुः सर्वमेवद  
 महः पुरा मानसं बभूव तदतिगुर्विति वाचं समा-  
 पादयाञ्चक्रुरेकस्त्रोचं चित्तं धर्म मनु ग्रन्थवन्त्स्यास्य-  
 तीत्यथापि वागुक्त महः संयुक्त महः संयुक्ते षाड-  
 मनुसे भवत इति मे दशमस्येत्प्रं सुपरिष्ठात् पत्नी-  
 संयाजावाः भवति यन्नून दशमस्याभविष्यत् पुर-  
 स्ताप्यत्नीसंयाजान्ना मभविष्यदित्यथाप्यत्र त्रिकं स्त्रीमः  
 कथं त्रयस्त्रिंशं कृत्वा समाने ऽहनि त्रिकं पर्य-  
 वयिष्यदित्यथाप्यत्र गायत्रं छन्दः कथं त्रयस्त्रिं-

\* "दशमेनाहः"-इति ख ।

शदक्षराः कृत्वा समाने ऽहनि गायत्रं पर्यवबिध्य-  
दित्यथापि वागुक्तं महरत्या वाग्भवत्वन्यस्तनो नास्य  
भूयाद्दशमेनाक्ता सम्बन्धो यथा प्रथमेनेति कापटवः  
सर्वं वैतद् दशरात्रस्य सर्वा वैतस्य दशरात्र इति  
शाण्डिल्यायन आध्यामवाचं दशक्रमं मनोऽप्याप्त-  
वामसंयुक्तं वाङ्मनसे भवत इति ॥ ८ ॥

तत्र गायत्रीः करोति स्थानं गायत्रीणं यदि  
परखाङ्गो गुर्वेवेदः स्तोत्रं तत्र लघिष्ठं कन्दो चिकी-  
र्षीताथापेवमाद्यवसानसमाधिः प्रतिष्ठार्थी वाव  
गायत्रीः करोतीति तासु विवदन्त ऐन्दुः प्राजां-  
प्रत्याः सारारात्रश्चान्द्रमस्यः सौर्य इति शाकपूणि-  
स्तथा धानञ्जय्यः प्रत्यय आदित्यः प्रत्ययो मनः  
प्रत्यये प्रत्ययं तत्र गायत्रं करोति स्थानं गायत्रस्य  
यदि परखाङ्गो गुर्वेवेदः स्तोत्रं तत्र लघिष्ठं सामा-  
चिकीर्षीदथापेवमाद्यवसानसमाधिप्रतिष्ठार्थी वाव  
गायत्रं करोतीति यज्ञायज्ञीय-गौरीविति-रथन्तर-  
वामदेव्यान्वेवंयुक्ताग्निं सामव्यूह इत्याचक्षते ऽथै-  
तस्मिन् ब्रह्मोद्ये वदति भूर्यांसीष इत्यत्र शाण्डिल्यः  
प्रदिशति यद्वादोऽप्रवत्रिरात्रे ब्रह्मोद्यं तदांप्रत्ययिष्य-  
द्यथा वैतद् ब्राह्मणा अभिमन्तः समुदाहरन्तीति

वरुणं मन्त्रं भवत्यन्तनिर्वचना आशिषं इति वृत्वा  
 वरानौदुस्वरीः समभिपद्यन्ते सर्वकृतिं कृत्वा निख-  
 रिता इव मन्यन्ते ऽत आत्मानं मूर्जां प्रत्याप्राय-  
 यन्तो मन्यन्त जर्गुदुस्वर इति समाप्ते हृन्दोव्यूहे  
 सामय्यूहं कुरुत इति गौतमो ऽकृतकारार्थस्वर्यास्त्रिंश  
 मग्निष्टोमसामकरोत्युपत्रदिता हृन्दोमानां नावसाने  
 ऽचिकीर्षीदथापि शिथिलोक्तः प्रतिष्ठीक्तश्च त्रय-  
 स्त्रिंशस्त मवसाने ऽचिकीर्षीदथापि त्रयस्त्रिंशे  
 क्रियमाणे त्रिके सार्वराज्ञे त्रिंशतः स्तोत्रीयं दशमं  
 महः सम्पद्यते सा विराडथापेवं द्वदशं पञ्चविं-  
 शानहः सम्पद्यते नाहीनः साक्षादकार्षः सम्पदा-  
 चिदेन मुपास्यामीत्येतद्वयं शाण्डिलम् ॥ ६ ॥

पञ्चदशस्तोत्राज्जगोतिष्टोमात्सषोडशिकां संस-  
 त्तिकां रात्रिं ब्रूहीति चतुर्विंशति माज्येभ्य आदत्ते  
 हे वामदेव्याञ्चतस्रः साकमशवात्ते दशं गायत्रास्तृचा-  
 स्तान् रात्रे स्थान् निदध्याञ्चतस्रः ककुभः सौभरा-  
 तासां द्वितीयायाश्चतीकायाश्चतुरक्षरं चतुरक्षरं  
 मुबृत्त्य हे प्रथमाया भुपद्व्या देवः स विराट्प्रथमो  
 गायत्रात्तरो वैतहव्यं स्तोत्रीयो ऽतिशिष्टानीतरस्यां  
 ककुभ्यमदध्यात्ताः षोडशिनः स्थाने निदध्याञ्च-

तस्यो नामधेयस्यश्चोष्णिह . एकां चानुष्टुभं तां  
 षोडशिनः स्थाने निदध्यादति शिष्टास्तिस्रः कौत्सश्च  
 द्वे वृहथ्यौ नौधसात्तथा कालेयात्तासा मेकां षोड-  
 शिनः स्थाने निदध्यादात्ताः . सर्वाश्चतुस्त्रिंशदक्षराः  
 सम्पद्यन्ते ऽन्तस्मान् प्रतिशिष्टास्तिस्रः सप्तः स्थाने  
 निदध्याद् द्वे ककुभौ रथन्तराश्चतस्रो यज्ञायज्ञीया-  
 स्तासां द्वे द्वे सन्धिस्त्रोचीयेषूपदध्यादेव मेतां  
 सषोडशिकां ससन्धिकां रात्रिं निर्णामीते ॥१०॥

ततः पृष्ठं ब्रूहीति सवनेभ्यः पूर्वस्त्राहः षोडशिन-  
 श्चतुर्थं रात्रेः षष्ठं सन्धेः षष्ठं पृष्ठ्याश्चन्दोमानं  
 ब्रूहीति त्रिवृतं पञ्चदशयोः समासश्चतुर्विंशस्तत्  
 सप्तमं सप्तदशत्रिणवयोश्चतुश्चत्वारिंशस्तदष्टम-  
 मेकविंशत्रयस्त्रिंशभ्यां नवमदशमे षोडशचत्वा-  
 रिंशं नवमे निधाय पञ्चदशषट्कानादत्ते सर्वं  
 षोडशिनं ते सप्तत्रिंशत्सृचांस्तेषां चतुर्विंशति  
 मादाय दशमस्याङ्गोऽष्टौवष्टौ पंचमानस्थानेषु निद-  
 ध्याच्चतुर आङ्गेषु तथा पृष्ठेष्वेकः सग्निष्टोमसंभ्रः  
 स्थाने तथा सार्परान्ते त्रयस्सृचां प्रतिशिष्यन्ते तान्  
 प्रथमस्याङ्ग उक्थस्त्रोत्रीयान् ब्रुवीतैवं तदुक्थ्यादु-  
 कथ्य संभि संक्रामति त्रिवृतः पञ्चदश मेतां महावृक्षी

सम्पदित्याचन्नत आचार्या दशरात्रो महावृक्षस्तस्य  
 ह्यग्रं गत्वा स्वर्गगमनमुपपद्यत इति नैषा संवत्सिन्  
 दशरात्र उपपद्येत इत्यौपमन्यवस्तस्यस्तुवा अति-  
 शिष्यन्ते तान्यो ऽग्निष्टोमसंस्थः उक्थ स्तोत्रीयान्  
 ब्रवीन्नापररूपं तच्छन्दोमेष्वेषा सम्पत्सिध्यतीति  
 तदग्रेव मेव ब्राह्मणं भवति दत्त ऐन्द्रोऽत इति  
 होवाकाभिप्रतारीं काक्षसेनिर्ये महावृक्षस्यायं गच्छन्ति  
 क्व ते ततो भवन्तीति षडहं महावृक्षं मवोच-  
 त्तस्य ह्यग्रं गत्वा त्रिवृत्पञ्चदशयोः पक्षयोः क्रियां  
 दर्शयति नदपोव मिव ब्राह्मणं भवति त्रिवृत्पञ्च-  
 दशावेव स्तोमौ पक्षौ कृत्वा स्वर्गं लोकं प्रयन्तीति  
 तयोः समासश्चतुर्विंशस्तस्याष्टाचत्वारिंशो द्वाद-  
 श्रातिशिष्यन्ते ऽष्टमात्तथा दशमात्स चतुर्विंशो य  
 एते सम्पदौ विदुंस्ते पक्षिणो ये न विदुस्ते पक्षास्त-  
 दपोव मिव ब्राह्मणं भवति ये वै विद्वांसस्ते पक्षिणो  
 येऽविद्वांसस्ते पक्षा इति ॥ ५१ ॥

अथातो गवामयनं तदेक एकेजाङ्गाभिर्विदधते  
 ज्योतिष्टोमेनायैके ऽतिरात्र-चतुर्विंश-नवाहवता-  
 तिरात्र इति कृत्वा ज्योतिष्टोमेनैव सस्तृणन्यचैके  
 गोचायुषौ दशरात्र मित्युपाहरन्त्येते संवत्सर-

प्रबृहद् इत्याचक्षते शङ्काहत मिति चैतस्यां सशूर्पो  
 वार्कखण्ड आसाञ्चक्रे नानाहोभिर्वयं कल्पग्रामो  
 यथैतद् ब्राह्मणं मथ खलु यः जडं ज्योतिष्टोमदशा-  
 हाभ्यां यज्ञक्रतवः सप्तभिः पर्यायैस्तेषु ज्योतिष्टो-  
 मानां च दशरात्रिकाणाञ्च द्रव्याणां मागमो भवति  
 स्तोमन्वितानि स्थानान्वितानि पृष्ठान्वितानि तन्वा-  
 न्वितानि भागान्वितानि सञ्स्थान्वितान्याशीःस-  
 प्रायाणीतिरूपाच्छान्दसान्यायन्त्यपि च व्यावृत्त्यर्थानि  
 तत्रेह चतुर्विंशे यानि सप्तमात्स्तोमान्वितानि तानि  
 यानि द्वितीयात्स्थानान्वितानि तानि यानि ज्योति-  
 ष्टोमात् पृष्ठान्वितानि तानि यानि दशरात्रात्  
 सर्वाणि रूपाणि क्रियन्त इति तानि यानि छान्द-  
 सान्यभिर्वन्ति प्रवन्ति स्वस्थयनप्रवादान्पक्रमे ऽभि-  
 रूपाणीति तानि तत् खलु बृहत्पृष्ठं रथन्तरं मध्य-  
 न्दिनं कुर्म उपक्रमणीयं महरिति रथन्तरं द्वितीय  
 मिति बृहदीकै चोभयसप्तमानं कृत्वा ह स्माह  
 शण्डिल्यायनोः बृहत्पृष्ठास्ते रथन्तरमध्यन्दिनाः  
 कुशलेनैवं स्वे सवने स्वे ह्यन्दस्युभे वामदेव्योत्तरे  
 भवत इति चतुर्दश हीतुराज्यं समामना-  
 मस्तासां चतुर्थी मुञ्चरत्युतीभवत्यपरूपा प्रायणार्थे

स्थाप्येतत्त्वाः रणप्रवादी भवत्यपहृषां स्वस्थयनार्थे-  
 ऽथ यच्चैतत्सर्वस्वारे भवत्येतां तन्न करोत्यथ खलु पूव  
 मन्वहं ब्राह्मणं सन्तं नान्वहं कुर्म एवञ्च रहस्य-  
 ब्राह्मणे दर्शयत्यपि च शश्वद् ब्राह्मण मधीयते ते वा  
 एते पूवातिपूवा ये पूव मन्वहं मुपयन्तीति ॥ १२ ॥

उद्धरन्त्याचार्यास्त्रैककुम्भं समीनोर्दक्योन्यपूरुषं  
 प्रायणार्थं तच्चैतत्सौभरं पृष्ठान्वितं विकल्पो वास्माद्  
 ब्राह्मणचोदितत्वादथ खल्वाहः सर्वाणि, हपाणि,  
 क्रियन्त इति तत्र खलवाचार्याः एतेष्वेव द्रव्येषु  
 सर्वास्तस्तोमान्त्सर्वाणि पृष्ठानि सर्वा विभक्तीर्दश-  
 रात्रहपाणीति भक्तिमात्रेणैव कल्पयन्ति शिवतः-  
 पञ्चदशी चतुर्विंशत् सम्पद्यते पञ्चदशसप्तदशान्  
 पञ्चैकविंशान् षडेव त्रिणवान् षड् त्रयस्त्रिंशा-  
 न्त्सर्वाणि पृष्ठानि बृहद्रथन्तराभ्या मुपाप्तान्येतत्  
 परोक्षाणि हीतराणि वीभदेवेन वै तस्मादिसृष्टान्यु-  
 द्घोयेन वै तं हि सर्वेषां रूपमित्यनिरुक्तायां  
 निरुक्तं विभक्तं सर्वाभिप्रायं वामदेवेन स्वरविभक्तिः  
 पृथग् दशरात्रिकेभ्यो द्रव्यागमं सम्पश्येदुपवती  
 प्रथमादसियवती द्वितीयाहविद्युतवती तृतीयात्सत्रा-  
 साहीयं सस्तोवीयं चतुर्थाद् खलु साकमग्नः



मुक्थप्रणये ऽकरिष्यदतिरात्रे तत् कृतं भवति तत्र  
 समविधारयिषीत् तत्रैतत्त्रासाहीयं चाहोपक्रमा-  
 दुपक्रमेद् बार्हताद् बार्हते सोढवतीषु सोढवन्नामो  
 ऽथेदं कर्म सहेमहीति पार्श्वपञ्चमा दुद्वंशीयं  
 षष्ठाद्यद्वा उद्वंशीयं तदुद्वंशपुत्र इति हि भव-  
 तीत्युद्वंशीयेनैव सर्वरूपावाप्ति मेके बहुसप्तमा-  
 दिन्द्रे अग्ना नमो बृहदित्यष्टमात् मम तद्द्वैर्घ-  
 श्वसे नवमादभीवर्त्तः सस्तीत्रीयो दशमात् ॥ १३ ॥

॥ इति निदानसूत्रे चतुर्थः प्रपाठकः ॥

॥ अथ पञ्चमः प्रपाठकः ॥

अथैषोऽभिपूवस्तस्मिन्सारशये गेयं कन्दःकृष्णं  
 बभूवेति शाण्डिल्यो ऽहं मेव प्राग् विभुवती ऽहं मूर्ध्वं  
 सादित्यव्रतानि शुक्रियाणि विषुवति स तवश्वा-  
 वीमानि सामानि व्रत इति समूहति बार्हद्रथन्तर-  
 पृष्ठाह्नित्याभिरनित्योऽयं षडह इत्यषोडहिको-  
 रनित्या इत्याचघते ते खलु शश्वद्वाङ्गविनः स्तीत्री-

यान् प्रतिपदः कुर्वन्ति यथास्थानं भवानुहूपाननु-  
रूपान् वयं प्रतिपदः कुर्मः स्तोत्रीयानुहूपानेवं  
यथोत्तरं स्तोत्रीयानुहूपाणां प्रत्याहारो भवतीति  
षडहवशेन नानां प्रतिपदः समानं पर्यास मेकाहः  
वशेन तेन प्रच्युतं द्वितीयपर्यासः प्रथमेऽहन्यनु-  
गृह्णात्यथेतान्येव वै ब्रूथिकनन्याऽन्याऽन्युहृत्य गाय-  
त्राणि तद्विभक्तीनि प्रतिनिदधाति त्रीणि त्रिणिध-  
नानि करोति त्रीणि त्रीणि ह्येव षडहेऽवधारित-  
त्रिणिधनानि भवन्ति तानि यत्र यथाकृतम् मध्यस्थ-  
त्याभास्यं प्रायश्चित्ति साम षष्ठेऽहनि चिकीर्षन् पार्थं  
द्वितीयस्य माध्यन्दिनाम्यं करोत्येतत् पुरस्तात्स्तोभं  
क्षत्रसामं ब्रूहति षष्ठेऽभिरूपं तेन प्रच्युतं सिंह-  
वहासिष्ठं षष्ठेऽहन्यनुगृह्णाति स्वरविभक्तेरनु-  
ग्रहाय ॥ १ ॥

अथैते त्वाष्ट्रीसामं चांश्वोग्रं च तृतीयचतुर्थयो-  
रङ्गोर्व्यतिहरति चार्हयोर्व्यतिषङ्गाय तत्र ता एव  
देवताविभक्तयोः स्थ सामान्तविभक्तय एतेषां मेव  
द्रव्याणां तद्विज्ञाः कल्पयेत् पञ्चमे तु निधनविभ-  
क्तिर्न विद्यते षष्ठे च्छेडाविभक्तिस्तत्राभ्यावारयन्ति  
बाह्वङ्गिरं वानुकल्पयेत् सौश्रवसं वा उक्त्यानां

ब्रह्मसाम कुर्याद्गोष्ठं पृष्टे नु कल्पयेदिति तस्य  
 त्रिकद्रुकां स्तोमाः षाडहिकानि तन्त्राण्यस्ति च  
 षडहप्रधादोऽपि चैव रहस्यब्राह्मणे दर्शयति ज्योति-  
 ष्प्रायणो ज्योतिर्दधनः षडहो ऽभिप्लव इति चैत-  
 रेयिणां तां सुमदेवं प्रयुक्तं एवं ज्योतिष्प्रायणो  
 ज्योतिर्दधनः षडहो भवति यथास्थाम मितरदिति  
 तत्र यान्यैकाहिकानि द्रव्याणि स्तोमान्वितानि  
 तानि यामि षाडहिकानि तन्त्रान्वितानि तानि  
 यानि कन्दोभिकानि त्रयान्तानि त्रयस्ते त्रय इमे  
 लोकासन्नास्ते लोकासन्नास्त इमे बृहद्द्रव्यन्तरपृष्ठास्ते  
 बृहद्द्रव्यन्तरपृष्ठा इमा इति रूपा क्खान्दखान्यायन्यपि  
 च व्यावृत्त्ययानि स्वादिष्टां प्रथमस्याह आर्भवीयां  
 करोति या ह्येतस्याह आर्भवीया भवति न तस्या  
 उत्तरे अधीमहे तस्याः शश्वन्माषशरावय उत्तरे  
 अधीयते तां ते कुर्वन्त्याभीशवं चतुर्थे नावमिकं  
 कर्थादिति धान स्रय्यो व्यावृत्तये पृष्ठयाभिप्लवयोश्चातु-  
 र्थिक मेवेति गौतम एकेतस्याहः स्वरविभक्तिर्भव-  
 तीति भवतीति ॥ २ ॥

अभीवर्ती ब्रह्मसमंति तस्य स्तोत्रीयविधिर्यदितः  
 समानं साम भवत्यन्योन्यः प्रगाथ इत्यत्यन्तानानात्वं

य अस्तुतं कुर्वते यथा द्रुग्धा मुपसीदे देवं तदिति  
 प्रयुक्तप्रतिषेधस्तस्यान्ववायः पञ्चसु मांसु बार्हताः  
 आप्यन्त इत्यथातेः प्रगाथायतानि चतुःशत मैन्द्रा-  
 बार्हताः प्रगाथा दशतयीषु तांस्त्यमांभनेत्तेषां चत्वारोऽ-  
 ऽन्वचस्थाना बृहद्रथन्तरकालियस्तोत्रीया अहरहः  
 शक्यन्त इन्द्रक्रतुरीतरपक्षिकः शत मतिशिष्यते तेषां  
 मेकं चतुर्विंशे कुर्यान्नून् शत मतिशिष्यवे सप्ता-  
 शीतिः सतोबृहत्स एकेन न चिंशदंसासोवार्हता-  
 स्तृचास्तेषा मिहैकविंशति माहरति तद्विंशति-  
 शतं सम्पद्यते विंशतिशतं पञ्चानां मासांना मांभि-  
 पुविकान्यहानि भवन्ति तेष्वेतान् प्रगाथान् प्रयुञ्जीति  
 तृतीयेऽहनि सतोवृहतीः कुर्वन् य एष पञ्चमस्य  
 मासस्योत्तमोऽभिप्लवस्तस्मिन् द्वे सतोवृहतीः कुर्यात्  
 तृतीयपञ्चमयो रङ्गोर्हि प्रगाथा अनुभवन्तीति  
 तत जङ्घं छन्दसी संयुज्यादीष्णाहे तच्च एकां गायत्रीं  
 मुपदध्यात्सतोवृहत्यतिशेषं समाप्तीति गौतमोऽष्टौ  
 सातीवार्हतास्तृचा अतिशिष्यन्ते तान् प्रथमे चाभि-  
 प्लवे कृत्वा द्वितीयस्य द्वाहे तत जङ्घं छन्दसी संयुज्या-  
 दिति चतुरस्ररैरेव छन्दोभिरेदव्य मिति गायत्र्यां  
 चतुर्विंशे ऽभौवर्त्तं कुर्यादुष्णाहि प्रथमं चाभिपुविके

ऽनुष्टुभि द्वितीये तत् ऊर्ध्वं वृहत्या पञ्चमास इत्वा य  
 एष पञ्चमस्य मासस्योत्तमोऽभिप्लवस्तस्य पञ्चमेऽहनि  
 पङ्कतीः कुर्यादपि वा षष्ठे तत् ऊर्ध्वं त्रिष्टुभ्युत्तमे स्वर-  
 साम्नि जगत्या मित्यत्रापि सातोवृहत्यतिशेषः समा-  
 प्येत्वेव गौतमो नवसातोवाहतास्तृचा अतिशिष्यन्ते  
 द्वौ च प्रगाथौ तान्प्रथमे च अभिप्लवे कृत्वा द्वितीयस्य  
 च पञ्चाहे पङ्कतीः षष्ठे तत् ऊर्ध्वं त्रिष्टुभ्युत्तमे स्वर-  
 साम्नि जयत्या मिति ॥ ३ ॥

कृन्दः संयोगरूपेऽद्य विधस्तत्स्थाने चातुरुत्तर्यं  
 मासशब्दवैधर्थ्यं मिति चेत् पञ्चसु मास्त्विति यथा  
 पृष्ठ्यायनोऽपवादस्तु लिङ्गेन दृष्टाणवतीवन्न च सामा-  
 न्तरये तत् कर्मास्तीत्येकदेशे यथा कालकृन्तौ लोके  
 कृतं मिति वृहत्या चैव त्रिष्टुभां चैतव्य मिति  
 त्रिष्टुभि चतुर्विंशे ऽर्ध्वं कुर्याद् वृहत्यां प्रथम  
 आभिप्लविकेऽपि च वृहत्यां मेव चतुर्विंशे वृहत्यां प्रथम  
 आभिप्लविके त्रिष्टुभि द्वितीय एव अनुपूर्वं कृन्दसोः  
 प्रधीगो भवतीति तत् ऊर्ध्वं व्यत्यस्येद् वृहतोच्चयं एव  
 तन्मन्त्र इति शौचिवृच्चिवृहत्या पञ्चमास इत्वा य  
 एते ऽष्टौ सातोवाहतास्तृचः अतिशिष्यन्ते ये चैते  
 चयाऽन्यत्रस्थान्द बृहदयन्तरकालियस्तोचीयास्तैः षष्ठे

मासि त्रैषट्भो व्यत्येख्येद्यदहः कालेयस्तोत्रीये ऽभी-  
वर्त्तं कुर्यात् तरणिरितिसषासतीति कालेय मा-  
सञ्चारोद् यदहो रथन्तरस्य बृहत्स्तोत्रीये रथन्तरं  
स्यादपि वा स्वरसाम्भोरन्यतरस्मिन् रथन्तरस्तोत्रीयं  
कुर्यादच ह्यन्यासु रथन्तरं भवतीत्यथ त्रयस्त्रिंशत्  
प्रगाथ मेकं चतुर्विंशे कुर्यात् सातोवृहत्तं त्रय-  
स्त्रिंशायने ऽभिप्रयुञ्जीतां ऽपि वा न सतोवृहती-  
राद्रियेत य एव चतुर्विंशे त मनुसंहरेदिति ॥ ४ ॥

एतेनैवोत्तराणि द्रव्याणि व्याख्यातान्यत्र द्विप्र-  
गाथाद्यथाकारौ पुरस्तात् प्रगाथान्न्यात्तथोपरिष्ण-  
दिन्द्रक्रतौ सामानि प्रतिकल्पयेत् तावन्ति तच्छन्द-  
स्थानि निधनवन्ति यदि तच्छन्दस्थानि न विद्ये-  
रन्नपि छन्दसानि कुर्याद्यान्यभिहूपाणि सुगीति-  
तश्च निधनतश्च कतम एषां कल्प इति प्रथमौ  
प्रतिषिद्धावित्याहुरथन्तरे सर्वे कल्पा अपि वा द्विप्र-  
गाथ मेव कल्पः स्याद्दोषदर्शी नूनं पूर्वानित्यक्रमी-  
दिति ते कस्य हेतोः षट्प्रगाथं मयनेः समारम्भ-  
न्तीति नेदं षट्प्रगाथं मिति शाण्डिल्यायनो यः  
षट्प्रगाथं चिकीर्षेन्न सतोवृहतीराद्रियेतापि य एव  
चतुर्विंशे त मनुसंहरेदिति स खल्वय मभीवर्त्तः

षट्प्रगाथानधितिष्ठति पूर्वस्मिन् पक्षसिद्धेश्च सतो-  
 बृहतीरेव मेवेन्द्रक्रतुरुत्तरे पञ्च प्रगाथिकानि हे  
 सतोवाहते विकर्ण मष्टम मेव मनयोः समाधि-  
 रित्यथैतत्सुज्ञाने मौष्णिह मां विषुवतः सर्वत्र  
 पृष्ठापञ्चाहवर्जं मतिरात्राञ्चायथाकामकल्पत्पादे-  
 तेषा मङ्गां तदभिभवस्य राथन्तरेष्वहस्सुर्विचार्यते  
 पृष्ठे चैव मिव षडहे नाना स्वर्णिधनानि भविष्य-  
 न्तीति पृष्ठा मेव छिन्दन् व्यूहेत् समूहेदिति व्यूढः  
 स्यादिति शाण्डिल्याथन एव मस्यर्षिदर्शनं भव-  
 द्वाथापेयं पुराणं माचाश्ववच इति समूढः स्यादिति  
 धानञ्जय एष न्याय एव हि ज्योतिष्टोम एवं दश-  
 राचस्य प्रथमस्यैव एवं दशम मेव महौनेकाहा-  
 इत्यथापि समूढ एव पूर्व उत्पन्नो ऽपरो वूढ एव  
 च रहस्यब्राह्मणे दर्शयत्येव मिव ब्राह्मणं भवति  
 छन्दांसि वा अन्योन्यस्य लोकं मभ्यध्यायन्नित्यत्पन्नस्य  
 लोको नाम भवति ॥ ५ ॥

अथाग्नि विलुप्तो वूढः षडहेन हि त्रिष्टुभः  
 प्रतिपन्नां लभते न जगत्यो माध्यन्दिनीन्ताम्र गायत्रौ  
 आर्भवान्तान् यच्चैवं खल्वेतच्छन्दांसि विप्रच्युत्य  
 दशमे ऽहनि सम्प्रकल्पन्ते तत एव व्राहः सिध्यतीति

तदपेव मिव ब्राह्मणं भवति नर्त्तं कृन्दोमेभ्यः पृष्ठो  
 वूह मानश इत्यथापि समूहेन षडहेन सम्प्रयुक्तो  
 भवतीति तस्यैके प्रत्नवद् बहिष्पवमानं कुर्वन्ति न  
 ह्येता वूहकारिता इति नवाहयोगा इमा भवन्तीति ।  
 धानञ्जय्यः कथं मसमापयिष्यन्नवाहं नवाहयोगाः  
 कुर्यादिति तत्र नित्या बुपपन्नौ कविमान्भिपुवन्या-  
 येन पार्थं द्वितीयस्य माध्यन्दिनान्त्य संभिपुवन्यायेन  
 नित्याभिः समूहति नित्योऽयं षडहं इति तत्र  
 तान्येव सामूहिकानि यान्यभिपुवे जनिष्ठाण्येव मेवै-  
 तदन्यत्तदेतत्स्वयोनिकांमः कारयतीति कथं पृष्ठे  
 ऽभीवर्त्त इत्यकर्त्तव्य इति शौचिवृद्धिः पञ्चसु मासु  
 बार्हताः प्रगाथा आप्यन्त इत्येते पृष्ठान्देवेषाम्निः  
 सिध्यतीति कर्त्तव्य इति गीतमो यत्सामावसृजेयुंरव  
 स्त्रर्गांल्लोकात्प्रदोरंनिति हि भवतीति पृष्ठे वा अखैतत्  
 सतोऽवादीन्न ह्येनं की च मांभिपुवाच्चावयन्तीति तं  
 खलु वृहतीषु कालेयद्वितीयं मुकुल्पयामः सन्तान-  
 रूपं मन्त्रिन् भवतीति अथ संभिजित्तीत्यकर्त्तव्य  
 इति शौचिवृद्धिः कर्त्तव्य इत्येव गीतमस्तत्पृष्ठेनेव  
 व्याख्यातः मन्थाप्येष एवैकान् एवैकाह भागच्छत्यभी-  
 वर्त्तमध्यन्दिन इत्यभीवर्त्तमध्यन्दिन इति ॥ ६ ॥



अथैते स्वरसामानस्तानग्निष्टोमानाह नकाह-  
 कारिणः कुरुकथ्यानेकेविशत्यहकारिणो योऽन्यथा  
 कुर्यादकुशलः पुरुष इति विद्यादयैषां पृष्ठन्तोत्रीया  
 आनुष्टुभा एकबृहतीका अनुष्टुभौ पूर्वे राथन्तरयो-  
 र्वृहत्युत्तमेत्येतदेव विपरीतं द्वितीये चतुर्द्धचं तृतीयस्य  
 भवति तासां तृतीया मुहृत्य चतुर्थी तृतीयां कुर्म  
 एषा बृहती भवतीत्यथ धनासु षोडशिसाम भवति  
 सर्वास्तचानुष्टुभो भवन्ति यत्र खलु बृहद्रथन्तरे ते  
 करोति स्वराणा मेव पृष्ठत्वे तिष्ठमानो ऽथ स्वराण्या-  
 नुष्टुभान्यनुष्टुप्स्विते तत्रयान्यैकाहिकानि द्रव्याणि  
 पृष्ठान्वितानि तानि यानि षोडहिकानि तन्त्रान्वि-  
 तानि तानि यानि छन्दोमिकान्यभिप्लव एव तानि  
 वराखातानि शुक्लकवैष्टम् प्रथमे ऽहनि करोति  
 दिग्नुयहायादित्तं मच स्वरं भवति तेन प्रच्युतं  
 हि तं तृतीये ऽहन्यनुगृह्णामि पक्षसोः सन्तानाय  
 विकल्पयन्त्यं ऽनुष्टुभौ मध्ये निधनान्यैडान्यनुजिघृ-  
 क्षन्तः सं खलु विकल्पयन्स्वाराण्यन्यानि कुर्याद-  
 विकल्पयन्नेडानि विकल्पयन्तश्चोत हैके विकल्प-  
 यन्तश्चैडानैव कुर्वन्ति तृतीयसवनज्ञात्रेण त्रिक-  
 ल्पयन्स्वेवस्वाराण्यन्यानि कुर्यादविकल्पयन्नेडानि

वसिष्ठस्य प्रियं त्रतुर्थाद्याथान्तर्यात् प्रत्याहरति तैरश्वा-  
वेति विचारयन्त्यदृशीयबाध मिहानुगृह्णात्यामही-  
यवं द्वितीयात् प्रच्युतं तृतीये ऽहन्यनुगृह्णात्यत्र  
स्वयोनि भवतीति ॥ ७ ॥

अथैष विषुवाऽस्तत्र खलु बृहद्रथन्तरे करोति  
शुक्रियाणां मेव पृष्ठत्वे तिष्ठमानो ऽथर्षिः स्वर्गीक्तो  
विषुवाऽस्तत्र स्वर्गीक्ते बृहद्रथन्तरे अचिकीर्षीत्ते यत्प-  
वमानयोर्निदंभ्रांत्येतदेनयोरपयतोः स्थानः भवति ते  
येद् बृहत्यां ज्ञानुष्टुभिं चैतौ नेदिधिनीं चालुष्पदावा-  
वांपा विति तत्र खलु गोस्तन्त्रं करोत्येतदन्ततन्त्रं  
मन्तं विधेयं भवति मंथचरस्तत्र यान्यन्तलक्षणाणि  
( मध्यलक्षणां न्य-\*) ज्योतिर्विधानि शान्तिविधानि  
शुक्रियसदृशान्यभिरूपाणि तान्यथ स्वस्वत्रानुष्टुभः  
प्रतिपदः करोति यथैतद् ब्राह्मणं मुपवतीं वयं परमे  
ऽहनि परमां प्रतिपदं कुमरीं यान्वन्त्यानि बृहद्रथन्तरा-  
भ्यां पृष्ठानीत्, ह स्माह प्राण्डिल्यायन उपवत्येव  
तेषां कुशलेनोपोद्धिः तानि बृहद्रथन्तरे इत्यथा-  
प्रात्मात्की विषुवाऽस्तः प्राणोक्तया गवयत्राः प्रत्यपि-  
त्सीद्धान्तो ऽनादान्त मिति वा वातेनावारिविति माष-

\* क. पञ्चमे त्वीऽशी न विद्यते ।

शरावयोऽग्निनिर्द्वायं पवत इति शुक्लासत्या उत्तरे  
 उपवती चाग्रियत्रतो च तत्रैके नाभीवर्त्तं कुर्वन्ति  
 पौर्णपन्निकोऽयं भवत्यथाप्येव सुज्ञानेन समाधि-  
 रिति मध्यन्दिनेऽथं कुर्म एव मिव ब्राह्मणं भवति  
 तावुभौ विषुवति कार्याविति यदेतत्सुज्ञानेन समा-  
 धिरित्यार्भवत्वरं तद्भवति नो, पूर्वपन्निक्र मूर्द्धं पृष्ठाद-  
 चिकीर्षीत् ॥ ८ ॥

अथ खल्वाह त्रिष्टुब् जगतीषु भवतीति कखेदं  
 ब्राह्मणं स्यादिति पृष्ठाग्निशोमसाम्नोरित्याहुरेते क-  
 ल्पाख्याते भवत इत्यथाप्याहुस्त्रिष्टुभ एवेमा जगत्तद्वृ-  
 त्तंयो भवन्तीत्यथाप्याहुस्त्रिष्टुभजागतादेवेमाः सूक्ता-  
 दाहता भवन्तीत्यथाप्याहुर्जागत मेवात्रैकं पदं भवती-  
 त्यपि वा सम्पदं एव ब्राह्मणं स्यादपि वा योनि-  
 वादंश्च कर्मवादश्च स्याज्जागतं हि सत् त्रिष्टुप्सु  
 क्रियत इति समसितश्च त्रिष्टुब्जगतीर्मन्य इति  
 कौत्सस्त्रिष्टुब्जगतीषु भवतीति सति कि मन्यत्  
 समासादित्याकर्त्तं पृष्ठेऽभीवर्त्तलोके सामानि  
 प्रतिकल्बयेदिति गौतम एषं च एक्षसोः समाधिरपि  
 चेव समा मेन्द्रक्रतुरनुगृह्यत इति तत्रैतेषा मेव  
 चत्वारि यान्यभिप्लवे वासिष्ठा गौह्रवे च द्वितीयप्रथम-

योरङ्गोः शुद्धाशुद्धीयं चेति विचारयन्ति शाण्डिल्य  
एतदक्षरणिधनं भवतीति नाद्रियेतेति, शौचिवृत्ति-  
स्तदभीवर्त्तनेनैव ध्याखात् मथापि नित्यान्येवाभिरूप-  
तराणीतीन्द्रक्रतु मस्तूयमान मनुश्सयन्त्सामानि  
प्रतिकल्पयेदिति गौतमो जनित्रं विष्वजिति यानि  
पृष्ठे ऽभीवर्त्तलोके तानि दशरात्रिके पृष्ठ्ये तेषां  
चत्वारि कन्दोमेषु यथाभागं यथापृष्ठं वा पौरुमीढं  
व्रतेन ज्ञात्रेण श्येतं वा तन्वज्ञात्रेणैवं वा खलु  
कुर्यान्न वाद्रियेतासः मात्र मिन्द्र क्रतु मनुश्सयिवु-  
मिति ॥ ६ ॥

अथोप दशरात्रं संस्मरतां पूर्वं पक्षसि विचारो  
भवत्यतिरात्रचतुर्विंशे त्रीनभिप्लवान् पृष्ठ्य मिति  
कृत्वा पञ्चायनमासानुपेयुरभिरिति स्वर्साम्नो न  
त्रिंशत्तमा मुपसंस्मरत्यथैतं दशरात्रं मेक आत्रत्तं-  
यन्त्यावृत्तिसाधुत्तरं यज्ञ इति न वयं मावर्त्तयामो  
ऽनुपेतं पूर्वं पक्षसि तं कक्षादावर्त्तयामेत्यथापि नियुक्त-  
मानसो भवन्ति यद्यु हैव सृते मानसादावर्त्तयिष्यद्दशमं  
र्ष मानसं चरद् व्ययिष्यद्यद्यु वै स मानसं व्रतं च  
मानसञ्च व्ययिष्यदपि चाकृतेन दशरात्रेण मानस  
मध्यशांयिष्यत्स कथ्य इतोरकृतेन व्रतेन मानस

मधि शाययतीति व्रतसांख्यत्वात्प्राजापत्यं व्रतं प्राजा-  
पत्यं मनः सर्वाग्निव्रतं सर्वाग्निमनस्तदपि शश्वत्  
सांवर्गजिता गीर्तमा उपरिष्ठाद्गतस्य मानस मधीयते  
प्राकृतेन व्रतेन मानस मधिशेषयामेति सामान्यात्तु  
वय मन्मधिशाययन्तो मन्यामहे ऽथैतान्यक्षिपयन्त्यहा-  
नीत्यात्रक्षते त्रिरात्रवतुर्विंशे नवाहङ्कोत्रायुषी दश-  
रार्चं व्रतात्त्रिरात्रे अक्षयणादनपक्रमणाद्द्वैत्यनपक्रम-  
णादेति ॥१०॥

अथातः संवत्सरा व्रगाणां प्रवृत्तसंवत्सरा वर्गा-  
स्तेषु धीरो मनीषया कर्मण उपसदो विद्यात्संख्या  
वैषु व्रतानि च षट्त्रिंशोत्तो नवोनश्च षडहोनो ऽथ  
सावनो ऽथाष्टादशभिर्ज्यायानहोभिः सावनात्परो  
नक्षत्रं मिदं मांसश्च तस्य चैव त्रयोदशी चान्द्रमसः  
सावनश्चोभाव्याष्टादश्युत्तमो ऽष्टासप्तत्रिंशतं पौर्ण-  
मास्यां प्रसाधयेद् गवामयज्ञस्योपायंश्चतुरः प्रति-  
पादयेत् तेषां नक्षत्रं प्रथमस्तस्य सप्तत्रिंशिनो मासाः  
स्तप्तत्रिंशतिर्नक्षत्राणां तस्य कैल्यः प्रथमस्य ग्रथ-  
मस्याभिप्लवस्य स्थाने त्रिकद्रुक्वग्रहं कुर्यात्प्राग्विषु-  
वत उत्तमस्योत्तमस्योर्ध्वं विषुवतस्ते खल्वभिप्लवतन्व  
एव क्रमाः सुरित्येक एते चेहाधिकृता न चापि निव-

स्यत्यथापि दृश्यते चाहस्त्राहतन्चे कृत्वा यथा खर-  
सामानस्त्रिकद्रुकपञ्चाहस्त्राभिप्लवतन्चे सप्तदशराचे  
स्वरतन्त्रा इत्यपर मेवञ्च तन्त्राविलोपोऽपि च  
सूत्रेषु त्रिकद्रुकत्राहः खतन्चो भवत्यथ नवोनस्तखैवं  
त्रयोदश मासाः सम्भार्ययोर्मसिद्योर्नवाहं लुम्पेच्चतुरह  
मेव प्राग्विषुवतः पञ्चाह मूर्द्धं तस्य कल्पः प्रथ-  
मस्याभिप्लवस्य स्थाने ज्योतिषं च गां च कुर्यात्प्राग्  
विषुवत ऊर्द्धं विषुवत उत्तमस्याभिप्लवस्य स्थाने  
ज्योतिषं नाच विषुवानभिभवत्यन्तरे ऽत्र पक्षसि-  
विषुवानुपसङ्गायत इत्यथ षडूमाश्चान्द्रमसाः षट्  
पूर्णापक्रमा जनावसानाः पूर्वं पक्षसि मासाः खुरूनो-  
पक्रमाः पूर्णावसाना उत्तरे तस्य कल्पः प्रथमस्य प्रथ-  
मस्याभिप्लवस्य स्थाने ऽभिप्लवपञ्चाहं कुर्यात्प्राग्विषुवत  
जनेषु मासेषुत्तमस्योत्तमस्योर्द्धं विषुवतः ॥ ११ ॥

व्याख्यातः सशब्दः स एष आदित्यसंवरसरो  
नाक्षत्र आदित्यः खलु शश्वदेतावङ्गिरहोभिर्नक्ष-  
त्राणि समवेति त्रयोदशाहः त्रयोदशाहं मेकैकं  
सर्वत्र मुपतिष्ठत्यहस्तृतीयं च नवधाक्ततयोरहो-  
रात्रयोर्द्वे कले चेति सांवत्सरास्ताश्चतुष्षञ्चाशतं  
कलाप्ते षण्णववर्गाः स षट्षष्टिचिंशतः षष्टिचिंशते

श्लोकौ भवतः सप्तविंशती राष्ट्रस्य राज्ञो वसतयो  
 मितास्त्रयोदशाहं त्रयोदशाह मेकैकं नक्षत्रमुप-  
 तिष्ठति चयोदशाहानि तृतीय मङ्गश्चतसस्त्रेधा दश-  
 तयो विकुर्वं चिन्वीं पन्थानं विर्ततं पुराणं चत्वा-  
 रिंशती नवरात्रैः समश्रुत इत्यथाष्टादशभिर्ज्याया-  
 नादित्यसंवत्सर एव तैर्ग्रगयजिको भवत्यादित्यः खलु  
 शशुदेकदा अण्मासानुदङ्ङेति नव चाहानि तथा  
 दक्षिणा तदप्येते श्लोका भवन्ति यस्मिन्वै परिवत्सरे  
 सौर्यो मासो ऽथ चान्द्रमो नाक्षत्रो न विलुप्यते कः  
 खित्तं वेद कः खिदष्टासप्ततिःत्रिंशते तस्मिन्संवत्सरे  
 मिते सौर्यो मासो ऽथ चान्द्रमसो नाक्षत्रो न विलु-  
 प्यते सप्तविंशति मेवैष सप्ताहानेति दक्षिणा तथोदङ्  
 सप्तविंशति मिति तस्य कल्पः सम्भार्ययोर्मासयो-  
 रष्टादशाहान्युपाहरेन्नवाह मेव प्राग्विषुवतो नवाह  
 मूर्द्धं त्रिकटुकाञ्चाभिपुवं च प्राग्विषुवतो ऽभिपुवच्च  
 त्रिकटुकाञ्चावृत्तान्मूर्द्धं विषुवतः ॥ १२ ॥

कथं मनाहितग्निः सवासनं मिति न विद्यत  
 इति प्रागिदं ल्यायतः सर्व इष्टप्रथमयज्ञाः पृथक् सचो-  
 पकरणानीष्टा समाप्राग्नीत्सत्रे मासित्वाद्दवसानो-  
 यान्तान्द्विवजो तृत्वा पृथक् पष्टशमनीयैर्यजेन्निति

नो. विधानं यथा त्विदं मद्यं सचिषो भवन्त्यहीन-  
याजका इमे कृष्णाजिनकण्ठा भवन्त्यथापि यः सत्रे  
करत्नद्यजमानो मन्येतापि नूनं सो ऽहीनैकाहेष्वपि  
यजमानो मन्येत तत्र ह्यपि करोतीति यद्यु वै यज-  
मानशब्दाद्यजमानो मन्येतपि नूनं ये यंजामह  
इतीष्टिपशुं बन्ध्वपि यजमानो मन्येत तत्र ह्यपि  
करोतीत्यथाप्याह य एतेनानिष्ठेति तदेतदनाहि-  
ताग्नौ साधिष्ठं मुप पद्यत इति विद्यत इत्यपरं मेवं  
च समारम्भाऽपि चैवं सूत्राणि भवन्ति स्वास्तीपाकैरनर-  
हिताग्नयो यजेरन्नित्यथापि दृश्यन्ते पराग्निष्विज्यां  
यथा पुरोहितस्वाग्निभिरम्बु ममु चरन्तीति तदपि  
शश्वद् ब्राह्मणं भवति यथा पररथेनाध्वानं मिया देव  
मेष स्वर्गं लोकं मयेति यः पराग्निषु दीक्षितं इत्य-  
थापि ब्राह्मणं भवति तेषां ये पुरोडाशिनः स्युरपि  
ह्यपुरोडाशिनो भवन्तीतीवार्थो भवत्येतेनानाहिता-  
ग्नीनां सूत्रासनं मुक्तं मथपि ब्राह्मणं मेव भवति  
तेषां ये पुरस्ताद्दिदीक्षाणाः स्युर्यद्यु वैषां गृहपति-  
रित्यपि ह्यदिदीक्षाणा एव भवन्तीतीवार्थो भवत्येते-  
नानिष्टप्रथमयज्ञानां सूत्रासनं मुक्तम् ॥ १३ ॥

॥ इति निदानसूत्रे पञ्चमः प्रपाठकः ॥



॥ अथ षष्ठः प्रपाठकः ॥

अथापि समाहारसिद्धिं सचं भवति तदेतत्  
 संस्रूप मग्नयस्तव द्रव्याणि च मन्त्रैर्वय मित्यथ यथै-  
 तच्छाण्डल्यायनायैर्गृहपतिस्तथा विंशत्सुक्तेऽथ कः  
 पृष्ठशमनीयः स्यादिति यथाकामी पथ्यानां दक्षिणा-  
 वता मिलिं वर्षगम्योऽनारभ्य वदति ब्रह्मादुदवसाय  
 दक्षिणावता यजेतेत्यथापि पृष्ठशमनीयं नाम क्रतु  
 मधीमहे ऽथापि सारस्वतस्त्रेष्टिरेव पृष्ठशमनार्था भवति  
 तथा दार्षद्वितौरयोरिष्टिर्वा पशुर्वति ज्योतिष्टोम  
 इत्यपर मनादेशे क मन्त्रं प्रतीया मथाप्याह यामि-  
 तदक्षिणेव स्यादेष एव कार्द्व इत्यमितदक्षिण उ खलु  
 पृष्ठशमनीयो भवत्यथाप्येष सत्राणा माह्वन्तेषु दृष्टो  
 भवत्यथ मुं खल्वन्ततम इत्यथाप्येष उच्चावचाना  
 माह्वराणा मन्तेषु दृष्टो भवति यथा चातुर्मास्त्रेषु वाज-  
 पेये राजसूये सदृश-वज्रयोरिति यदेतत् सारस्वते  
 दार्षद्वितौरयोरिष्टिप्रायः स भवति सुत्याप्राये  
 तु ज्योतिष्टोम एवाभिरूपतर इति तदपि शश्वद्  
 ब्राह्मणं भवति तस्मादुदवसाय ज्योतिष्टोमेनाग्नि-  
 ष्टोमेन रथन्तरपृष्ठेन सहस्रदक्षिणेन पृष्ठशमनीयेन  
 यजेतेति यजेतेति ॥ १ ॥

अथात एकाहास्तेषां यानि ज्योतिष्टोमानि  
 द्रव्याणि नित्यानि तानि यान्यन्यान्पुक्तांश्वयानि  
 तानि बृहत्पृष्ठेष्वन्यत् तन्त् करोति बृहदेकाहेषु  
 स्थानवच्चिकीर्षन्नद्ये प्रत्नां माध्यन्दिनीया मेषा सः  
 र्हाफिता बृहतेति यस्तेमदां माभवीया मेषा बाहता  
 दद्द् इत्यथ यत्र सार्थिचिकीर्षा \* भवति परिखानां  
 तत्राभवीयां करोति तदाहुः परिखानैवैतस्य तन्त्स्य  
 पुगर्भवीया बभूव ताः सानुर्वीराहिरपनिनाया-  
 षडहमात्रो भवतीति सैषा तयोर्वाक्सहित्ता  
 प्रोच्यते इतो यान्यन्यानि द्रव्याणि बाहृतलिङ्गानि वा  
 तानि भवन्ति बाहृतेभ्यो वाहोभ्यो ऽयत् सोम इति  
 माध्यन्दिनान्तीया बाहृतलिङ्गा सूर्यवत्य आर्भवा-  
 न्तीया दशमादन्तान्विता अन्ते हि बाहृतपृष्ठमित्ये-  
 तद्गोस्तत्र मित्याचक्षते ऽथ यत्र ज्योतिष्टोमे तन्त्  
 बृहत्पृष्ठं तद्राजयज्ञेषु कृषा शोणा भवति वृषा हि  
 राजेति ब्राह्मणोभमानां च ज्येष्ठयज्ञे राजजातीयत्वा-  
 देवैतस्मिन्नेवं तन्त् बृहत्पृष्ठे सूर्यकथो न चक्षन्तोम-  
 विलाप उक्तमाहा पृष्ठादाभवे स्तोमं प्रत्यवरोहः प्राग्  
 ज्योतिष्टोमविचारेभ्य एतयोस्तत्रयोः समास सुभय-

\* "सार्थी चिकीर्षा"-इति ख ।

सामतन्त्रं मित्याचक्षते प्रतिलोम मग्निष्टोमेष्वनु-  
लोममुक्थ्येष्वग्निष्टोमभक्तिर्हि स्वादिष्टोक्थ्या भक्ति-  
र्यस्ते मदाथ यच्चैकवीं माध्यन्दिनीया भवन्तीन्द्रा-  
येन्दो मरुत्वत इति तत्र करोत्येषां सामान्या तृच-  
प्रथमा मरुत्वन्तीत्यथ यत्रान्ये माध्यन्दिनीयार्थवीये  
भवतः कल्पसंप्रायाणि च द्रव्याणि तदाशीस्तन्त्र  
मित्याचक्षते ऽथ यत्तद्भिवादि द्रव्यं भवति यत्कामः  
क्रतुस्तत्कल्पसंप्रायं मित्याचक्षते तदेतत् सार्वक्रतु-  
कम् ॥ २ ॥

अथैतानि बृहद्रथन्तरयोर्विभक्तानि स्थानान्यपौ-  
तरेतरस्य तन्त्रं गच्छतोः प्रतिपदाज्यानि ब्रह्मसा-  
मौष्णिह मित्यभीवर्त्तसु राजयज्ञेषु भ्रातृव्यस्याभि-  
वृत्त्यै भ्रातृव्यवान् हि राजेति यत्र वोभयसामा सद्-  
रथन्तरपृष्ठोमा नौधसेन बृहतः प्रत्याहारो ऽभूदिति व  
यत्र वा प्रजापतिप्रवाद एकाक्षरं णिधन एकः प्रजा-  
पति रिति यच्च वाहर्मणस्य नाना ब्रह्मसामानि  
चिकीर्षति तत् प्रथमे ऽहनि करोत्यक्षरणिधनानां \*  
प्रथमं मायतनं मिति आग्रन्तीथं प्रायश्चित्तार्थेनैव  
भवत्यथ यत्र नाग्निष्टोमसाम भवति तदाज्ञायज्ञीय

\* "करोति पञ्चाक्षरणिधनानां"-इति ख ।

मनुष्टुभि भवत्येष नेदिष्ठे चतुष्पदं चावाप इत्यथ  
यत्र श्यावाश्वं प्रच्यवते तद्रथन्तरपृष्ठेषु शुध्यं निह-  
वानुग्रहायं ब्राह्म्यस्तोमेषु च ब्राह्म्यानां मुपहवायाथ  
यत्र स्तोमप्रत्यवरोहस्तद् बृहत्पृष्ठेषु पौष्कलं रोह-  
दर्शनं शुध्यं स्तोमप्रत्यवरोहे न चिकीर्षति विषमेषु  
स्तोमेष्वभि स्तोमा राथन्तरेषु परीतरं बार्हतेष्वेते  
राथन्तरीबार्हत्याविति तत्र गोआयुषोऽर्द्धं चतुर्द्वयं च स्थं  
कुर्वन्ति भाल्लङ्घिनश्चतुरस्रं चैकर्चान् व्यत्यरसेन काल-  
बविनाऽध्यास्यायां त्वेवैकर्चावद एकस्यां प्रथमायां  
मंहस्तिष्ठेषु परास्त्रदंस्तिष्ठेषु पूर्वास्त्रदोऽध्यास्याया  
मिति शाध्यायंनिनस्रं च प्रथमायां यय मेकचं कृत्वा  
तस्मिन्नेव त्वचे दे त्वचस्थे अध्यास्याया मन्तत एकं  
तां शशकर्णकृष्णैत्याचक्षत इतरथो अनध्यास्यायां मध्य  
एकर्चावमितस्तच्चौ यथैतदग्निष्टुत्युषम इति ॥ ३ ॥

विभक्तावुकथप्रणवी प्रमं हिष्टीयवन्ति राथन्त-  
रेषु साकमश्वप्रन्ति बार्हतेषु द्वाभ्यां नान्यभयेषां  
पङ्कानुग्रहायाथ यत्र चतुर्षी भागः प्रत्युपशेते नार्मेधं  
वा नार्मेधसदृशं वीक्यान्तेषु चिकीर्षितं भवत्यथैतौ  
विश्वजिदभिजितौ पृष्ठ्यपृष्ठे स्तोमयोरन्तस्थ वेति  
शशिल्हल्यः पृष्ठ्यस्तोमस्याभिजितपृष्ठस्य विश्वजित्-

पृष्ठ्यदशरात्रयो रित्येक एतेनैवानुपूर्वम् बृहद्दश-  
 न्तरपृष्ठमभिजितं पृष्ठ्यस्तोमन्यायेन रथन्तरमग्नि-  
 ष्टोमसम रथन्तरभक्तिं रथं भवति पूर्वत्वात् तद्बृह-  
 तानाध्यशिशायीषीज्ज्योतिष्टोमसं न्नपूर्वत्वात्तत्रया-  
 न्यभिर्वन्त्यभिहूपाणि तानि जितिप्रवादान्युभयो रग्नि-  
 जितोऽतिरात्री भवतो ब्राह्मण आज्य मुद्गरत्याज-  
 भस्तोत्रोयं मानसञ्चरमिति सञ्चारये दिति धान-  
 स्रय्यः किं हि यो ऽहो रात्रिं मुपसञ्चारये दिति  
 न सञ्चारये दिति गौतमो ऽसञ्चारकुशला यज्ञा  
 भवन्ति तत्रैतत् करोत्यभि प्र गोपतिं गिरेत्यभिवतः  
 स्थानेऽभिवत्सुज्ञानमुष्णिहि रथन्तरभक्तित्वान्न शुध्यं  
 चिकीर्षति नो पौष्कलं बृहति पृष्ठे तत्रैतत्  
 करोत्युभयभक्तिमिश्रमिधनं सर्वपृष्ठं विशुजितं रथ-  
 न्तरं मध्यन्दिने बृहदग्निष्टोमसामैव मिव ब्राह्मणं  
 भवति यदथन्तरं प्रथमं बृहदुत्तमं मध्यं इतरा-  
 णीति ॥ ४ ॥

वैराजं होष्टामैतद् बृहत्परोक्षं मेतच्चैषामेक-  
 निधनं मेकनिधनानि होतृसामाणि भवन्ति मज्ञा-  
 नान्नीमैत्रावरुणसामैता अवुक्ता वामदेव्यस्थाने ऽभि-  
 रूपा वैहपं ब्रह्मासामैतत्सर्वबृहतीषु सर्ववृहतीप्रयाणि

ब्रह्मसामान्येवं च स्वस्तोमानि भवन्ति. रेवतीरुक्खावा-  
 कसामा स्वस्तोमा अप्रवादाहाय गार्ग्यन्त्रीष्वग्निष्टोम-  
 सामैव मिव ब्राह्मणं भवति यद्गायैत्रो भवन्ति तेना-  
 यतनान्न च्यवन्त इति तासा मेकविंशत्यक्षरा प्रथमा  
 तेनैकविंशान्न च्यवन्ते कथं धर्मा इत्यर्कत्तव्या  
 इत्येके स्वस्थानानि हि भवन्ति स्थानस्थाधर्मा इति  
 कर्त्तव्या इत्याचार्याः संयुक्तानि भवन्ति संयुक्तधर्मा  
 इम इत्यथापि कृतस्त्वान्वितान्यगर्शीःसम्भक्तराणि  
 भविष्यन्तीत्यथापि शिथिलानि परोक्षपृष्ठानि तेषां  
 धर्मकरणेन दृढीभार्वो भविष्यतीत्यथाप्यस्वस्थानानि  
 तेषां धर्मकरणेन स्वस्थानानीति चिकीर्षा खादित्य-  
 थापि विश्वजिह्विल्य इत्याचक्षते धर्माणां मतद्व-  
 ष्टिल्यानीत्यथापि सशये ऽलोपो लोपाश्चायतर  
 इति न्यायतर इति ॥.५ ॥

कथं मङ्गभूतं यस्त्विवासां इति कर्त्तव्या इत्येके  
 विहिता अप्रतिष्ठा भवन्तीत्यथाप्येवं पृष्ठधर्मैः समा-  
 धिरित्यकर्त्तव्या इत्यपरं. सर्ववेदसंसंयुक्तांस्ते भव-  
 न्त्यपि चैते खल्वङ्गभूताः सर्ववेदसंमिति तेषु खल्वेते  
 धर्मा एतस्मिन्नेव द्वादशाहे स्युजिति गौतमोऽत्र हि  
 संवत्सराग्निं वेदतीर्युहं द्वादशाहात् सांवत्सरिका-

शीति धानञ्जयः कामं तु हवीं दादग्रहिकी स्यादिति  
 बाहृतं तन्च बृहन्नक्तिरवाद्यत्र कालेयं प्रच्यवते ऽनुजि-  
 घृक्षितं तत्र भवति तद्यन्मध्यन्दिने ऽत्राद्य खच्छन्द  
 इति सत्रासाहीये ककुभि सोढवन्नाभजिति नामस्त्रिति  
 भवति सफश्चवे यद्यतिराच इति तु भवत्यतिरा-  
 चः स क्लृप्तीभवति तस्मात्सफ्रीभवतः सफं वा विच्या-  
 वयिषीत्तदेक उक्थप्रणये कुर्वन्ति सोढवन्नाभ मा  
 प्रच्योष्टेति पिपीलिकमध्यां करोति दशराचन्यायेन  
 तां नित्यायाः पुरस्ताद्भिदधात्येवं पथ्यावसान मिति  
 तद्यत्र गणी चिकीर्षा वा प्रज्ञातकामो \* तैव सेवैष-  
 तस्मिन्स्थाने भवति तत्र वामदेव्यं पृष्ठेभ्यः प्रच्युत  
 भनुगृह्णाति वामदेव्यभक्तिन्यहन्यत्यन्नेति वार-  
 वन्तीयं सर्वपृष्ठेषु चिकीर्षितं रेवतीसंयोगात्  
 तद्यत् द्विपदासु द्विपदा भक्तिन्यहन्यत्यन्नमित्यनु-  
 तन्न मुक्थप्रणयो नाना फोड्भिर्गिसामनीं करोति  
 नानात्वर्थी नातद् भभिजितीत्येतच्च पूर्वाभ्यर्थे-  
 नेति ॥ ६ ॥

अथ व्रतस्य स्तोत्रप्रदेशः पञ्चविंशतिस्तोभाः  
 पञ्चकृत्वः पदं पञ्चकृत्वः पूर्वा देवता पञ्चकृत्वं

उत्तराः ऽप्राप्याहुर्व्यवस्तोभेत्पददैवतं मेवः समाधिः  
 पददैवतस्येत्येते वापि दैवते व्यवस्तोभेदित्येक एवः  
 समाधिदैवतयो रित्येते वाप्याहुदैवते व्यवस्तोभेदिति  
 शाण्डिल्यो ऽथः कालबविनोः यथासमाम्नाय मेतं  
 कुर्वन्त्येतत्त्वेषां लघिष्ठ मपि च यान्यनुपदस्तुभ्याऽथा-  
 न्यादर्शयति तेषां मुभयत स्तोभाब्दसक्तं त्रिंशद्गद एवाख्य  
 पुरस्तात्स्तोभा भवन्ति यत्त्वेव प्रथमं मवोचाम् तत्  
 कर्म ते खलु शंखं देक आत्मना प्रतिपद्यन्त आत्म-  
 सत्तमान्प्रज्ञानीति शिरसो वयं शिरो वा अग्ने  
 संभवतः संभवतीति भद्रत्यथैके शिरसां स्तुत्वम्यं  
 दक्षिणेन पक्षेणाथात्मनाथोत्तरेणाथ पुच्छेनैकं मध्य  
 आत्मा भवतीत्यथापोके शिरसां स्तुत्वाथात्मनाथ  
 पक्षाभ्या मथ पुच्छेनैवः सम्यक् शिरश्चानूकं च  
 भवतीत्यथैते शिरसां स्तुत्वा ऽथ पक्षाभ्या मथा-  
 त्मना ऽथ पुच्छेनैव भिवाङ्गानां मानुष्यं मित्यथ यथै-  
 तद्विद्वत् सत्वते तद्वदथ मेतद् ब्राह्मणावदित्यृश्यस्य  
 साम्नि किं प्रत्यक्षं किं परीक्षं मिति ऋषं प्रत्यक्षं  
 द्राघितं परीक्ष मपि वेन्द्रेति प्रत्यक्षं मिन्द्र इति  
 परीक्ष मपि वा यथायाम एतदङ्ग माचष्टे तत्  
 प्रत्यक्षं तेषां स्तुतिः स्यात्तत्पर मिव ते पायुर्कञ्जः



रनास्क्रधः इति यथासंमास्त्राय मेवोयेयुरेवं शिव  
 ब्राह्मणं भवति यद्वै मनुष्याणां प्रत्यक्षं तद्देवानां  
 परोक्षं मथ यन्मनुष्याणां परोक्षं तद्देवानां प्रत्यक्षं  
 मिति तत् कुशलं यदस्मिन्नहनि देवप्रत्यक्षं कुर्यु-  
 स्तत्र खलु गोस्तन्त्रं करोतीतदन्तं तन्त्रतर मन्त्रत्रर  
 मिदं भवति तत्र यो द्रव्यतिकारो निर्वाकार्यो न  
 भवत्यथापि प्राजापत्यं व्रत मनिरुक्तः प्रजापति रित्य-  
 थाप्यद्य सः स्तावान्यन्तोक्तं व्रत मिति स्तोम-  
 कल्पाय चतुर्ध्वज-माहृति-तद्यदेतद् यवं यवं नो  
 यश्चस्येतद्यवप्रवाहं पृष्टिप्रवाद मन्नाद्यसः स्ताव-  
 मन्त्रोक्ते ऽभिरूपं अराबोधीय-मुभयसामसु चिकीर्षित  
 मुंभयविधेरेवं हि भवति तदाग्नेययोन्यन्नाद्य सः-  
 स्तावं मन्त्रोक्ते ऽभिरूप-मैकाहिकाद् वृतात् पञ्च-  
 निधनं वामदेव्य मपनयति नाना मन्त्रा मतिमेद-  
 नायेति भवति तदेकाहे नोषपक्ष्यते यच्चसामान्या-  
 दहीनेभ्यस्तत्र श्वैतं मनुंनन्व मा नोः विश्वासु हव्य  
 मित्येतावद् ब्रह्मप्रवादा इतीत्यन्तं मग्निष्टोमसाम  
 कुर्वन्तस्त्वचे कुर्युरेष-भावृत्तिन्नाय-इति-दशसु दश-  
 खक्षरेष्वार्षिकान्यनुष्ठानानोवं वैराजान्यनुष्ठानानि  
 भविष्यन्तीति षडर्चे सर्वस्मिन्नित्याचाया अर्चर्चेष्वनु-

गानान्येव मसूरोधतरो गीतानां मिति द्वादशार्च  
इति शाण्डिल्यस्तवापरावाग्नेयी त्वावाङ्मरेदा ते  
अग्निं तं मन्य इत्येव मृग् दृष्टीन्यनुगानान्यस्तु भक्षिष्य-  
न्तीति षडृचे तु कुर्वन्ति ये कुर्वन्त्यग्ने तव श्रवो ब्रह्म  
इति चतुर्थं मेवानुगानं त्वचे स्यादिति वार्षगण्यो ऽत्र  
हि निधनवाटं वदति वृत मिति भवति स्वरिति  
भवति शकुन इति भवतीति भक्तयश्च कल्पन्ते मना  
सामवच्चैनान्येके ऽधीयत इति ॥ ७ ॥

अथ साहस्रास्त्रिरात्राग्निं च वृताग्निं चोपकृतां  
एवमिव ब्राह्मणं भवति तत्र त्रयाणाम् सम्पद् ब्राह्मण-  
चोदिता न उपकृता एते स्तोमा भवन्ति ब्राह्मण-  
विहितांस्तृतीयस्योभे सामनी करोति वृतन्यायेन  
त्रिरात्रन्यायेन च व्याख्यातः भौभयं तन्त्रं पूर्वयोः  
पङ्क्तिषु ब्रह्मसाम सत् सहस्राक्षरास्तु ब्रह्मसामेत्वेव  
मक्षरसहस्रं सम्प्रदाते बाहृतं तन्त्रं तृतीयस्योक्त्य-  
त्वाद्दग्निं दूतं वृणीमह इत्युभयाभ्याज्यानीति तत्र  
पूर्वं बाहृतं उच्चरे रात्रन्तरे इति शौचिवृत्तिरेव  
समविभागो देवतानां मित्येकदेवत्ये बाहृतं हि-  
देवत्ये रात्रन्तरे इति धानञ्जय एतद्द्वयोः समवयतोः  
कुशलं यदभ्यास इति व्याख्यातः शायन्तीयं मपि

चैकादशाक्षरशतानि सम्पाद्यते तत्र नित्या सहस्र-  
 सम्पन्मौक्त मुकथ्येषु चिकीर्षित मुकथ्यदर्शनं  
 चापि च आक्षरणिधनं त्रीण्युक्त्यानीति सौभरं  
 चैककुभं वेति विचारयन्ति नित्य महः सौभरं आय-  
 न्तीयनियोगादुद्देशीयनियोगाद्वा चैककुभ मिति  
 त्रिरात्रविधतम उत्तमधिरात्रिक्यः प्रतिपदश्चाज्ज्यानि  
 चैक मत्रिरात्रिक मिन्द्र मिद् गाथिनो बृहदिति  
 तद्यत् करोति पृष्ठ मत्यविभाजयिषीज् ज्यौतिष्टोमं  
 तन्त्रं विभ्रंशाशङ्कस्त्रिरात्र एतत् प्रतिष्ठा विधतरं  
 तन्त्रयो रिति ककुभं साध्यन्दिन मुपाहरति तां  
 मुपरिष्ठाङ्गायत्रां निदधात्येव मिय ममुत्र गायत्रा-  
 नन्तर्हितेनेति तस्य स्थाने द्विपदां करोति पुरुष ऋन्दस  
 इति सतोबृहतीं करोति त्रिरात्रन्यायेन तान्निधने  
 वैहृपात् साक्षाद्रथन्तरं क्रियते सौभरं बृहतो वारव-  
 न्तीयः रिवतीभ्यः पुरस्ताद्निदधात्येव पथ्यावसान  
 मिति तद्यत्र गणोचिक्रीषां वा प्रजापतिकामो देव  
 सेवैतानि कन्दासि युज्यन्त आष्टमिकीस्त्रिष्टुभः  
 करोत्येतां हृपसम्यन्ना इति तत्र वामदेव्यं करो-  
 त्येवं हि ब्राह्मणं भवति प्रवमानस्थान्तां वामदेवा  
 मिति खारः सौपर्णं मैत्रावरुण सामैतद् वाम-

देवासदृशं मपुरस्तात्स्तीभ मेव बहिःस्तरं यथा वाम-  
देवाम् ॥ ८ ॥

अथ सांध्यस्केषु याः सद्यः प्रवादा नव प्रवादः  
प्रोक्तवत्यो जनइत्यंस्ता अभिरूपा अर्थ खल्वत्र पृष्ठा-  
न्यङ्गाश्चिकीर्षिता भवन्त्या भाभिसानितो य मृतु-  
प्रत्ययानि पृष्ठानि परिषाचनार्थानीति तानि यन्न  
साक्षादस्तीमान्यभविष्यंस्त्रस्यैतच्छाक्तरवणं शक्र-  
रीभ्यः प्रति वैष्टस्त्रवेहपात्साक्षाद्द्रयन्तरं क्रियते सीभरं  
बृहतो वास्वन्तीयु रेवतीभ्यः स्वाशिरामर्को वैरा-  
जादायाश्च मुष्णिहि मध्यन्दिने स दक्षिणां प्रति-  
गृह्य विभुशेवं स तृतीयसवने प्रीयश्चित्तिं चक्र-  
इति कांथ मुत्तरयोः साद्यस्कंधर्मा इति कर्त्तव्या  
इत्येके साद्यस्केश्चाभि परीतो भवतो ऽपि चे मे काल-  
सङ्कर्षाद्भवन्ति सङ्कृष्टकालाविमौ भवत इत्यकर्त्तव्या  
इत्यपरसाद्यस्कौ हि भवतो यदेतदभिपर्यायादिति  
सर्व एवासाद्यस्कैरभिपरीता भवन्ति यद्देतत्काल-  
सङ्कर्षादित्युच्चावचाः कालविप्रकर्षा एकाहानां तदेवं  
बहु प्रसज्येतेति विश्वजिष्कल्पे सामस्तीभे सति  
सांध्यासां वृहतीं करोति कश्च ह्येतोरिति पुरस्तादा-  
पन्नानि वैश्वजितान्यविच्यावयिषन्नविच्यावयिषन् ॥९॥

जिघांसयञ्ज उन्तरस्य या हतव्यः क्रूराणि  
 च सामान्यभिहृपाणि तानि त्रिकाश्याज्यपृष्ठानि  
 करोत्येव सुपराञ्चि भवन्ति वज्जीकान् च पञ्चदश  
 मभि सम्पदाते चतुरः पञ्चदशानर्षा सोम दुग्मत्तम  
 इति माध्यन्दिनीयाहन्यहे भवन्तीति शाण्डिल्यायन  
 ऋष्यश्रुषेयर्थानुस्मातकाः कुर्वन्ति भागविलोपे चोत्पन्ना  
 भवन्तीति पराञ्चीषु रथन्तर मिति द्विपदीत्तरासु  
 पराङ् भवति कङ्कभावेवेति गौतमेऽनभिवर्त्तयैतद्  
 ब्राह्मण मिति पवमाने रथन्तर मित्युद्धृत्य बार्हतानि  
 ख्यादष्टे ऽश्वपदस्तोभः शक्करवर्गाख त्रिणिधनगनुग्र-  
 हाय शक्करैणां च पवमानान्यं वा रथन्तरं तज्जाम्येव  
 मिव ब्राह्मणं भवति यद्वै महावृक्षौ समृच्छेते बहु  
 तत्र विभग्नं प्रभग्नं शेत इति यद्वा वा अजामि  
 यौधाजयस्थामे दैर्घश्रवसं यदन्तरा सोमा यन्तीत्यु-  
 परिष्ठादनुद्धरन्वा बार्हतान्यनुकल्पयेत् तत्र पौरुमङ्गं  
 त्वचसमाप्तये भवतुव्यवच्छस्मिन् ब्राह्मणं दर्शयतीति  
 यौधाजयापेतं वोत्सेधमध्यं कृत्वा पवमानान्यं  
 रथन्तरं मात्मीगषख निषेधो वृत्तिग्रहणत् वाम-  
 देव्यं स्वर्चि वाभिषदनार्थं इति धानस्य्यः प्रवञ्चेद्  
 ब्रह्मसाम ख्यात् त्वमिन्द्र प्र तूर्त्तिष्विरयेताखेता

हूपसम्पन्ना इति श्यैतयोनीं वा बृहत्पृष्ठत्वादथेष  
 एकचिकः प्रजापतीप्सा मुपकृतस्तचैतावुत्सेधनिषेधौ  
 प्राजपत्यादहो निषेधो ब्रह्मसामश्रायन्तीयस्यर्था  
 श्रितवती प्रायश्चित्तकृतो ऽभिरूपेत्यतो यो द्रव्य-  
 विकारः प्रजापतीप्सां स भवति ॥ १० ॥

अथ व्रात्यस्तोमास्तत्र षोडश त्रांशीःस्तोमः स  
 एषं हाचिंशो विकृतस्तं, मच्छावाकसाम्नो निद-  
 धात्येतदानुष्टुम्स्थान मित्यनन्तरां हाचिंशप्रयुक्त-  
 भविष्यतीति पत्रसानयोज्येतिष्टोमानोतदाणीति तत्र-  
 यांवीर्यप्रवादा बलप्रवादा गणप्रवादां द्रविणप्रवादाः  
 शुचिप्रवादा निषस्रवत्यः प्रचिताभिवांशारा अभि-  
 हूपास्ता यानि च गणसामानि हूतवन्ति तत्र  
 यश्छन्दो योगविकारो गंगीचिकीर्षया स भवत्यपि  
 च चूद्रीचिकीर्षया ऽथ खल्वाह यन्निरुक्तं निधन  
 मुपेयुर्गृहपतिरेवधुयादपेवरान् घीतेति कस्येदं ब्राह्म-  
 णं स्यादिति नौधसप्रतिषेध इत्याचार्यास्तद्वि-  
 निरुक्तनिधनं भवतीति नेद मित्यथापर मां इन्द्रा  
 इरयेवास्य निधनं चिराद्धिस्तदात्तथा स्यात्तन्निरुक्तं  
 स्यादिति यथासंमाम्नायं त्वेवैव मनिरुक्त मिति  
 हावग्निष्टोमस्त्रीयौ समाप्तनामो द्वये व्रात्या भवन्ति

शीर्षादयश्चैषीकयावधश्च शीर्षादीनां सतीबृहती-  
 प्वग्निष्टोमसामं कुर्यादिति धानञ्चथो ज्यायसखान्  
 ब्रुवत एषीकया दीणां प्रगाथवृहतीषु केनो विद्या-  
 दिति खयं ब्रुवीरन् ज्यायांसः खलु शीर्षादयो  
 ब्रुवते षोडश इतुत्तरस्तत्र खलूक्यं करोति षोड-  
 शयोः स्थाने चिकीर्षं क्त्वावादावसानयोर्निदधा-  
 रयेव सयाधिः पवमानाक्त्वावाकसाम्ना मिति  
 कनिष्ठयञ्ज उत्तरो ये तु खलु जन्मना कनिष्ठा ये हो  
 वयसेति ये जन्मनेत्याहुस्ते हि कनिष्ठा इत्याचक्षते  
 यथाहुर्ये वयसा सखिवारिणो हि वात्या भवन्तीति  
 व्राक्षातौ षोडशावक्त्वावाकसाम्नोरुद्धरति शुध्यं  
 स्तोमसंरीधात्तत्र मस्तां खं स्तोमं करोत्याशीः-  
 स्तोमं मा प्रच्छोषटेति विहरति श्यावाश्वाम्भीगवे ऋचा  
 वीप्सन् ॥ ११ ॥

ज्येष्ठयञ्ज उत्तरो ये तु खलु जन्मना ज्येष्ठा ये हा  
 वयसेति तत्पूर्वैर्वैवं व्राखातं तत्र दाशरात्रिकां  
 स्तोमानुंभेव साम्नीं करेरति ज्येष्ठयञ्जं कृत्स्नं  
 चिकीर्षन्नथापीमं हात्रिंशं माशीः स्तोमं साक्षाज्  
 ज्येष्ठयञ्जे चिकीर्षीत् स षादीयमानः सर्वात्स्तोमाना-  
 द्रायेत्तां स्तु यदेवं प्रयुक्त एव मन्वकारिणारोहो भव-

त्यष्टावृत्वारिंशत् परस्तादन्तरिताविति त्रिगवचद-  
स्त्रिंशावभिहूपान्तो द्वाविंशो वाचिकीर्षतं कनी-  
यांसौ स्तोमावुपागुरिति नु भवेति त्रयस्त्रिंश-  
द्वात्रिंशावितीवैतं हवति हे त्रिगवंत्रयस्त्रिंशो हे हा-  
विंशत्रयस्त्रिंश इति वा खलु तत्कुर्युः सर्वान्वैवा-  
हूटानुपेयुरित्यकुशला अनुव्यमद्वत्तन् कौषीतकीन्  
मन्य इति धानञ्जय्यं एवञ्च ह्येवेषु सरसुं रोहो भवति  
तत्र यो रोहो ऽर्घ्यकारितः स भवति कथं मनिष्टप्रथम-  
यज्ञानां ब्राह्म्यस्तोमा इत्यकर्त्तव्या इत्येके ऽनारभ्य  
वदन्ति य एतेनानिष्टेत्यथाग्नेषां ज्योतिष्टोमे प्रति-  
पद्धिधीयते ऽथापि यथा नानाहिताग्नीना मेवं मप्य-  
निष्टप्रथमयज्ञाना मितिकर्त्तव्या इत्यपरं प्रायश्चित्त-  
त्तार्था इमे भवन्ति प्रायश्चित्तं नु खलु पूर्वं विधीयते  
ऽथापि ज्योतिष्टोम एव प्रायश्चित्तस्य पूर्वत्वं दर्शयति  
यथा कलंशे दीर्घे विरक्ते यावापि शीर्ण इति यदे-  
तद्य एतेनानिष्टेति प्रकृतिभूतानां मेतद्भवति यदे-  
तत् प्रतिपद् विधीयत इतीष्टा ब्राह्म्यस्तोमेनेत्येतदुप-  
पद्यते यदेतद्यथा नानाहिताग्नीना मिति सिद्धि-  
कारितमेतद्भवति ॥ १२ ॥

यथाग्निष्टस्य या आग्नेयः प्रथिताभिर्व्याहारा



ज्योतिष्टोमीभिः सदृशं व्यञ्जना यथास्थानं मभिः पा-  
स्ता रुद्रं वतीच्छिष्टुभः करोति रुद्रो मरुतां पिते-  
त्याहुक्षेन मरुत्वदनुग्रह इति गायत्रीष्वग्निष्टोम-  
सामैतदाग्नेयं छन्द इति स यदेता उप त्वा जाभयो  
गिर इत्येता वायव्या इति तद् वारवन्तीयं गायत्री-  
सामैह सृचा स्तोत्रीयं तेन प्रच्युतं यज्ञायज्ञीय मन्थं  
करोत्यत्र हि सं तृचतां लभते तदेतत् स्तोमसुः प्रीध  
एव मेव भयत्यैन्द्रीषु सुत्येति सोऽयं पूर्वः स आग्नेय-  
सोचं निद्वैन्द्रं भविष्यतीति स यदग्निष्टोमसामान्ता-  
ख्यानानि कर्माणीति सप्तदेशे विषमे स्तोमे सत्यन-  
ध्यसं वृहतीं करोति कस्य हेतोरिति न ह्याग्नेयी  
साध्यासा विद्यते त्रयां चत्वारि सामानि तृचावभित  
एकर्ची मध्य एवं तृचप्रायणं तृचोदयनं भविष्यतीति  
त इमे पञ्चानुवाकाश्चत्वारः कल्पाः स एषः प्रथमः  
सर्वेषां मेव साष्टः स्यादपि. चा प्रथमस्य द्वौ स्यातां  
कथं भक्ष्या इत्याग्नेया इत्येक एवं यथायं भवत्यथा-  
प्यत्र सुविप्रतिषिद्धरूपाण्यनाग्नेयानि भवन्त्याग्ने-  
यानि यथा हविःस्रुतिः पवमान इति यथाप्रकृ-  
तीतपरं भक्ष्यविशेषान् विदधन्नाग्निष्टुत्सु विदधा-  
तथापि कृतावे प्रा यथार्थं भवन्ति यथा मैत्रावरुण-

ऋग्निष्टोमसाम्नीत्युत्तरेष्वग्नयः इति स्थाने सुब्रह्म-  
ण्ययां देवा इति ब्रूयादैन्द्रत्वादग्निष्टोमसाम्  
इत्येके ॥ १३ ॥

॥ इति निन्दानमूचे षष्ठः प्रपाठकः ॥

॥ अथ सप्तमः प्रपाठकः ॥

अथ त्रिवृतस्तेषां प्रथमस्य योऽद्रव्यविकारो निर्वाः-  
कार्यं न स भवति पुरोधोकामयज्ञ उत्तरः स्थपति-  
सवो वयं समानीः श्रेष्ठो \* संवृणीरन् ब्रह्मसवो वा-  
ब्राह्मणस्य यज्ञेन जिजनिषमाणस्य त्रिवृतः स्तोमं  
सम्पद्यते लघुरीप्साया ममिहपोथः स्तोमश्चायं मेष  
गच्छति यः पुरोधां ब्रः स्थापत्य यज्ञं तु स्याद् ब्रह्मसंव  
इत्येषा ब्रह्मणा भक्तिरित्यनुसवनं दक्षिणा ददाति  
कस्य हेतोरिति बृहस्पतिरभिषिध्यमानो देवगणेश्वो  
दक्षिणा आजहारं वस्तुभ्यः प्रातस्सवने ऋग्व्यो माध्य-  
न्दिने आदित्येभ्यस्तृतीयसवने ऽश्वत्थादशा मध्य-

न्दिने ददाति : दक्षिणा वलाया मत्याधित्वात्मन्यते  
 श्येनेनेषोर्द्व्यसमुद्देश उक्त उद्हरति शाकारवर्णं  
 साद्यास्कसामं तद्भद्रति तत्रैतज्जराबोधीय मेतङ्गायत्री-  
 सामापन्न मपि च रुद्रवद्योनिवधार्ये ऽभिरूप मुद्हरति  
 वषट्कारणिधनं तस्य स्थाने सप्तहङ्करोत्प्रेतद् बृहता  
 समानयोनिर्द्व्यर्थे ऽभिरूप, मुद्हरति खारे सप्तर्च-  
 नवर्चा करोत्येते प्राणोक्ता इति ते बृहत् तस्य स्थाने  
 वषट्कारणिधन मेषा देवेषुर्भवति ता माशीर्ध्वनि-  
 द्दिसन् ॥ १ ॥

सर्वस्वाधे सप्तर्चनवर्चान् करोत्येते प्राणोक्ता इति  
 तेषां विलोपेनं प्राणविलोपो भविष्यतीति स यत्प्रथ-  
 मां स्तृचानिते रूपसम्पन्ना इति चतुर्त्तच मैन्द्राग्नेः  
 समामं नामी प्रवत्यासां द्वितीया ता मुद्हरति सर्वाः  
 प्रवल्को भविष्यन्तीति गायत्रीणां पृष्ठापदानाद् बृह-  
 तीषु मैत्रावरुणसाम करीति, मिखानां बृहतीं पृष्ठेषु  
 त्रिकीर्षं स्तत्रैतन्मैधासियं स्वयोन्युपन्नं पुरस्ता-  
 देतत् स्थानं मन्त्रभित्तीष्वप्रवतीषु होत्रिकपृष्ठानि  
 स्वयोनीनि त्रिकीर्षं विराड् ॥ बृहतीष्वग्निष्टोम-  
 साम प्रागादनुप्रहरतेति ता यदावर्त्तयत्येवं प्रवत्या

प्रक्रम इति तत्र यज्ञायज्ञीयं मन्त्रसमाधये तस्या-  
 चरसंस्करणं प्रस्तावयति प्रगाथीकाराय पूर्वस्था-  
 श्वान्यङ्गे वा याश्चाद्य मेघोऽचरसंस्करणस्तद्यत्र यच्चैषां  
 तृचापत्तिर्बृहद्रथन्तरयोर्यज्ञायज्ञीयस्य चैव मेघैषां  
 प्रस्तावयति दीर्घश्रवसं स्वामु यदि जीवेदिति तु  
 भवति नचेदृशकत्तु मुत दीर्घं शृणुयादित्यपि वा  
 प्रायणार्थं मेव स्यात् स्वारञ्च हि भवति प्रवद्योनि  
 वेति ककुबुत्तरासु ककुबुत्तरास्यान् हिः सर्ववृहती-  
 ध्विक एवं स्वर्गकामयज्ञे रोहोऽपि वा स्वर्गीतां वृहतीं  
 स्वर्गकामे यज्ञे ऽचिकीर्षन्ति पुरस्तान् ज्ञाना वृहती  
 इति वा तन्ने विप्रतिपद्यन्ते प्रथमतन्व मित्येके  
 गायत्रीभ्यां जानीम इत्याशीस्तन्व मित्यपरं प्रवन्ती-  
 भिरयं कृष्णस्ता एताः प्रवत्य इति ॥२॥

अग्रातश्चातुर्मासानि स एष षडहो विहृतंस्तत्र  
 षाडहिकान्तंस्तीमांश्च करोति षडहन्यायेन तां-  
 स्तत्र यदेवं प्रयुङ्क्त एव स रोहो भवत्यथापि नाना  
 दीक्षावभृथानीमानि सर्वाणि भवन्ति तत्र सर्वाण्य-  
 ऽहन्युप्रक्रमः स्तीमेन प्राग्विक्रमिषीदथाप्येव मेनाननव-  
 षिन्नानन्ततो ऽध्यवस्यतीतुपयन्ति तन्नाणि पृष्ठानि  
 संस्था इत्यङ्गा विक्रमादैकाहिकान्येकाहे द्वैरात्रि-

काणि द्विरात्र उद्धरति रात्रि मपरिकाण्डतया  
 द्वाहस्य चिरात्रिकाणि चिरात्र उद्धरति वामदेव्यं  
 चास्यप्रज्ञाञ्चापरिकाण्डतया चाहस्य नाना ब्रह्म-  
 सामानि नानार्थं श्यैतनौधसवर्णानि बार्हद्रथन्तर-  
 पृष्ठाद् योक्तस्य च मेवादाशरात्रिकं तदेतत् पूर्णदर्था-  
 नुग्रहाय शग्भ्राषु शचीपत इति प्रथमस्याङ्को ब्रह्म-  
 साम स्तोत्रीयो वैश्वदेवस्यायं स्थान मांपन्न एषां  
 विश्ववती भवतीति पञ्चप्रतिपत्कान्यहान्द्रात्वभी-  
 ज्यायां पञ्चत्तुः संवत्सर इति षष्ठा मङ्गा प्रतिपदः  
 षडृतुः संवत्सर इति त्रिष्टुभं वैश्वकर्मणी करोति  
 न हि गायत्री विद्यते समापद्यन्ते चिराचे भागा-  
 स्तदनु द्रव्याणि हाविष्मत् द्वितीये ऽहनि चिरात्रस्य  
 कुर्यादिति धानञ्ज्य ऋद्धिसामाप्रच्येष्टेति योक्ताश्व  
 मेवेति गौतमः कृतं हाविष्मत् द्विराचे तृतीयस्थानञ्च  
 हाविष्मत् चिराचे तचेतत् संहितं शुनाशौर्य-  
 सन्तानाय ससुत्रेयो वसूनां प्राणाः शिशुर्महीना  
 मिति पञ्चमषष्ठाभ्यां मुष्णिक-क्तकुभौ षडहसमीपुः  
 प्रत्याहरत्येतेन न्यायेन द्विराचप्रभृतिष्वहर्गणेष्वेते  
 भवतो न चेत् कृतागमी भवति द्विपदातिच्छन्दसो  
 दशराचन्यायेन ते जगत्याः पुरस्तान्निदधात्यन्त-

च्छन्दसीं अन्त इति ते ऽयं न सर्वान्तेनां सर्वं नच्छन्दो-  
 ऽन्ते ऽत्रिकोर्षीत् तत्रैता वाजदावर्षी ऽन्तान्विता  
 अयां रुचेति निज्यवत्सा स्वयोनेय प्रतेन न्याधिन  
 चिराचप्रभृतिष्वहंगीष्वेते भवतां न चेत् स्तोस-  
 सः श्रोधा भवति ॥ ३ ॥

अथैते सप्तदशास्तत्र बार्हतेष्वष्टमिकं पञ्चचं  
 करोत्येतद् बहुङ्गत्तिनो ऽन्त इति तार्त्तीयिकं रथन्तर-  
 पृष्ठेष्वेतद्रथन्तरभक्तिन इत्यनिरुक्तः प्रथमस्तत्र यो द्रव्य-  
 विकारो निर्वाकार्थे न स भवत्यथ खल्वाह मारुती  
 भवन्ति पौषी भवति वैशुदेवी भवतीति केनो विद्यादेः  
 तद्देवत्या इमा भवन्तीत्येतद्देवत्येषु समाह्नाता इति  
 यानि गोः सामानि तानि सामान्यनुपृष्ठं संहित  
 मेवैतदाग्निष्टोम्यात् क्रियते स्वर्गकामयज्ञ उत्तरस्तत्र  
 यो द्रव्यविकारः स्वर्गकामयज्ञत्वात् स भवत्यथ  
 खल्वाह सोमपीथ तदनु द्रव्याणि हाविष्मतं द्वितीये  
 ऽहनि रात्र्यः कुर्यादिति धानं ज्ञय्यं ऋद्धिसम मां  
 प्रच्योष्टेति यौक्ताश्व मेवेति गीतमः कृतं हाविष्मतं  
 द्विरान्ते तृतीयस्थानं च हाविष्मतं चिराचे तत्रैतत्  
 संहितं शुनासीर्यसन्तानाय समुन्वेयो वसूनां  
 प्राणाः शिश महीना मिति प्रश्नमषष्ठाध्या मष्ठाक-

ककुभौ षडहसंमौष्णुः प्रत्याहरतेऽतेन नान्यायेन हिराच-  
 प्रभृतिष्वहर्गणेष्वेते भवतो न चेत् कृताममो भवति  
 द्विपदाति कन्दसौ दशराचन्यायेन ते गत्याः पुरस्ता-  
 द्निदधात्यन्तकन्दसौ अन्त इति ते यन्न सर्वान्तेन  
 सव नकन्दोन्ते षचिकीर्षीत्तत्रैता वाजदावर्यो ऽन्ना-  
 न्विता अथवा रुचे ऽस्याविदोहायेत्यनन्यत्र भावा ये  
 खेतद्वोचदिति स्वर्गकामयज्ञ एवोत्तरस्तत्रोभे सामनौ  
 बहुदक्षिण्यादपि वा स्वर्गकामयज्ञत्वादेवैव मिव  
 ब्राह्मणं भवत्यनङ्गाह्यै वा एतौ देवयाजौ यज-  
 मानस्य यद् बहुदथन्तरे इति वैश्वयज्ञ उत्तरपत्तस्य  
 कथवरथन्तर माभे त्वा पूर्वपीतय इत्येतासु कुर्या  
 दिति लामकाग्रनो यथा वा अप्ययायाः शूद्रस्तल्प  
 मुद्दिशेदतो देशीय मत्तद्य एतदथन्तरांस्तु कुर्यादेतासु  
 त्वेन्न खादेतासां हि स्थान सम्पद्यते चैताः परोक्षे  
 पृष्ठे षडह इति सर्ववृहतीषु नान्यद् बहुदथन्तराभ्या  
 मंहति पक्ष मुत्तरासु स्यात्तं खलु विश्वतीभिः कल्प-  
 यत्येतद् भक्तिवैश्व इति तन्वे विप्रतिपद्यन्ते ज्योति-  
 ष्टीमतन्व मित्येके गायत्रीभ्यां जानीम इत्याशी-  
 स्तन्व मित्यपरं विश्वतीभिरथं कृप्तस्ता एता विश्व-  
 वथ इति तत्र यो द्रव्यविकारो वैश्वदेवीचिकीर्षया

स भवति यान्यायुषः सामानि तानि सामान्यनु-  
 तन्चं यान्यन्यानि पृष्ठानि ब्रह्मसामभ्यां विशोऽविशीय  
 मुत्तरस्था मग्निष्टोमसाम ककुबुत्तरासु ककुबुत्तरा-  
 स्थान् हि स्वर्गकामयज्ञ उत्तरंस्तत्र खलु गोस्तर्क-  
 करोरयेतदन्ततन्त्रतर मन्तविधीऽयं भवत्यनिरक्तं प्रात-  
 स्रावनं तच्च यो दृश्यविकारो निर्वाकार्ये न स भव-  
 त्यथैतद्देवस्थान् स्थितनिधन मुताच्छिञ्चीस्तिष्ठे-  
 दिति तस्य रथन्तरं पृष्ठं वाजपेयसाम हि बृहत् करि-  
 ष्यन् भवत्यङ्गोक्तोऽर्को वाजोक्त मन्त्रं त्वं नञ्चिन्न  
 उत्थेति चारवन्तीय मग्निष्टोमसामैता रोधस्वत्यः  
 स्वर्गकामयज्ञे ऽभिरूपाः ककुबुत्तरास्थान् हि सर्व-  
 बृहतीष्वेके तद्वाख्यातः सर्वस्वारेऽनुतं च मुक्थ-  
 प्रणयाय \* ॥ ४ ॥

अथैषो ऽभिषेचनीयस्तस्य द्वाचिंशाः पवमाना  
 अनुपूर्वं सावृत्तिस्थानेषु पञ्चदशप्रभृतीन् भागस्तो-  
 मान्नेते प्राप्ता स्थाना इति तन्त्रोभे सामनी आङ्गदा-  
 क्षिण्यादथाप्युभे ईसाया मभिरूपे उक्थसंस्थं करोति  
 द्वितीयेय मिञ्चा लच द्वितीयाः सऽस्था मिति  
 व्योख्यातम् बहिष्पवमान मन्यत् कविमतस्तत्र खलु

\*. "मुक्थप्रणयः"-इति ख ।



शश्वद् भालंबिभं चाग्नेयीं पाषमानी शुद्धरन्ति यथा  
 चिवृतं च वय मुद्धरामः पृष्ठेभ्य इयं प्रत्येवं पृष्ठाना  
 मविक्षीप इत्यर्थाप स्तोमप्रधानतरच्छन्दस इत्या-  
 मुष्टुभं पर्यासङ्करोत्यानुष्टुभो हि राजेति तासां  
 मध्यमां सुप्तमां कुर्युः बूर्यवत्यन्ते ऽभिरूपे सन्भार्या-  
 न्विताप्याजान्यथ खत्वत्र राजसामानि करोति  
 राजसूयो राजसामानीत्वेकादश करोति त्रिष्टुप्-  
 सम्पन्नानि वैष्टुभो हि राजेति सर्वच्छन्दस्थानि करोति  
 सर्वज्ञ कृत्स्नीकाराय न पाङ्कं करोति न हि पाङ्कं  
 राजसाम विद्यत एक मुदाहरन्ति सत्यश्रवसो  
 वायस्य महे नी अद्य बोधयेति राजसूययाजी स  
 बभूव नेह राजसूययाजिनां सामानि क्रियन्ते बार्ह-  
 तानि भूयिष्ठानि कथेति सवनच्छन्दो बृहत्थथाप्ये-  
 तन्मोध्यन्दिनच्छन्दो भवति बार्हतानि वाव भूयि-  
 ष्ठानि लभत इति हे गायत्रीसामिनी करोति हे बहि-  
 ध्वमानं मुखयीगीयंक्रौ भवतस्ते कुशलं यदनुपूर्वं  
 पञ्च माध्यन्दिने षड्भवं एव रोही भवति देव-  
 स्थानं वरुणसाम सोमसामेति देवराज्ञा सैन्धुचितं  
 दैर्घश्रवसं पार्थ काशीवतं ब्राह्मणसाम सद्राजसाम-  
 संपसङ्कगायते क्षत्रमार्गेण च चार राजसूययाजीव बभू-

वेति दैवीद्रासं वाध्यर्षं वैतह्व्यं त्रासदस्यव मिति  
मनुष्यराज्ञां द्वैपद उक्तप्रणयो विभंशाशङ्क सिद्धं  
कर्म द्विविधेन प्रतिष्ठेति तच्चैतत्संज्ञासांहीयं सोद्व-  
न्नम् राजयज्ञेऽभिरूप मनुयुष्ठ मितरे सदीवि-  
शीयं दशपेयस्य मध्यन्दिने विशीयं राजयज्ञेऽभि-  
रूपं वारयन्तीय मग्निष्टोमसामखांस्वेष्वन्वारवन्तीय  
मिति ॥ ५ ॥

प्रतीचीनस्तीम उत्तरखं खलु बृहत्पृष्ठं करोत्ये-  
तन्नक्तिः क्षत्रिय इत्यतिरात्रसंस्थं करोति चतुर्थीश-  
मिज्या तत् चतुर्थीं सस्थां मित्यथापीदं द्वितीयं  
यज्ञस्थानं यद्दहीनो द्वितीयो वर्षः क्षत्रिय इति  
ज्योतिष्टोमं तन्न मेतदिह नक्तितन्वयोरय मुक्तोकः  
क्षत्रियस्येति सोमकारित आवापो व्यष्टिद्विरात्र  
उत्तरस्तत्रामु मेव द्विरात्र आहरति तत्र दशस्तेत्रिया  
उपाहरति संवत्सरसम्पदे चतुर्विंशा वृत्तरी पव-  
मानो करोति ब्रह्मिष्यवमानसमाधये सप्तदश-त्रिणव्री  
प्रच्यावयति तावनन्तरयोः स्तोत्रयोरनुष्टोत्रकविं-  
शान्युक्त्यानि करोति शिभंशाशङ्को द्विरात्रस्तत्रामु  
मेव प्रतिष्ठास्तीमं मभि प्रायुक्तायैतद्विशोविशीयं  
राजयज्ञेऽभिरूपं क्षत्रियस्य धृतिः किमर्थं इत्या-

सुखजनप्रदोऽयं राजा तस्य चक्षसंयमार्यः चक्षस-  
यमार्यः ॥ ६ ॥

अथातो इन्द्रो ब्रह्माचक्षते तेन सर्वे इन्द्रादग्ने  
मिश्रास्तु भवन्ति यौ : यावेष्वाः समान मर्थं मुपकृत्तौ  
तौ ती इन्द्रो भवतो राज्यकामयज्ञः प्रथमस्तस्य यद्देवं  
विधः स्तोमयोग एव मष्टावेकविंशान्तसम्पदात् इति  
सप्तदशं पवमानेषु निदधात्येष विंद्-स्तोमो भवति  
विट्कामो : राजा ऽथापेते ग्रामां इव सुत्याया  
गतपवमानाः सम्भ्रूणांश्कुन्दिभिः सामभिरिति तत्र  
विट्स्तोमः सप्तदशः मचिकीर्षीदनुपूर्वं मावर्त्ति-  
स्यानेष्वतिशिष्टान् भागस्त्रोमानेवं चतुष्टोमो भवति  
विभ्रंशाशङ्कः मिदं कर्म स चतुरेण प्रतिष्ठेति  
व्याख्यातं भौभयसाम्यं मभिषेचनीये ज्योतिष्टोमं  
तन्त्रं इन्द्राख्यातं केशवपनीये ऽन्नाद्यकामयज्ञः उत्तरं-  
स्तव चतुर्त्तव माहरत्येतद्गृहोऽस्तौव मित्या-  
मद्दीयवादुत्तर माभीक भेतदृष्टिसंस्थां वृष्टिज मेव  
मन्नं माग्नीगवाद्कर्पुष्यं भेतदग्नायसंस्ताष मिति  
प्रजातिकाम \* यज्ञः उत्तरस्तचैकत्र सुपाहरत्येषा  
वृषखती प्रजातिकाम + यज्ञो ऽभिरूपान्तरिज्ञप्रवा-

दान्तरिक्षायतनम् गन्धर्वाप्सरस इति तत्र धो द्रव्य-  
विकारः प्रजाति कामः यज्ञत्वात् स भवति शुश्रुत्सद्यज्ञ  
उत्तरसद्यज्ञ द्वादशं माध्यन्दिनं सवेधं त्रिवृती अभितं  
एव मिव ब्राह्मणं भवति यैकादशी या द्वादशीत्येका-  
दशीः प्रातस्सवन उपसञ्चक्षीत द्वादशीस्तृतीयसवन  
एवं गरस्य व्युपादानं सिध्यतीति तदपि शश्वदध्वर्यव  
उपाहरन्ति स्तोमो वै त्रिवृतः स्तोमो द्वादशो यत्  
त्रिवृतो द्वादशं मुपयन्ति पुनर्द्वादशात् त्रिवृतं तस्मा-  
देष पुनस्तोम इत्युक्त्यसंख्यं करेत्येष मेतासां  
स्त्रीयाणां व्युपादानं सिध्यतीति स्तोमकल्यायैकं  
सामं मध्यन्दिनं मुपाहरति स यन्मैधातिथ मेतेत्या-  
रिष्टवती योनिः प्रायश्चित्तकृत्ये ऽभिरूपे ऽत्येतो यो  
द्रव्यविकारः शुश्रुत्सद्यज्ञवान्तसु भवति ॥ ७ ॥

पशुकामयज्ञं उत्तरसद्यज्ञं चतुर्थयाथान्तस्तोमान्  
करोति चतुष्पादाः पशव इति तदपि शश्वद ब्राह्मणं  
भवति यन्नतुश्चतुर्द्विज्जरोतीत्ययं खल्वत्रानुष्टुभः प्रति-  
पदः करोति पशुकामयज्ञे चतुष्पादा अभिरूपा इति  
तास्तिस्रः सतीञ्चतस्रो गायत्रीः करोति गायत्री-  
स्यां च हि भवति वारवन्तीयं यज्ञायज्ञीयचतुर्ये-  
षूक्त्यस्तोत्रीयेष्वेव मिव ब्राह्मणं भवति बोक्तव्यो

नाग्निष्टोम इति यद् वारवन्तीयं पशुसंज्ञावं  
 वापि च स्तोत्रीयाणां सन्निवारणाय पशुकामयज्ञ  
 पवोत्तरस्तं च चर्तुर्द्वयं माहरत्येतत्पथ्यच्छन्द इति  
 षोडशिसंस्थं करोत्येव मिक् ब्राह्मणं भवति  
 नोक्थ्यो नातिराच इति पशुकामयज्ञत्वाद्वाङ्मायञ्च  
 उक्थ्यप्रणयः पशुकामयज्ञावेबोत्तरापि वां हिरात्राग्नि  
 मुप्रंक्तौ स्याता मुभयेज्ज्यानि ज्योगात् तं च सप्ति-  
 सप्तदशौ स्तोमौ करोत्येतौ पशुसंज्ञावा वित्येक-  
 विंश मुत्तरश्च बहिष्प्रवमानं करोति त्रिकं होतु-  
 राज्यं सप्रायश्चिकाही व्याविवर्त्तीयपद्मेतस्मिन्-  
 स्तदेकविंशे पराक्रम्य त्रिकेण वर्ज्जिण बलं विभे-  
 देति लामकायनस्तां उ सप्ति-सप्तदशावेव सम्पदेति  
 नानातन्त्रे नानाषुद्धे हिरात्रन्यायेन संञ्चारयति  
 च ब च सञ्चारयत्येकाह्न्यायेनाहः संञ्चारणं हिरात्र-  
 न्यायेनासञ्चारणं जनुषेकवीं हिरात्रन्यायेनौदला-  
 म्भीगवे हिरात्रन्यायेनाञ्जित इति काव मुन्य मेषा  
 सामन्यं \* त्वचप्रथमां पशुप्रज्ञादिति संत्रासाहीयं  
 शुध्ये हिरात्रन्यायेन श्यावाश्व-कौञ्चे हिरात्रन्याये-  
 नाग्रे गोराजाय स्तुविष्यत इति काव † मुन्य मृगेग

इत्यहेयं सुवतीति शाण्डिल्याधिनो गोप्रवादात्तु  
स्नातकाः कुर्वन्तीति ॥ ८ ॥

अपचितिकामयज्ञ उत्तरंस्तत्र चतुर्विंश-प्रष्टान्  
करोत्येवमिव ब्राह्मणं भवति वि-ह्वयन्तीति चतुर्विं-  
शत्रिंशवावितीवैतद्भवति चतुर्विंशं पत्रमानयोर्निर्दे-  
धाति तेन प्रच्युती त्रिवृत्सप्तदंशावाज्यपृष्ठेष्वनु-  
गृह्णाति ज्योतिष्टोमं तन्न मेतदपचिततरं तन्नयो-  
रिति स्तोमंकारित आवापोपचितिकामयज्ञ एवो-  
त्तरस्तस्त्वोक्ताः स्तोमास्तस्य यदेवंविधः स्तोमयोग-  
एवं विराजः सम्पद्यत इति द्विपदः करोति  
दशरात्रन्यायेन स यदेता एवा दशरात्रावमानु-  
दृष्टा इति तत्र वारवन्तीय मन्तसामान्तच्छन्दसि  
सूर्यवत्यो दशरात्रन्यायेनाग्नाभिर्यजनं उत्तरस्तत्रोभे  
सामनी करोत्यग्नाभीज्यां क्वरक्षीत्रिकीर्षत् तथा-  
पुभयसामाग्निर्भवर्युग्माभ्यां हि परिगीयत इति  
ज्योतिष्टोमं तन्न मेतदाग्नेय मिति स्थाः सौपर्णं  
पश्चिसाम पच्यभीष्टाया मग्नेर्वत् मग्नाभीष्टायाः  
स्वाशिरामर्कोऽग्नाभिर्यजने व्रते दृष्टो भवत्यग्नाभि-  
यजनं एवोत्तरस्तत्र ज्योतिष्टोमं मेवाहरयेतदाग्नेय

मिति त्रिवृत्पञ्चदशवाज्यपृष्ठेषु सम्पद्भेन कुर्मो  
व्याख्यात मौभयसामं ज्योतिर्ह्येवायं विकृतस्तत्रै-  
दल मनुष्टुभि तुन्वसमाप्तये तदेतदष्टमात् पृष्ठा-  
न्वितम् ॥ ६ ॥

राज्यञ्च उत्तरस्तत्र द्वे स्तोत्रीये उपाहरति ककुद्-  
ह्वं दिदर्शयिषन्नपिवा सदोविशीयसामान्ते गृह्य-  
मांशे सप्तदश कारयेतां विषमे स्तोमे सत्यनध्यासां  
वृहतीं करोति ज्योतिष्टोम्यात् तथाः सामकल्पो \*  
व्याख्यातो ऽग्निष्टुति व्याख्यात मौभयसाम्  
ज्योतिर्ह्येवायं विकृतस्तत्र गौरीवित मनुष्टुभ्येतदृष-  
भोक्त मिति वैश्ययज्ञ उत्तरो वैश्यस्य राजमात्रस्य  
स्वाराज्य मीसतो यज्ञः स्यादित्याहू राज्ञ एव खल्वयं  
संवरतस्य साहसिक्याद्विड्भूतस्य कितवाशयस्य सवः  
स्यादिति शाण्डिल्यो ऽभिषेचनीयं प्रत्युपधावति  
सवसामान्याद् इति षादपश्चादनुष्टुभः प्रति-  
पदो ऽपयन्ति कुश्लं यष्टुपवती मेषा रायन्तरी राय-  
न्तरो वैश्य इति व्यत्यासेन नित्यां वृहतीं करोति  
समो हि स्तोमो व्याख्यातापुत्तरी राज्यञ्च उत्तरस्तं  
खलु वृहत्पृष्ठ मिन्द्रन्यङ्गाभिः कल्पयतेऽतः शक्तिः

चन्द्रिय इति तत्र या इन्द्रवत्यो विस्पष्टस्तः अथापि  
 वृत्रहप्रवादेन वृषणवटप्रवादेन सूर्यवत्तयेत्येन्द्रो रूप  
 मनु गृहणन् मन्यत इति तन्त्रे विद्यति पद्यन्ते ज्यो-  
 तिष्टोमं तन्त्र मित्थेके गायत्रीभ्यां जानीम इत्याशी-  
 स्तन्त्र मित्थपर मिन्द्रवतीभिरयः क्लृप्तस्ता एता इन्द्र-  
 वत्य इति तत्र यो द्रव्यविकार ऐन्द्रौचिकीर्षया स  
 भवति राजपुरोहितयोर्यज्ञ उत्तरस्तत्रेभ्यो सामुनी  
 उभयानि व्यञ्जनानि द्वैयज्ञा ज्योतिष्टोमं तन्त्रं नित्यं  
 ब्राह्मणस्योक्तो यज्ञं चन्द्रियसं ॥ १० ॥

विजिघांसद्वयं उत्तरस्तत्रेभ्यो सामुनी करोतिः  
 विजिघांसद्वयं क्वरसं चिकीर्षं स्वैतद्विशोत्रिशीयं  
 विजिघांसद्वयं ऽभिरूपं सोमसामाऽऽयं वणं वेत्य-  
 भिचरतः सोमसामैतत्क्वरणिधनं तस्य निधने विचा-  
 रयन्तीन्द्र इव दस्युः रमृणा २३४५ सूर्य इव दस्युः  
 रमृणा २३४५ वज्रिभ्युवञ्जी २३४५ इति वै तेषां  
 हे पूर्वे वोत्तरे वा सर्वाणि वं समख्यन्तन्त्र मेव स्वर-  
 येद्यथा वायो भस्तीया निहन्यमानायाः ज्ञादः  
 स्याद्यथा वायसौ समृच्छेयातां यथा वनिष्कः क्लृप्तचेणा-  
 भिहतो भ्वनेद्यथा वासन्नपुरस्य पादस्य निघातस्य  
 हृत्स्थिति चायं वणं पशुकामस्यैतच्चतुर्णिधनं पशुकाम-



यज्ञे ऽभिख्य मेव मेधं एवोत्तरो ऽपि वा नाज्ञात-  
 प्रायश्चित्तये यन्नानाज्ञातं भयं मागच्छेद्यथा माटव  
 सा जगाम यथा विहनुशिरो यथा वयःपतनं तद-  
 प्येवं मिव ब्राह्मणं भवतीन्द्र मदेश्यो माया अस-  
 चन्तेति शाण्डिल्यायन एव नूनं तद्विदाञ्चकारेति  
 ह आह धन्ञ्जयो यदर्थ इमं माजहारानाज्ञात  
 इव खल्वयं योगो भवति तत्र त एव सोमा ये  
 पूर्वस्य तांस्तु यदेवं प्रयुक्तेण प्रायावेकाहौ व्राविवर्त्त-  
 शिषुस्तन्व विप्रतिपद्यन्त उभयसामतन्व मित्येके  
 प्रत्नवत्यो ह्येता माध्यन्दिनीया इत्याशीस्तत्र मित्य-  
 म् मनाज्ञातप्रायश्चित्तये ऽथ तन्नानाज्ञातयोगांश्चि-  
 कीर्षन् गायत्र्याः स्थाने हे वृहत्यो निदधाति ते  
 संशुद्ध तिस्रो गायत्रीः करोति गायत्रीस्थानं हि  
 भवति तत्र यो द्रव्यविकारो नाज्ञातप्रायश्चित्तये स  
 भवत्यपि च विजिघांसया ॥११॥

अभिचरणीयावेधीर्त्तरो तयोः स्थेनैव द्रव्यसमु-  
 द्देश उक्तो ये पूर्वयोः पूर्वस्य स्तोमाः तयोः पूर्वस्योद्द-  
 रति सप्तदशनवदशौ प्रजातिस्त्वावाविति षडति-  
 शिष्टाद् द्विः स्तोत्रभाजः करोति सन्दर्शरूपं दिदर्श-  
 यिषन्नेडं ककुभिः करोति पुरुषच्छन्दसः स्वरं विच्या-

वयिष्यत्तच्चैतत् काशीतं क्षीणस्वरिडं चयं परेषा  
मिच्छतीति सामानुष्टुभि करोत्येतानि क्रूराणि  
सामानीति सयत् चयाणां प्रथम सुतदानुष्टुभमिति  
पूर्वाध्यायं पूर्वं यज्ञस्थाने ऽथप्येतत् क्रूरणिधनं  
वधार्थं ऽभिरूप मथापि बृहन्निधनेनानुष्टुभभात्येष  
वै सामवज्जं इति बृहद्भयन्तरयोर्वदति इतोऽमकल्पा-  
योत्तरे विहितवन्तौ तृचां वाहरति तत्र तदेव साम  
स्यादिति धान्ज्ज्यः समानार्थो हि भवन्तौ द्वितीय  
मिति गौतमः स प्रायश्चित्काहौ व्यावर्त्तयिषन्नथा-  
प्यतदभिनिकृष्टगीतिवधार्थं ऽभिरूपं वज्जोक्तं प्रमत्-  
हिष्टीयं मुक्तो यज्ञ मीपंगव भैडत्वात् षोडशिसाष्टौ  
नामधं करोति तच्चैतद्दुःशीय मतेनडाकामश्च  
सिध्यत्यजासिकल्पश्चेति ॥ १२ ॥

मुद्धानाम्नीः षोडशिसामैतां वज्जोक्ता राज्ञयज्ञे  
ऽभिरूपां वज्जो हि राज्ञेति कथं धर्मा इति कर्त्तव्या  
इत्येकेऽपि ह्यरासा मेष स्वाध्याये धर्मा भवत्यथापि  
धर्मस्थानं मापत्ताः षोडशिधर्मन् कुर्वन् कथं महा-  
नाम्नीनां धमान् न कुर्यादित्यथापि वज्जोक्ता आपो  
ऽथापि सङ्गयो लोपो लोपरन् न्याय्यतर इत्य-  
कर्त्तव्या इत्यपरं पृष्ठापन्नानां वदति यदप्युपनिषाद्य

स्तुषत इति तद्देतदैपिंघ्यासां मेष स्वाध्याये धर्मी  
 भवतीत्यपोषं वादः स्वाध्यायधर्मान् कुर्याद् यदेतद्-  
 मिस्थान मापन्नां इति धर्मिस्थान मापन्नतरं खलु  
 सद्रंथन्तरं न धर्मांस्तभते यदेतद्देतद्वाक्ता आपन्न  
 इति शास्त्रयुक्ता आपोऽयः पश्चात्पत्रा उपसृजन्ति  
 वैश्वानर इव तच्छंभयन्त्यापो हि शान्तिरिति ह्याह  
 यदेतत्संशये लोपो लोपान् न्याय्यतर इति यो रथ-  
 न्तरधर्मान्तृत्वा महानास्त्रीनां धर्मान् कर्त्तव्यान्  
 मन्वेत सदृशव्याघातोऽपि तस्य वज्रोक्ततरा धमा  
 इति धर्मा इति ॥ १३ ॥

॥ इति निदानसूत्रे सप्तमः प्रपाठकः ॥

॥ अर्थ अष्टमः प्रपाठकः ॥

अथातो ऽहीनास्तथा मुक्तां द्रव्याणां मन्वयो  
 ऽपि दशरात्रां वल्गोपां ऽहीनास्तत्र सिद्धानि दश-  
 रात्रिकाणि द्रव्याणां हीनिक्यां रात्रेः श्रौतं कक्षस्य च  
 ऽपनयति सत्रञ्चाहीनञ्च व्यावर्त्तयिषुस्त्रैताः  
 करोति पन्थं पन्थमित्येतार इत्येताः सुतश्तीनां  
 स्थाने सुतवत्यं इति मध्यमस्य रात्रिपर्यायस्य होतः

षामणी विचारयन्ति दैवोदासं वा स्याद्दौर्घसद्गनं वेति  
विकल्पो वा स्यादपि वा दैवोदास महीने कुर्यात्  
पूर्वाध्यायं पूर्वं यज्ञस्थान और्घसद्गने रुचेषूत्तराध्याय  
मुत्तरे यज्ञस्थाने ऽग्नाप्यस्त्रिंशत्सत्त्वाद्दरूपो भवत्यौर्घ-  
सद्गन मपि शर्वरीषु प्रोहन्तीत्यथ खत्वाह त्रिणिधनं  
भवतीति कथं त्रिणिधनं स्यादित्येतान्येतान्येव निध-  
नानि व्यवस्यन्त उपेयुः सुवृत्तिभी २३६५ नृमादगा-  
२३४५ म भरे २३४५ पुत्रा २३४५ इति तदाहुर्जनेच्छन्  
त्रिणिधनं यदनन्तराणि निधनानीत्यथ वा एतानि  
विहृतान्यनुपद मुपेयुस्तत्र निन्दा यदनुपायात्रिध-  
नाना मभिव्याहारो ऽथवा एतानि पृथक्स्तोत्रीया-  
सूपेयुस्तत्र निन्दा यदनुपायात्रिधनाना मभिव्याहारो  
ऽथवा एतानि पृथक्स्तोत्रियासूपेयुस्तत्र निन्दा यत्  
सप्रामाण्यां निधनानां विप्रयोगो यथासमानाय मेवो-  
पेयु रथापि यथासमाख्याय मेवैतत्त्रिणिधनं भव-  
तीति शाण्डिल्यायनो यत्तिस्त्रो निधनमात्रा भव-  
न्तीति सर्वेषु पदेष्वभ्यासात् सौमेध् रात्रिषामेत्या-  
चक्षते कीत्स महीनादपनयति सत्रञ्चाहीनं च  
व्यावर्त्तयिषुस्तत्रैतदाष्टादष्ट मृषिसुस्ताव मा  
त्वा विशन्तिवन्दव इत्येतास्त्रिः सोभवतीनां स्थाने

सोमवत्य इति समुद्रप्रवादा आवल्यान्ते ऽभिरूपा  
इति ॥१॥

• बुभूषद्यञ्ज उत्तरो ऽपि वा षडहासिं सुपकृतः  
स्यादेतेषां स्तोमनां सुपधानात् तत्रोभे सामनी  
बार्हतं तन्व बृहस्पृष्टयोपवतीति प्रतिपत्कस्य हेतो-  
रिति बुभूषद्यञ्जेऽयं भक्त्यनवधारितकाम इति  
लान्नकायनस्तत्र सर्वाभिप्रायां प्रतिपद् मच्चिकीर्षी-  
दयापि षडहो ऽयं संलङ्घितः सैषा षडहप्रति-  
पद्भवत्यथापुमि स्थानवती अचिकीर्षीत् तच्चेण बृह-  
स्पतिपदा रथन्तरमित्यश्रापेना मेवान्यवेदाः समा-  
मेवन्त्यास्वीगवादुत्तर माथर्वणां षडहोऽयं संलङ्घि-  
तस्तदेतत्प्रायश्चित्तिः स्या मा पशुकामयज्ञ उत्तरो  
ऽपि वा द्विरात्रमिष्टि मुभकृतिः स्यादेतेषां स्तोत्राणा  
मुपधानाद्दशरात्रासिं वा कृत्स्नीमाना सुपधाना-  
द्वास्यात सौभयसाम्य मनुषूँ लक्ष्णं इयान्याज्यानि  
इयानि पृष्ठानि द्वैविध्यात् स खल्वाप्नोर्यामाकः  
पृष्ठानां वैश्वजितानि पृष्ठानि गर्भं करोत्येतानि  
नानात्वकृष्णानौत्थथापेव मीप्तिंरा दशरात्रस्येति स  
कस्य हेतौर्गर्भान् करोतीत्येषु हि शश्वद् बह्वृचा  
अधीयते गर्भमिति पृष्ठानि भवन्त्याप्नोर्यामस्य तानि

गर्भकारं पशुं सैत्यशवो वै पृष्ठानि यद् गर्भवन्ति  
भवन्ति प्रजननेनेव पशुन्तसमर्द्धयन्तीति बृहद्वैराजगर्भं  
करोति. बार्हतं वै वैराजं तेनैव तदनुरूपगर्भं वाम-  
देव्यं महानानीगर्भं करोत्यापो वै वामदेवा मापो-  
महानान्नास्तेनैव तदनुरूपगर्भं श्यैतं त्रैरूपगर्भं करोति  
पशवो वै श्यैतं पशवो वैरूपं तेनैव तदनुरूपगर्भं  
कालियं रेवतीगर्भं करोत्यैडं वै कालियं मैडारेवत्य-  
स्तेनैव तदनुरूपगर्भं मथो द्रवदिडं कालियं कस्तेडा-  
रेवत्यस्तस्मिन् मिथुनादेव प्रजयत इत्यपि वा सर्वा-  
ण्यावर्त्तीनि वैश्वजितै रावर्त्तिभिर्गर्भवन्ति कुर्यात् तत्र  
बृहत्सञ्चरते तस्य वैरूपं विधृत्या इति तत्र गर्भविधानं  
साहुर्मध्यमं पर्यायं सस्त्रोत्रीयं गर्भं कुर्यात् प्रथमो-  
त्तमौ सुखाद्यैव गर्भोपपत्तिर्भवतीति कथं धर्मा इति  
कर्त्तव्या इत्येके गर्भभूतानि भवन्त्यनुभूतान्यधर्मा  
गर्भो भवतीति कथं धर्मा इति कर्त्तव्या इत्येके गर्भ-  
भूतानि भवन्त्यनुभूतान्यधर्मा गर्भो भवतीति कर्त्तव्या  
इत्याचार्यास्तत्र तान्येव विवचनानि यानि विश्व-  
जिति सुरूपं जराबोधेयस्य स्थानं एतत्पशुसंज्ञाव  
मित्युद्धरत्याथर्वणं द्विपदा अत्र करिष्यन् भवति तत्रै-  
तस्वीहविषं मभ्यस्तगौत्यतिरिक्तं मतिरिक्तो कल्पे ॥२॥

प्रजातिकाम- \* -यच्च उत्तरसत्र वो द्व्यविकारः  
 प्रजातिकाम- † -यच्चत्वात् स भवति वग्राखाता  
 उत्तरे ‡ अथैत एतस्तोमा एतान् कामानभ्युपकृता  
 यथैतद् ब्राह्मण मथापोकस्तोमान्नाहीनिकान्यहानि  
 सोऽन्तन्वाय मदिदृशयिधीनत् खलु बृहदथन्तरपृष्ठान्  
 कुर्मो रथन्तरवाहता ह्येते स्तोमा इति ज्योतिष्टोमं  
 तच्च ज्योतिषा ह्येते स्तोमा इति तत्रानुपृष्ठं द्रवा-  
 गमः षोडश्याः षोडशिनो ऽनुब्राह्मणं वेति विचार-  
 यन्ति किं स्तोमा अनुब्राह्मणं सुरित्थेकविंश-  
 स्तोमा इत्येष एषां प्रकृतिस्तोमो भवत्यथाप्याहुरह-  
 स्तोम महः प्रथमोत्तमयो रन्वियाता मेकविंशं तु  
 पञ्चदशस्य कुर्यात् पञ्चदशं सप्तदशस्यैवं तं स्तोमं  
 सस्तुतो ऽतिरञ्चः सम्पद्यते यो यस्तस्याहो भवत्यह-  
 स्तोमं रवेवान्वियु रित्यनुब्राह्मण मित्यनुवृत्तमित्ये-  
 तत् स्याद्यो वा ह्यहः स्तोमः सं षोडशिनो न्यायेन  
 यो वा ह्यसीयाद्रित्वाहस्तोमं चैनः मनुयत्तम्पश्यामी  
 ऽधातो द्विराचस्तत्र ज्योतिष्टोमसर्वस्तोमी समस्यति  
 मा विलोपे भूयान् विलोपेऽभूदिति च द्वाशरात्रि-

\* † "प्रजपतिकाम"-इति ख।

‡ ख-पुस्तके लक्ष्मण-रितीयखण्डः समाप्तः।

कारणां. न हे करोत्ययेतानि दशरात्रं खान्ताहानि  
चतुर्थ-षष्ठे. नवम-दशमे इत्येतेषां द्वात्राण्यंहीना-  
न्तेषु चिकीर्षितानि तत्रोत्तरच बाह्यद्वयमान मन्वत्  
प्रतिपदो नावमिकम् ॥ ३ ॥

अथैते हाविष्मत-हाविष्कृते हाविष्कृतं पूर्वस्याङ्ग  
भ्राम्भवचरुः स्थानापन्नं भवति द्वितीयस्थानं च हा-  
विष्मत मुत्तरस्य माध्यन्दिने सङ्ग्रहितञ्च भागविल्लोपे  
भागसूक्तानाय निकासयते ऽपि चैवः सती नेदीय-  
सी हाविष्मत-हाविष्कृते भवत इति जनुषैकचर्वा  
वहर्गं न्यायेन चैशोक-वैखानसे जागन्तस्य भागस्या-  
नुग्रहायांहीनान्तेष्वर्काश्चिकीर्षिताः सङ्ग्रोधान्निह-  
दीर्घतमसोऽर्का विपर्ययेतेतरयोरग्निः स यदेता-  
स्वेवासु स्वयेनि रथाप्येता धृतबलौ दक्षितवत्यो ऽन्ते-  
ऽभिरूपाः इति ज्योतिष्टोमान्युक्तान्यहीनान्तेषु  
चिकीर्षितान्येवं पथ्यावसानं मित्यायुष मुत्तरस्य दि-  
तीयं करोत्येते संप्रायास्त्रिकद्रुका इति बृहत्पृष्ठ  
बाहंतं तन्वं द्वितीयं हि स्थानं मापन्ना इत्युत्तरत्यन्त-  
लक्षणानि त्रिणव-त्रयस्त्रिंशयो रन्वपाय मुत्सेध-  
निषिधौ परिखाना मिति जग बोधीय महीनेषु  
चिकीर्षितं मेतच्छन्दोमसामेति तद्य दृष्याहि



राशन्तरास्तीमांश्चुध्यं मविच्यावयिषीदुद्दृशीयं तै-  
 रश्चाः वेति विचारयन्ति पूर्वस्याङ्ग उक्तान्त इत्यङ्गोद्दृ-  
 शीयं मुपक्रमणीथं महरिति तैरश्चा मषोडशिका  
 एत्रिस्तोमन्नाचेणाषोडशिका ह्येवयुर्भवतीति त्रिवृत्  
 पञ्चदशी ऽग्निष्टोम उत्तरस्य पूर्व एकस्तोमता मिवा-  
 ङ्गोर्दिदर्शयिषन्नायुषा प्रच्युतं पञ्चदशं पूर्वाङ्गिनहन्यः  
 नुष्टङ्गाति तत्र यदेतत् सकृच्चो ऽभवदिति कपिवनो  
 भायजात्यश्चातूरात्राय जामदग्नये दिदीक्षे ब्रह्मचा-  
 रिणः सभ्यन्नकुलीन सपः प्रहृत्य तस्य त्रिवृत् पञ्च-  
 दशं मह रूपेणं बभूवाद्यैतरस्त मर्थः साधयित्वा  
 प्रच्याजंगाम समाय मिम महर्यागं निशीशमतेत्याप्युर-  
 तिरात्र मुपदधौ ब्रह्मचारिणश्च परिहारेण यज्ञ प्रत्यव-  
 हारेण च हृत्तो बभूव यस्त्वेतौ दोषौ परिहरेन्न हृत्तः  
 स्यादिति पूर्वेषु ब द्रव्यकल्पोऽव्याख्यातो व्याख्या-  
 तः ॥ ४ ॥

अथातस्त्रिराचास्तत्र वामदेव्यः तृतीये पृष्ठे  
 करोति लोकाविधां त्रिरात्र उपकृत एतानि लोके  
 सामानौति तानि कुशलं यद्यथाभक्ति निदधाति  
 तन्त्रेषु विप्रतिप्रद्यत्त आहीनिकतन्त्राणीति गौतम-  
 स्तद्गायत्रीभिर्विज्ञानीम् एकैवात्राहीनिकी भव-

त्यस्य प्रतीति तां यत्करोति सहस्रवतो, सहस्रवत् तद-  
 भिरूपेत्यैकाहिकानीति धानञ्ज्यस्तद् गायत्रीभि-  
 रेव जांमोम एकैवात्राहीनिकी भवति, प्र सोमास्तौ  
 विपञ्चित इति तां ग्रत्करोति प्रवत्युपक्रमे ऽभिरूपे-  
 त्यहरहरेवाहीनैकाहाभ्यां वर्त्तत इति शाण्डिल्या-  
 यन एवं युक्ता एता गायत्री भवन्तीत्यथ खल्वत्र भाग-  
 विपर्ययो भवति लोकविधां चिरात्र उपंक्तस्तं यथा-  
 भूक्तार्चिकीर्षीञ्चे एते परे अहनी भागविपर्ययाद्  
 द्रव्यसमासेन वर्त्तते द्वितीये ऽहस्थानि द्वितीय-  
 कानि भागान्वितानि तृतीयैकान्येतदेव विप-  
 रीतं तृतीये खल्वत्र इयान्यक्षररूपाणि क्रियन्ते प्रज्ज-  
 पतेश्च वागक्षराक्षराणि चाज्यादिषु प्रजापतेर्वाग-  
 क्षराणि यथोपलभ्य महस्वक्षराक्षराण्यैकाक्षरणि-  
 धनं यौधाजय मेष आचार्यसमयो ऽथाप्याह यदा-  
 क्षराणि प्रथमं महंभजन्त इति व्याख्याता अर्का-  
 मृतथाज्यद्रोहाभि पूर्वावकी व्यत्यस्य चक्षरणिधनं  
 प्रथमि ऽहनि चिकीर्षन्नाज्यद्रोहानां प्रथमं तृतीय एव  
 मित्र ब्राह्मणं भवत्यथाप्येषा मेतत् चिणिधनं तृतीये  
 ऽभिरूपं, मनु प्रथमस्य, करोत्यत्रैव सन्तानार्थं मिदं  
 भवति, इक्षरणिधनं वादनुच्छन्दसः मितरथी रैड

मन्त्रं करीतीडांनुग्रहो जगती वा खिन्न सामान्ते-  
नापिप्रांदयिषीत् ॥ ५ ॥

उपवती द्वितीयस्य प्रतिपन्नवस्माङ्गागान्वितां कया  
ते अग्ने अद्भिरस इति होतुराज्यं केति तृतीय मिति  
हि भवतीत्यथाप्राह यत्सांमा स्तोमो भवति तदा-  
ज्येषु निराहेति ता एताः कवत्यो यथा वामदेव्यर्चो  
दाश्वरात्रिकाण्युतराणि सन्तनीति स्वयोनीति होतृ-  
कपृष्ठान्येतानि छन्दोमचाहे प्रायश्चित्तार्थं गायत्र-  
ग्राश्वं मैत्रावरुणसामैतद् वामदेव्यसदृशं तत् खलु  
वृहतीषु करोति चिंस्यान्नां वृहतीं पृष्ठेषु चिकीर्षन्न-  
शम्यश्चिन् नषाक्षराक्षरं भवति ककारषकारादि-  
रकारः सन्तनि ब्रह्मसामास्तावि मन्म पूर्य मित्येता-  
ब्रह्मप्रवादा इति सन्तन्यच्छावाकसाम नवमाङ्गागा-  
न्वित मथ खल्वच जामि भवति लोकविधां चिरात्र  
उपाकृतः सन्निन्नं माभ्यां लोकाभ्यां मन्तरिच मिति  
पाञ्चमिको ककुभं करोत्येतस्या मक्षरं भवति ककार-  
षकारादि रकारः पिपीलिकमध्यां करोति वागुक्तो  
स्यं चिराचस्ततोभर वाकारां अनुष्टुभा मचिकीर्षीन्नाव-  
मिकी रुत्तरा अक्षरसमासो हि तार्त्तीयिकीषु तासां  
मध्यमा मुद्धरति दशरात्रलिङ्गेति तत्रैवां करोति तथ

सखायः पुरुषं च मित्येषा सखिमती यथा वामदेवाख-  
 चस्तां यदावर्त्तयति परिवत्या प्रक्रमं परिजिहीर्षन्  
 नानाऽग्निष्टोमसामानि नानात्वार्थी नानाच्छन्दस्खा-  
 वृत्तैष्वेवं भूयो नानात्व मिति स यदिहानुष्टुभः  
 करोति वृहतीः कृतवानुष्टुभां चो भवति \* तच्चैतद्विशो-  
 विशीयं स्वयोभ्यापन्नं पुरस्तादेतत्स्थानं वाक्प्रवादे  
 ऽत्र भवति भागऽग्विताम्येकथानि होता देवो अमत्य  
 इति तृतीयस्य होतुराज्यं हो इति तृतीय मिति  
 हि भवतीति गौषूक्तं प्रायश्चित्तिसामैतस्मिन्नक्षरा-  
 च्छरं भवति रेफादि रकारः सतोवृहतीं करोति  
 त्रिपदा त्रिराचे ऽभिरूपेति सवासांहीयं मैत्रावरुण-  
 सामैतद् वामदेव्यसदृशं मपुरस्तात् स्तोभं बहिः-  
 स्वारं यथा वामदेव्यं वारवंन्तीयं मग्निष्टोमसामै-  
 तद्वाग्वीसामापन्नं पुरस्ता देतत्स्थानं वाक्प्रवादे  
 ऽत्र भवति वागुक्तीऽयं त्रिराचे ऽपि वानुष्टुभोपपत्त्या  
 वाक्प्रवादेनामुग्रहो भविष्यतीत्यक्षरविक्रमे ऽयं त्रिरा-  
 चोऽपि वानुष्टुभोपपत्त्या अक्षरप्रवादेनानुग्रहो भवि-  
 ष्यतीति विद्वानविद्वानिति तु भवन्ति नाना साधु रयं  
 त्रिरात्रक्षत्र नानत्त्विजो ऽचिकीर्षीत् कथं मविदा-

नृद्विक् खादिति त्वेवैतत् सदस्यानेव प्रतिग्राह्यान्  
कुरुत इति ॥ ६ ॥

राजयज्ञ उत्तरस्तस्य यदेवंविधोऽहर्योग एतान्य-  
स्ताहान्यन्तो हि राजेति महानाम्नीर्मध्यमस्याः पृष्ठं  
करोति सर्वच्छन्दस्यांसु सर्वपशूना मालम्भो न भवि-  
ष्यतीत्यथापेतां वज्रीक्ता राजयज्ञेऽभिरूपा वज्री हि  
राजेति कथं धर्मा इति कर्त्तव्या ब्रूयते तत्र ते चैव  
करणवर्णा ये वज्रेऽपि चेह स्वस्थानतराः पृष्ठञ्च हि  
भवन्यहीने चाथापि बहिर्द मिहाशान्तं क्रियते  
सर्वपशूना मालम्भो व्यभि मेधिकाः पृष्ठविलोपस्त-  
त्रापिः शान्त्यर्थास्ते क्रियमाणा बृहद्रथन्तरयोर्द्धमान्  
कारयेयुरित्यथामि संयुक्तधर्मा इत्यथ बृहद्रथन्तर-  
योर्द्धमान् कुर्युर्महानाम्नीबलानु नूनः महानाम्नीनां  
धर्माः क्रियेरन्नित्यकर्त्तव्या ब्रूयपरं तत्र ते चैवा-  
करणवर्णा ये वज्रेऽपि च यः स्वाध्यायधर्मान् प्रतीयात्  
कृत्स्नान् प्रत्येतु सहतीति ते वेलायां नोऽर्थस्तग्माध्य-  
न्दिनीन् महानाम्नीभिः स्तुर्वीरवनेको वा द्वौ वा  
सम्प्रगायेतां नेतरे शृणुयुरित्येतान्येव मकुर्वन्तो  
निर्वचनस्वाध्यायधर्माः श्यापि वो बृहद्रथन्तरयोर्महा-  
नाम्नोकारितान् धर्मान् मन्येत भूयश्चाल्पीयसे ऽनु-

सङ्हरेत प्रत्यक्षे च परोक्षायांनुचर्यं गमयेदित्यत-  
स्तत्पापीयो यो बृहद्रथन्तरधर्मान्कृत्वा महान्ताम्नीनां  
धर्मान् कर्त्तव्यान् मन्येत समानोष्पादानां समान-  
विधानानां संतो य एकान् कुर्यादिकान् न किञ्चि-  
सोऽत ऊर्द्धमन्याहन्याद् वाख्याता अनुष्टुभः प्रति-  
पदश्चतुष्टमैताभिः प्रच्युता मुपवती द्वितीये ऽहनि प्रति-  
पदं करोति कविमन्तं प्रथमात् प्रच्युतं तृतीये ऽह-  
न्यनुगृह्णाति वामदेवा महानाभीभिः प्रच्युतं खे-  
स्थाने ऽनुगृह्णाति पार्श्वरश्मं ब्रह्मसाम पङ्क्तिं प्रति-  
प्रयोजना महानाम् एतत् पाङ्क्तं चक्षुसामाथकारं  
शिधनं ताभ्यां प्रच्युते सन्तनिनी माध्यन्दिने ऽनु-  
गृह्णात्याशीस्त्वामानीमा प्रत्येषाता मिति ॥ ७ ॥

अथैतस्य पतन्तकस्य प्रथमे ऽहनि वैष्णवीष्व-  
नुष्टुप्सु पावमानीषु बहिष्पवमानं कल्पयेदित्येक  
आहुरेतत्प्रकृतौ दृष्टं भवतीति नैतदसुक्षुः स्तोमेषूप-  
पद्यत इत्यपरमेतस्त्रिन्निदं बहिष्पवमाने गायत्रीः  
पावमानी रावपेदेतदिह हाविष्कृतं भवतीति चतु-  
ष्टोमकारितास्ता भवन्तीत्यपरं गायत्रीष्वेव कल्पये-  
दित्यथ खल्वाहैते एव पूर्वं अहनौ इति तत्रैके पातन्तके  
प्रतियन्त्येतं विधाधं प्रदेशो भवतीति प्रकृत्यपथया

विकारा भवन्तीत्यपरं प्राकृतस्यैवाश्वमेधस्य प्रतीधा-  
दित्यथापि ते नानास्तोमा एकस्तोमो यन् भवति  
तत्र स्वतन्त्रा एताहाः स्युरित्येके बहुधैकाहानां  
स्नातन्त्रा दृश्यते यथायुष्कामे षड्रात्रे नवरात्रयो  
रिति त्रिरात्रतन्त्रा इत्यपरं मेवं च तन्त्राविलोपो  
ऽपि चैषा ऽहीगन्याय इत्यषोडशके गोत्रायुष्मी इत्यपरं  
मेवं दृष्टे चापि चैवं प्रदेशे भवतीत्यथैष वैदत्रिरात्र-  
स्य त्रिवृत्स्तोमाः स्युः षोडशिन उक्तमस्यातिरात्रस्य  
षोडशं प्रथमं रात्रिसामैवं तावत् स्तोमो यथा-  
त्रिरात्रो नाना षोडशिसामानि नानात्वार्थो नानदं  
प्रथमं उदशीयं द्वितीय एतदानुष्टुभं हरिवदोनि  
यथा गौरीवितं तस्य स्थाने तैरस्य मेतत् पूर्वाभ्यां  
समायं न्याय्य उक्तमे षोडश्यथैत उत्तर एतां कामा-  
नभ्युपकृता यथैतद् ब्राह्मणं स्तोमकारित आवापो  
ऽन्तर्वसवप्रत्यवहृटान्युत्तमस्त्राङ्ग उक्त्यानि लोक-  
विधां त्रिरात्र उपकृतो रोहीपकारो ऽथाप्येव मवा-  
इतं सवन मिति न्यायकृत् उत्तरो न्यायकृत्  
उत्तरः ॥ ८ ॥

अथैष चतुर्वीरो बृहद्रथन्तरपृष्ठ एव न हि षाड-  
हिकान्यनुभवन्ति नान्यो वप्रलुलुप्सीत् ते यन्नाना-

कन्दसु ब्राह्मणेनैव तद्वाख्यातं कानि तन्वाणीति  
 चतुरहतन्वाणीति गौतमस्तद्विजानीमश्चतुर्थे ऽहनि  
 चतुर्थप्रतिपदं मादिशैकाहतन्वाद्रात्रिं सुपजिगमि-  
 षन्नथ प्रत्नां करोतीति चीण्याहीनिकान्येक मेकै-  
 काहिक मिति धानञ्जय्य एवं पर्वणाहीनस्यादानं मेका-  
 हतन्वाद्रात्रे, स्वायः संयदेतदेतद्यन्त्रान्तरं स्तोम-  
 कारित आवाप उद्धरति जनुषैकवीं स्तोमकलार्थ-  
 स्तत्र ज्योतिष्टोम्यौ करोति तयोः स्थाने दावमिक्थौ  
 नानात्वार्थी ऽथ यत्र षडहो भवति साप्तमिक्थौ तत्र  
 ककुभं करोत्यसञ्चाराय तत्र खलु पदस्तोभान्  
 करोति चतुरोऽयं वीरानुपकृतस्त एते चरधारः समान-  
 यानयः समानार्थेयाः पुत्रामधेया गणनामधेया गण्डेडा  
 गणनिधना अपि वा चातुर्विध्यादेव क्रियेरुस्तांस्तु  
 यदेवं प्रयुङ्क्त एव मिहातो रोहोऽपि चैवं दाशरात्रिको  
 ऽवसानो भवतीति तान् खल्वन्यान् करोत्यत्रैषां खं  
 कन्द इति तान् कुशलं यन्निन्यासु धर्ता दिव इत्यु-  
 त्तम एतासु खयोनि रंथाणेता भन्तलक्षणेः सम्पन्ना  
 इति व्याख्याता अर्काक्षिषां तदेवानुपूयं यत् त्रिरात्रे  
 गौषूक्तं प्रायश्चित्तिसाम पदस्तोभवाध मर्कं द्विपदाख-  
 नुगृह्णाति तेन प्रच्युतं वारवन्तीय मुष्णिङ्घ्नन्तसाम



माप्रच्योष्टेति विपरिहरत्यानुष्टुभे अजाम्यथ एतेनैवो-  
 त्तरे व्याख्याता उद्धरति पदस्तोभान्न ह्येते चतुरो  
 वीरानुपकृतास्तत्र कुशलं यन्नित्यादिपदस्तोभपाया-  
 ङ्कः खः स्थानः समापद्यते तंस्थानुसमापत्तिः  
 शुध्यवारवन्तीये समापद्येते अतो यो द्रव्यविकारः  
 स्तोभकारितः स भवति ॥ ६ ॥

अथ खत्वाह वसिष्ठस्य जनिचे भवत इति कस्येदं  
 ब्राह्मणं ह्यादिति बृहद्रथन्तरयो रविप्रयोगस्येत्याहु-  
 रिति विश्वोवक्षीयसी साजनिचे भवत इत्यपि वा  
 त्थन्तरस्यैव द्विर्योगस्यैतद्धि वासिष्ठ मित्यपि वा रथं-  
 न्तरस्य हवतस्य वासिष्ठस्यैते वासिष्ठे भवत इति  
 जनिचे एवानुकल्पयेदिति कौत्सो जनिचे भवत  
 इति सति किं मन्यः दनुकल्पनात् त्वेवानुकल्पयेन्न  
 ह्येते आनवकाश्यान्ननुकल्पयन्तीत्येतेषां त्वेव विचा-  
 राणां मेकस्यैतद् ब्राह्मणं ह्यादं कस्मिन्मता मिवाह्नां  
 दिदर्शयिष्यन्तमं भागस्तोमान् करोत्येते प्राप्त-  
 स्थाना इति पञ्चरात्रस्य चतुरात्रिणैव पृष्ठवादी  
 व्याख्यातस्ते खलु खासुं करोति न ह्ययं चतुरो  
 वीरानुकृताः स्यापि जानाभागश्चतुरात्रो ऽथेह समाप्त-  
 भागे चतुर्थपञ्चमे इति कारनि तन्वाणीति पञ्चाह-

तन्वाणीति गौतमस्तत्रतूराचैशैवं वराखातं चत्वा-  
 र्याहीनिकान्येक मैकाहिक मिति धानञ्जय्यसत्ते-  
 नैव वराखातं मग्निष्टोमः प्रथमं महं सकथानि मध्ये  
 दशरात्रन्यायेन यत्र संस्थाभिप्रयुज्यत एषा ऽभिप्रयु-  
 ज्यत उद्धारति षोडशिनं चतुर्थादिगजा मग्वापायं  
 खराजोपेयुः स्तोमस्य वा लोभादथाप्येन सतिराचे  
 करिष्यन् भवति तन्नं समवैविचारयिषीदुद्धारत्या-  
 तीषादीय धर्मिणि तत्परा षडहे धर्मिः भवति तत्र  
 याथान्तर्थात् क्रोशं प्रत्याहरत्यपि वा शुद्ध्यं  
 प्रच्युत मिहानुपहृणाति तद् भवत्यूड्डं वाहते  
 ऽहनीति स्तोमकारितं आवाप एतेनैवोत्तरे वरा-  
 खातः स्तोमकारित उद्धारः सप्तदशं षोडशिनं  
 करोति यो वा छद्मः स्तोमः स षोडशिनो न्यायेन यो  
 वाङ्गि भक्तिरेव मुत्पन्नो हि भवत्यथाप्यनादिष्टव्यूहेन  
 भवत्यथा कथं महानाहो राचेरितीति ऋसीया-  
 नित्यहः स्तोमं स्ते त मनु यन्तं पश्यामी ऽथाप्याह सप्त-  
 दशं स्तोमानातिबन्ती व्रतांभिः मुत्तरं मुपकृतः स  
 खल्वेकाहा कृष्णास्ते वराखाताः ॥ १० ॥

चतुष्षडहे कथं रात्रिरित्यकर्त्तव्येति शौचिवृत्ति-  
 रेव मुत्पन्ना हि भवत्यथाप्यनादिष्टा व्यूहेन भव-

त्यथापि कथ महीनाङ्गो रात्रेरुपायो ऽभविष्यदित्य-  
 थापि कृत्स्नतायै वै नूनं मिह रात्रिः क्रियेत कृत्स्नो-  
 ऽयं षडह इत्यथापेयं चतुर्थो भागो रात्रेः कल्पे तत्  
 कृत्स्नो ऽयं षडह इत्यथापेयं चतुर्थो भागो रात्रेः प्रत्य-  
 क्षिता मत्यक्रमिष्यदिति कर्त्तव्येति गौतम आदिष्टा-  
 कल्पेन भवत्यथापेयं षडह इति नान्यथापेयं ऽहीनन्त्यायः  
 सर्वे ते रात्रिमतो ऽथाप्यरात्रिकं व्रतं तस्यान्ते निपा-  
 ताद्वात्रि सुपधीयमानां पश्यामी यथा सप्तरात्रेष्व-  
 थापि यः पृष्ठावलम्बनस्य षड्विंशत्तदनादेशाद्वात्रि  
 मुपनयेदथाप्यायाद्वात्यपायाच्च इतोमप्रत्यवरोहो ऽपि  
 सोऽथागमाद्वात्रिं प्रत्येतु महतीति यदेतदेव मुत्पन्न  
 इत्यनन्तं वै तत्र भवत्यन्तदर्शना रत्रिरिति यदेतद-  
 नादिष्टव्यहेनेति नित्यत्वान् नूनं मेनानादिशतीति  
 यदेतत् कथ महीनाङ्ग इति कथं वा अप्रतिरात्रिको  
 ऽभविष्यदिति पश्यामश्वाहीनिकेभ्यस्त्वेभ्यो रात्रे-  
 रुपायं यथा त्रिरात्रेषु यदेतत् कृत्स्नो ऽयं षडह  
 इति कृत्स्नो वै षडहो रात्रा तु कृत्स्नतरो भवि-  
 ष्यतीति यदेतदत्यक्रमिष्यदित्यग्रह एवाभिक्रान्तो  
 भवत्यतिक्तामन्तं च पश्यामी यथाप्तोर्यामि गौरीविता-

पायान् पृथक् स्वाराणि स्त्रोत्राणि करोति नाना  
साधुरहीन इति स यदेतान्येतानि रूपसम्भ्राना-  
नीति ॥ ११ ॥

आयुष्कामयज्ञ उत्तरस्तत्र व्यहौ समस्य निद-  
ध्यात्यहोनत्रहं चैकाहत्रहञ्च कस्य हेतो रिति  
त्रयः प्राणोपानुव्राना इत्यग्निष्टोमसंस्थं ज्योतिष  
मेषास्य प्राकृती संस्था ऽभाष्येतया संस्थया त्र-  
त्यथा ऽपि नानात्ययांविमौ त्राहौ तानुपक्रमसंस्थया  
प्राचिक्रमिप्रोदषोडशिका रात्रिः स्तोमज्ञाचेणा-  
षोडशिको ह्येवायुर्भवतीति द्वितीयस्याहो वासिष्ठः  
माध्यन्दिनान्त्यं स्यादिति शण्डिल्यः षष्ठार्थनेद-  
पुरा प्रच्यवते नेह षष्ठार्थ इति पार्थ सेवेति गौतम  
एतत् समूहसामं समूटावच्छेदोऽयं भवतीति तृती-  
यस्यानुष्टुभि बृहत् करोति त्राहे समं बृहद्रथन्तरे  
ययुक्षमाणी जाभ्यर्थं चैव न्यात् पृष्ठं ग्रावलम्ब उत्तरस्तस्य  
पञ्चाहो बृहद्रथन्तरपृष्ठ एव विश्वजिति हि पृष्ठानि  
करिष्यन् भवत्युदरति षोडशिनं चतुर्थीत् तत् पञ्च-  
रात्रेणैव व्याख्यातं त्रयस्त्रिंशानि पञ्चमस्याहं उक्-  
थानि रात्रिकारितो हि स्तोमप्रत्यवरोहस्तान् विश्व-  
जिति करिष्यन् भवति भवति ॥ १२ ॥

अथमतः सप्तरात्रास्तत्र पृष्ठं वृतं सप्तमं करोत्ये-  
 तद्वृतं पृष्ठं भवत्यथाप्यनङ्गं मेतद् वृतस्य यदुक्त्यानि  
 तत्र ज्योतिष्टोमानि स्वस्तोमान्याहरति षोडश-  
 मती रात्रि रंहीनन्यार्थेनाथाप्यनङ्गं मेतद् वृतस्य  
 यदात्रिस्तत्र यैव कृत्स्नतमा रात्रिस्तमा हरतीति  
 सप्तदश मन्तरस्य वृतं स्तोमकारित उद्धार स्तस्य  
 स्तोमान्वयीक्षुक्थानीति क्रिं स्तोमानि स्युरित्येक-  
 विंशस्तोमानीति गौतम एष एषां प्रकृतिस्तोमो (न)  
 भवति त मन्वियुरित्येतत् स्यात् सप्तदशस्तोमानीति  
 धानञ्चय्य एषेऽस्य वृतस्य स्तोमो भवति त मन्वियु-  
 रित्येतत् स्यात् पञ्चविंशस्तोमानीति शौचिवृद्धिरेष  
 वृतस्य प्रकृतिस्तोमो भवति त मन्वियु रित्येतत् स्या-  
 दथाप्येवं तासां स्तोत्रीयाणा मनुग्रही भवति याः  
 पञ्चविंशाद् वृतात् सप्तदशे क्रियमाणे ऽपयन्ति  
 द्विपञ्चस्तोत्रीयेनानुगृह्येते ते चिद्रनुजिघृक्षेत् त्रिणवं  
 प्रथमं मूक्यं कुर्यादिकं विंशं षोडशिनं करोत्येषी  
 ऽस्य प्रकृतिस्तोमो भवत्यथाप्येवं तासां स्तोत्रीयाणां  
 मनुग्रही भवति यथैतच्छौचिवृद्धिरिति कृन्दासपव-  
 मान मुत्तरस्य वृतं स्तोमकारित आवापोऽथ खल्वत्र  
 विधर्मिकरिष्यंस्तोमज्ञाचेण कञ्चाद्धर्मं करोतीति

इन्द्रयोः समन्तोर्थाथान्तर्यात् पूर्व मादन्ते ऽथाषोतस्या-  
 विकृतं निधनं भवत्यविकारः पूर्वी ऽविकारादित्येक-  
 विंशान्युक्त्या न्येकविंशस्तोमं षोडशिनं करोति  
 तद् व्याख्यातं प्रथमे सप्तरात्रे ऽभ्यास उक्त उत्तरस्य  
 पञ्चाहो बृहद्रथन्तरपृष्ठचतुर्थस्याह एकविंशः षोडशी  
 पञ्चमस्याहः पार्थस्य लोक आकूपारं वाचेयं वेति  
 विचारयन्ति नानापुरुषकल्पीत्याता मिति ह आह  
 धानञ्जय्यो ऽन्य एवाकूपार भरोचैयिष्यतांन्य आचेय  
 माचेयं कैवाभिरूपतरं पञ्चमे ऽहनि स्थानसम्पत्तं  
 पञ्चमस्थाना अत्रय इति चतुर्थस्याहः शुद्धाणुदीयस्य  
 लोक आकूपारं पञ्चमस्याहः पार्थस्याचेयं पार्थं चैव  
 नित्य महः पार्थं व्याख्यात माचेयं नु खलु कुर्वतं  
 उभयोरनुग्रहो भवति वृते हि पार्थं करिष्यन् भवति  
 चतुर्विंशं बहिष्यवमानं सप्तदशस्तोमं वृतं करोति  
 तत्र त एवोक्त्यानां स्तोमं विचारयेत् सप्तदश  
 वृते ॥ १३ ॥

॥ इति निदानसूत्रे अष्टमः प्रपाठकः ॥

॥ अथ नवमः प्रपाठकः ॥

प्रतिष्ठाकामयज्ञ उत्तरः स खल्वेकाहस्ते व्या-  
 खाता जनकसगरात् चत्वार्याहीनिकान्यहोन्या-  
 हीनिकतन्वाख्यनन्त्वा दुहति षोडशिनं चतुर्था-  
 त्तद् व्याखातां व्याखाता अर्कास्तेषां तदेवानुपूय्यं  
 यत् तिरात्रे धर्त्ता दिव इत्युत्तम एतासु खयोनि-  
 द्वितीयस्याङ्गः सौभर मुकधानां ब्रह्मसाम कुर्यादिति  
 धानञ्जय्यस्यैककुम् ॥ हि चतुर्थे करिष्यन् भवत्यौपगव  
 मेवेति गौतमोऽतिरात्रे सौभरं करिष्यन् भवत्येव  
 सुभयो रनुग्रह इति षोडशिमती रात्रि रहीन-  
 न्यायेनावैव चतुष्टोमः षोडशिमानिति शौचि-  
 वृत्तिः शम्बूपतो नात् च नेति राणायनीपुत्रः पृष्ठाः  
 स्तोम उत्तरस्य षडहो बृहद्रथन्तरपृष्ठ एव विश्वजिति  
 हि पृष्ठानि करिष्यन् भवति चतुर्थस्याङ्गः प्रत्यस्यै  
 पिपीषत इति गौरीवित् षोडशिसाम विराजा  
 मन्वपायुः स्वराजोपेयः पृष्ठापायाद्रेत्यौपयन्ति तवै-  
 तद्दार्ढ्युत्तमेतद्गायत्रीसामेहकारवत् षण्णिधनं यथा  
 रेवत्यो विपरिहरे दौक्ष्णोरन्ध्रे इति गौतम एव  
 मिडारम्भयोर्बृहतीति न विपरिहरे दिति धानं-  
 ज्योऽपि ह्येव मजामि स किमर्थो नित्यं कल्पं

व्याक्येदित्यष्टरात्रस्थाषोडशिकां रात्रिञ्चातुष्टोमन्या-  
येनाथापि कृतः षडहे षोडशीतप्रायुष्कामयज्ञ उत्तरः  
स यन्नवरात्रो नव प्राणा इति त्रिकद्रुकानुपदधाति  
कुन्दोमसादृश्यादर्थाप्येत जनस्य पूरयितारो षोड-  
शिका रात्रिः स्तोमज्ञानेणाषोडशिको ह्येवायुर्भव-  
तीति पशुकामयज्ञ उत्तरसूत्र पञ्चार्हं करोति  
पाङ्गाः पशव इति यदु विश्वजितं पशुकानि पृष्ठा-  
नीति त्रिकद्रुकानुपदधाति कुन्दोमसादृश्यादर्थाप्येत  
जनस्य पूरयितारस्तान् परस्मात् पञ्चाहस्य करोति  
विश्वजितं हि रात्रुपायाय कश्चिन् भक्त्यायुषोः  
ऽनुष्टुभिं बृहत्करोति चरहे समं बृहद्रथन्तरे युयुत्स-  
माणो ऽजाम्यथ वैव स्याद्वाकजम् विति विचारय-  
त्यथापि नैताः स्वतन्त्राः स्तोमविधां बृहदा-  
पद्यते तत्राकूपारः त्वसमाप्तये तदेतन्नवमाहा-  
गान्वितम् ॥ १ ॥

अथैष दशरात्रो बृहद्रथन्तरपृष्ठं एव तत्र खलु  
विश्वजितं दशमं करोति स खलु विश्वजित् क्रिय-  
माणो दशमतन्त्रं प्रत्यहति तत् प्रत्यह्यमानं पूर्वं  
तन्त्रे प्रत्यह्यत्यत्र यदेवैकं पुरा सप्तमे कृतं तन्त्रं भवति  
तत्प्रच्यवते ऽथैते षष्ठ-नवमयोस्तन्त्रे व्यत्यस्यति षोड-



शाहिकैरयं स्तोमैरभि विधीयते स त्रयस्त्रिंशत्  
 स्वतन्त्र मञ्चिकीर्षीत् तख्येतरस्थानं परीतं भवत्यत्र  
 खख्यं सर्षी दशरात्रो नानातन्त्रो भवति समूहति  
 बार्हद्रथन्तरपृष्ठान्गित्याभिरनित्ये ह मात्राया मक-  
 रिष्यदनित्यो ह्ययं दशरात्र इति नित्यामु चतुर्थ-  
 पञ्चमयोर्जगत्थो शाश्वतुर्थे नित्याः सप्तमे ऽहनि ताः  
 करिष्यन् भवत्यतो नित्याः करोति तद्वगेन पञ्चमे  
 कुशलं षडनित्यास्त्रिषट्भो नित्यानित्या एवा-  
 चिकीर्षी दित्यपरं नित्ये ह तन्त्रे अनित्यो स्तोमी  
 यत्र नित्यानित्या अभिरूपां यदं पृष्ठ उभयीरनित्या  
 उभयं ह्येव तन्त्रानित्यं स्तोमश्चैव तन्त्रञ्च नित्यास्तु  
 परयोरङ्गोर्नित्याभिर्ह्येतस्य द्वाहस्य समूहो नित्योऽस्तु  
 नवमे ऽन्तर्विधां हि दशमिक्यो विश्वजित्यन्तर्विधाः  
 करिष्यन् भवति तत्र कुशलं यज्ज्योतिष्टोम्यो करोति  
 तन्त्रान्विते च पृष्ठान्विते चार्थं खलु दीर्घतमसोर्कं  
 सष्टमे ऽहनि करिष्यन् भवत्यन्तसामान्त इति  
 तन्त्रस्यः स्वभिरार्मिकः सप्तमे त्रयः एवैको ऽग्नेरकं-  
 स्तन्त्रापेतस्तद्भवम भहर्हरति ॥ ६ ॥

अथ द्रव्यसमुद्देशो यानि यथास्थानं व्याख्या-  
 तानि तानि यान्ययथास्थानं तैरेवाष्टभिः पर्यायै-

स्तेषु मन्वयुः समन्वीचेत नाना ब्रह्मसामानि नाना-  
 त्वार्थः श्वेतनौधसवर्णानि बाह्वद्रथन्तरपृष्ठान् नाना-  
 ऽग्निष्टोमसामानि नानात्वार्थ एडानि भूयिष्ठानि  
 करोति सामान्तर्ह्यस्थानं तत्सामान्तं मथाप्येष तृतीयः  
 सवन्नसामान्तस्त मदिदर्शयिषीद्वानाच्छन्दस्वेव भूयो  
 नानात्व मिति तानीमानि भवन्ति सप्तच्छन्दाः सि  
 नवाहं नानु भवन्ति तत्रः ककुभं च विराजञ्चीप-  
 प्रयुक्ते सा प्राय्यांत्तानि कुशलं यद्दीहिणः प्रयुक्ते ऽग्न  
 आयुः पि. पवस इति प्रथमे ऽहनि करोति कस्य हेतोः  
 रिति शिशुः संद्याज्ञोऽयं भवति सैषान्नेयी पवितां  
 ऽभिध्याहारा शुद्धार्थेऽभिहूपा ऽथपि शश्वदिह्मिनिः  
 ष्टुतं तैत्तिरीया अधीयते सैषाग्निष्टुदनुयंहाय स्वात्  
 स्वादिष्टा माभवीया मेषा स्वादुमती पठिताभिध्या-  
 हारां शुद्धार्थे ऽभिहूपायापैकाहिनी भवत्यथ स्वस्व  
 पौष्कलं भवति शुद्धांस्वैतद्भवति यत् पुष्कल मित्यर्था-  
 पैकाहिक मेवाहसमांसः शश्वदिह्म तैत्तिरीया  
 अधीयते नानाः भध्ये-निधनानि न दाशराजि-  
 काणि मध्ये-निधनान्यनुभवन्त्यतच्छन्दस्वान्युपप्रयुक्ते  
 आसीमः स्वानो अद्रिभिरिति तृतीयस्य वृहती सप्तदशे  
 साध्यासां कंरिष्यं भवत्यन एतां करोत्येषा सामन्या

तृचप्रथमः तृतीयस्थानेति बभवे ऽनु स्वतवस इति  
षड्वचः षष्ठ-सप्तमयोर्विहरति सत्तानार्थी नवच  
मेतस्य प्रथमे ऽहनि तृचं कृत मुपाञ्चौ गायता नर  
इति त्रयः सप्तमस्य समूढाज्य मेतत् स्थानसम्मितं  
कन्दले उक्तस्यो रते रूपसम्पन्ने इत्येते रूपसम्पन्ने  
इति ॥ ३ ॥

अथैष कुसुम्बिन्दुसूत्रं खलु बृहद्रथन्तरे ते  
करोति राथन्तरकाहता ह्येते स्तोमा इति कानि  
तन्त्राणीति दशरात्रस्तोमत्रिकृत इत्येके द्वैपृष्ठाद् द्वे  
तन्त्रे स्थातामित्याचक्षुर्याः प्रथमाद्वितीययोरिति शौचि-  
वृद्धिरते आह्वीनिके इति तद्विदं प्रथमतन्त्रं प्रवतीभिः  
ऋषभ मपरूपं मन्यत्रोपक्रमाद् वात्यशिष्यंस्तु भवति  
तस्य स्थाने ज्योतिष्टोमं करोति प्रथमस्य प्रथमं राथ-  
न्तरस्य राथन्तरं मित्यैकाहिके इति धानञ्जय एव  
मपर्वविलाप इति तन्विदं गोस्तं च मन्तविधाभिः ऋषभ  
मपरूपं मन्यत्रान्ताङ्गार्थशिष्यंस्तु भवति तस्य स्थाने  
द्वितीयतन्त्रं करोति द्वितीयस्य द्वितीयं बाहृतस्य बाहृत  
मिति स खलु दशमे ऽहनि द्वितीयतन्त्रं मुहुरत्य तस्य  
स्थाने ज्योतिष्टोमं करोत्यैकाहतन्त्राद्वाङ्गि मुपजि-  
गमिषन्नुक्तौ द्रव्यागमः समेषु स्तोमेषूभयोस्तन्त्रयोः

पुन्रनां वृहतीं करोत्युभयोर्द्वेषां नित्येत्युष्णिक्कुभौ  
 वा अपि समाने भवतं इत्यपरं हिरात्रन्याय इवेह  
 भवति. द्वैतन्त्रेण द्वैपृष्ठयेन तत्र द्वैरात्रिका उष्णि-  
 क्कुभः करोत्यथ यत्र रात्रन्तरस्याङ्गस्तृचार्थी भवति  
 तद्यथादश्रुतुर्वीरे व्याख्यातं तथा तत्र भवति बार्ह-  
 तेष्वहस्मु यौक्ताश्व-हाविष्मते अग्निंष्टोमेषु. हावि-  
 ष्मत मौक्ष उक्थेषु मौक्ष मुकथसाभेति. विभङ्गा-  
 न्युक्थानि रात्रन्तराणि रात्रन्तरेषु बार्हतांनि बार्ह-  
 तेषु तदेवार्काणां स्थानं यद्दशरात्रिन्तयोः सचगत-  
 योर्बार्हतस्य कविमन्तं पर्यासं कसेति कालेयं मच्छ-  
 वाकसामाभिप्लवन्त्यावेनैकविंशो ऽतिरात्रो य एक-  
 म्तेमाना मुत्तमस्तस्य स्तोमांन्वयी षोडशीत्यविचार-  
 मेकविंशः ॥ ४ ॥

अथैष कन्दोमवान् बृहद्रथन्तरपृष्ठ एष तत्र  
 खलु विश्वजित् दंशम करोति सं खलु विश्वजित्  
 क्रियमाणच्छन्देमान् प्रत्यूहति ते प्रत्यूह्यमानाः षष्ठ  
 महः प्रच्यावयन्ति पृष्ठावलम्बस्य पञ्चाहः प्रथम-  
 स्याङ्गः प्रत्नवद् बहिष्पवमानं पञ्चमस्याङ्गो ऽस्यत  
 प्र.वात्रिन इत्यनुरूप इति शाण्डिल्यायन उपरिष्ठा-  
 दिसं नवचं मावन्तियिष्यन् भवति कथं मङ्कतस्या-

वत्तं न् स्वादिति नवाहयोगा इमा भवन्तीति धान-  
 च्छयः कथं मसंमापयिष्यन्नवाहं नवाहयोगाः कुर्या-  
 दिति व्याख्यातः, समूह ऋतावान् वैश्वानर मिति  
 होतुराज्यं वैश्वानरीयस्य स्थाने वैश्वानरीयं त्रैककुभे  
 उत्तरं योरेते रूपसम्पन्ने इत्युद्धरति काश्वरथन्तर-  
 मजामि हि भवति तत्रैवत् सोमसामैव मिंडारम्भणा  
 वृहतीति गौरीवितापायात् पृथक् स्वाराणि करोति  
 नाना साधुरहोने इति स यदेतान्येतानि रूपसम्पन्ना-  
 मीति प्रथममाच्येयं नमसोपच्येयै तदु वृहदद्योनि वाहते  
 ऽहनीति स्थानसंस्मृते उत्तरे इत्येते रूपसम्पन्ने  
 इति स्वाराणि नैष्टुभानि मण्ध्यन्दिनान्यान्येतानि  
 रूपसम्पन्नानौत्तरेण जागतान्यार्भान्यानीडा-  
 मक्तयो हि कुन्दोमा इति स यदेतान्येतानि राथन्तर-  
 वाहतेडानीति नवमे ऽहनि दीर्घतमसोऽर्कं मनु-  
 कल्पयन्त्येके ऽहच्छिषिण स खर्दनुष्टुभ्येतदस्य समूहे  
 वा न भवति तत्राङ्गुपरं तत्रसमाप्तयेऽथ येनानु-  
 कल्पयन्ति वृहत्यां वानुकृष्टं मन्यमानां यथा वैत-  
 दशमेऽर्कः सप्तमे ऽहनि कृतं कृत इति समापद्यन्ते  
 दशमे ऽहनि सामानि समूहवाजजिद् द्विपदास्वमु-  
 गृह्णाति संयुक्तं मृतेनाङ्गा भवतीति ॥ ५ ॥

• कथं दशमधर्मा मानस मिति कर्त्तव्या इत्येके  
तदाहर्ज्ञायत इत्यकर्त्तव्या इत्यपरं मद्दशमं च लुब्धञ्च  
दशरात्र इत्यथाप्रकृतेन विप्रवजिता मानस मध्य-  
शाययिष्यदथाप्यनुष्टुप्संयोजनास्तं जागत मिदं  
स्थानं भवत्यथापि सत्रोत्पादास्ते ऽहीमोऽयं भवतीत्य-  
भिचर्यमाणयज्ञ उत्तरः स खल्वैकारहकृत्स्ते व्याख्या-  
तास्तस्य सवनभाजस्तीमाः समावह्नाजो वेरित त्रिजा-  
रयन्त्येव ऽ सवनंस्तीमाः समं प्रियुक्ता भविष्यन्ती-  
त्युक्थ्यसंस्थं ज्योतिषं वृहत्पृष्ठं बार्हतं तच्च द्विती-  
यं ऽ हि स्थानं मापन्नं मिति तन्न यो द्रव्यविकारं  
उक्थ्यंत्वाच्च वृहत्पृष्ठत्वाच्च स भवत्यपि च समन्तं  
समन्तीकारायाथात एकादशरात्रे दशरात्रान्तां  
अहीना द्वादशरात्रप्रभृतीनि सन्नाणि किं मेकं स्थान  
मन्तरीया मिति वैकादशरात्रं करोति पृष्ठाव-  
लम्बस्य पञ्चाहः पृष्ठाश्लोमस्य षष्ठं महरिति पयसां  
षष्ठं मह रभ्या राजति स्व \* \* \* \* \* पयोधापोऽव द्वे  
वृहत्थौ स्वरावृत्तौ वृहती † पुनः कण्वरयन्तरे स्व  
लोक मित्यजाम्यर्थं व्याख्याताच्छन्दीमा दशमस्य  
स्थाने त्रतुष्टोमं करोति कस्य हेतोरिति कन्दोमस्य

\* 'स्वरादुक्त'—इति ख ।

† 'वृहतीति'—इति ख ।

ममेत्यग्निष्टोमं ह्यार्यग्निष्टोमं स उ क्कन्दो रथ-  
न्तरपृष्ठा ज्योतिष्टोमंततो यथा दशम महर्हरति ॥ ६ ॥

कथं दशमधर्मा मानसक्कन्दोमस्य क्कन्दोमवत्य-  
ग्निष्टोमस्यात्यग्निष्टोमं स उत्तररथन्तरपृष्ठा ज्योति-  
ष्टोमः कथं दशमधर्मा मानसं मित्यकर्त्तव्या इत्येके  
स्वेन-नरमधेयेनैकाह आशिष्यते चतुष्टोमो ऽग्निष्टोम  
इत्यथापि न दशमिकं लिङ्गं दृश्यते यद्यैतद् बहि-  
ष्यवमानस्त्वावृत्तिः साम्नां विप्रच्यावन मनुष्टुभः  
पृष्ठीक्षीविकीर्षिति कर्त्तव्या पूत्याचार्या ये ऽन्ये मानस-  
संयुक्तेभ्यः संस्थापनीयं मानसं चतुष्टोमो ऽग्निष्टोम  
इत्यथाप्यकृतेन विशृजिता मानस मध्यगाययिष्यद्-  
थापि सतोत्पादं नाहीनकृतावचिकीर्षीद् दृश्यते  
तद्दशम मृते मानसात् तथा मानस मृते दशमान्न  
चैतद्दशमस्य यथावाखात्तं दशमसंयोगास्तु कर्त्तव्या  
एष आचार्यसमयो ऽथापि तन्त्र महर्त्तानि बलिष्ठं  
ब्रूवत उच्चा-स्वादिष्टे दशमिकी दृश्यते अथापि  
स्थानेन भागागमेन तन्त्रोपधिना क्कन्दोम्येनेति स  
चैव चतुर्विंशो दशमिकोऽन्ते दृश्यते यद्यैतत् स्वेन  
नामधेयेनैकाह आदिष्यत इति बहुधैकाहाः स्वेन  
नामधेयेनादिष्यन्ते यद्येष एवाश्वत्थिरात्रे ऽभिप्लवे च

त्रिकुट्टिका इत्यथैनां नाहीनिकंतं तान् ब्रूमहे यथा  
 एतन्म द्वाशमिकं लिङ्गं दृश्यतं इति ब्रूमो येषाञ्चा-  
 खांतं संस्थानं तु सामवृहत्स्य समूहो दशरात्रो  
 दृश्यते च बहिष्पर्वमानस्य नावृत्तिरन्यासु चानुष्टुप्  
 दशमतञ्च यथा त्रिककुम्भः ॥ ७ ॥

तत् किम्प्रभृतयोऽहीना इत्युक्त्यप्रभृतय इति  
 बह्वृवात्सिद्धो मुहूर्त्तमात्रा अभिष्टोमे स्तनशस्त्रैर्नाभि-  
 धीयन्ते ता अद्यापि विधीयत इति शश्वदङ्ग षोडश-  
 प्रभृतय एव भवन्त्येष चतुर्थी भागः प्रथमं स्थानं  
 लभते सर्वे भागा आप्यन्ते सर्वे भक्षायः स पुराहीनो  
 भवति सोऽद्याहीन इति शश्वदङ्गातिरात्रप्रभृतय  
 एव भवन्ति सर्व मादित्यचरित मग्नि विधीयत उर्ध्वी  
 वर्गी कृतश्रुतिरेवात ऊर्ध्वं शश्वदङ्ग द्विरात्रप्रभृतय एव  
 भवन्ति द्वे पृष्ठे चर्या लभते इयान्यहानि राधेन्तर-  
 बार्हतानोति तदिदं बृहदतिरात्रे स्थानं तदद्य स्थानं  
 लभत इति शश्वदङ्ग त्रिरात्रप्रभृतय एव भवन्त्येव  
 महर्भाजोऽहस्सवनभागाः स्वस्थानातिरात्रा वनुष्टु-  
 त्ति शश्वदङ्ग चतुरात्रप्रभृतय एव भवन्त्येष चतुर्थी  
 भग्नोऽहर्भजते यथा पूर्वे भागा इति शश्वदङ्ग  
 पञ्चरात्रप्रभृतय एव भवन्ति शुध्यन्ते हेतश्चतुर्थ महः



पञ्चमे ऽहनि रात्रिः सज्जत इति वा शश्वदङ्ग षड्-  
 रात्रप्रभृतय एव भवन्त्यत्रैष चतुर्थी भागो भूयिष्ठभाग  
 भवति शश्वदङ्ग सप्तरात्रप्रभृतय एव भवन्त्यासप्तान्  
 नानात्वानि वर्त्तन्ते भाना साधुरहीन इति शश्वदङ्-  
 गाष्टरात्रप्रभृतय एवं भवन्ति शुध्यत्यु हैतत् सप्तम  
 महारष्टमे ऽहनि रात्रिः सज्जत इति शश्वदङ्ग नव-  
 रात्रप्रभृतय एव भवन्त्यष्टरात्रे पुनरभ्युदृतेषु भागेषु  
 जगत्यस्थानो भवति साद्यस्थानं लभत इति शश्वदङ्ग  
 दशरात्रप्रभृतय एव भवन्त्यालदिपराद्धा महर्नानात्वं  
 यद्दशमं नानासाधुरहीन इति शश्वदङ्गेकादश-  
 रात्रप्रभृतय एवं भवन्ति शुध्यत्यु हैतद् दशमं सह  
 रेकादशे ऽहनि रात्रिः सज्जत इति ॥ ८ ॥

अथायं द्वादशाहोऽहीनो भवती३ सत्र मित्य-  
 हीनो भवतीत्याहुरेको दीक्षेति भवत्यथाप्राहीनि-  
 कान्यहानीत्याचक्षते दशरात्रिकं कण्यहान्यथाप्राह  
 यज्ञौरीवितेनाहीनानि शश्वदङ्ग त्रिरात्रप्रभृतय एव  
 भवन्त्येव महर्भाजो ऽहःसर्वभागोऽस्थानां रात्राव-  
 नुष्टुविति शश्वदङ्ग चतूरात्रप्रभृतय एव भवन्त्या-  
 थाप्राह यजमान मेवैतया तद्दयन्तीत्यथापि वैहूपे  
 वर्दति यजमानं वा अनु प्रतितिष्ठन्त म्ज्ञाता प्रति-

तिष्ठतीत्यथाप्यस्मिन् दक्षिणाप्रवरंदोः भवति ध्वस्ते वै  
 पुरुषन्ती तरन्तपुरुषमीढाभ्यां वैदर्शिवभ्याः सहस्रा-  
 रथादित्सता मिति दक्षिणावन्तो ऽहीना इत्यथामि  
 शश्वदनेनाध्वर्यवो याजमानं परिचक्षते यथाहीने-  
 नेति सत्रमित्यपरमुंभयतो ऽतिरात्रो भवत्यन्यतरतो  
 ऽतिरात्रो अहीनाः समाहितप्रायणीयोदयनीयो  
 भवति व्याहितप्रायणीयोदयनीया अहीना अथा-  
 प्यन्वहं गौरीवितो भवति नानोस्वरं अहीना अथा-  
 प्रास्मिन्त्सत्रवादहूपो भवति यो वै देवानां गृहः  
 पतिं वेद सत्रं गृहपतिर्भवति भारद्वाजायना वै सत्रं  
 मासत स्तोमो युज्यते सचियेभ्यो ऽहंभ्यः प्रतिष्ठायेव  
 सत्रं मासते ऽङ्गिरसो वै सत्रं मासत गौपायनानां  
 वै सत्रं मासीकानां यतः सत्रादुदंस्थातां स्थितां  
 दित्युभयं भवतीति लामिकायनं उभयथा ब्राह्मणं  
 भवत्युभयथेष्टं वेदयत उभयेषां मयं प्रत्ययं स्तदो-  
 ऽस्मिन्नहीनवादाः प्रत्ययत्वात्ते भवन्ति सचन्तु भवति  
 सत्रकारिऽस्य भवन्ति नैषाहीनेन सत्रं मित्यपरं यत्त-  
 दप्येव मिव ब्राह्मणं भवत्यन्यच्चै वै कामाय सत्रं  
 सन्यच्चै यज्ञो न तत् सत्रेणाप्नोति यत्कैकं यज्ञो न  
 तद्यज्ञेनाप्नोति यत्कैकं सूत्रमिति तद्यथाश्वत्यलो

वृक्षो नैवाश्रयत्य इति वृक्षनायनो अनश्रयत्य इति त्रयो-  
 ऽहीना इति धानेऽन्नस्य एकाहः हीनोऽहीनाहीनः सत्रा-  
 हीन इत्ययं ज्योतिष्टोमो ऽतिरात्रः षोडशमाने  
 काहाहीनोऽत्र हि न किञ्चनैकाहिकं कर्म हीयत इति  
 द्वादशाहो ऽहीनोऽत्र हि न किञ्चनाहीनिक मह-  
 र्हीयत इति अत्रामयन् सत्र महीनो ऽत्र हि न  
 किञ्चनं सात्रिकं महर्हीयत इति तदिदं कुशलो  
 भृतयस्तस्याहीना इति तदपि शश्वद् ब्राह्मणं भवद्  
 द्विष्ट मिति शाण्डिल्यायनो यस्य स्याद्हीन इति  
 यस्य तु स्याद्दहवस्येयेति द्विरात्रप्रभृतयस्तस्याहीना  
 इति तदपि शश्वद् ब्राह्मणं भवति प्रजाप्रतिर्यञ्जकतून-  
 सृजताग्निष्टोम मुक्य्य षोडशिन मतिरात्रं य एतै-  
 द्विरात्रप्रभृतयोऽहगणा ब्रुवन् तस्मात्त्रापि महासौ-  
 रिति तस्मादेवं तं ऽहीना इत्यहीना इति ॥ ६ ॥

अथातः सत्राणि तेषां द्वादशाहः प्रथमस्तस्मिन्नु-  
 पकृतानि तत्र द्वे उपस्थाने अन्तरिणाविरात्रौ  
 त्रं दर्शरात्रञ्च यत्रैकेमाह्वार्यी भवति तत्र माहरेत्ये-  
 तदेकार्थं दृष्ट मिति तस्य तदेव स्थानं यत्संवत्सरे  
 द्वादशे गोत्रापुषी तयोस्तदेवं स्थानं यत् संवत्सरे  
 चाहार्थं त्रिकद्वकां अतुरहार्थं क्रतुचतुर्थान् पञ्चाहार्थं

ऽभिप्रवपञ्चाह् षडहार्थे ऽभिपत्रंः सुम्भवत एतेन  
न्यायेनेष \* एकोत्तरकल्पः क्रमत आ चत्वारिंश-  
द्रात्रा दुषचीयमानेष्वहस्तु रोहेणीपचयः प्रवर्त्तत  
एत् ऽ रात्रिसत्रन्वाय इत्याचक्षते यदेवापवदति तद्  
व्याख्यायाम स्तत्रास्त्रिं ऽ लयोद्देशरात्रे कथं व्यूह-  
समूहाविति समूहः स्यादित्येके समूहो ह्येन ऽ सर्व-  
स्त्रीमो ऽन्ववैतीति व्यूहः स्यादिति गौतमो ऽनादिष्टः  
कल्पेन समूहो ऽथापि कन्दोयोगपूर्वणि भागसमाप्तौ  
चापधीयते ऽथापि कृत्स्नो ऽयं दशरात्र इति व्यूहः  
सर्वेन ऽ सन्त ऽ समूहः सर्वस्तेऽमो ऽन्ववैतीत्यथापि  
नादेच्यत्सामसाम गौरीवत चादेच्यत्कथं दशमं-  
धर्मा मानस मित्यकर्त्तव्या इत्येके दशमं च लुअश्च  
दशरात्र इति कर्त्तव्या इति गौतमो ऽनाकृतेन वृतेन  
मानस मप्रविश्याज्यते ऽथापि वाचो दशक्रमः मन  
उपकृतं कृत्स्नोऽयं दशरात्र इति चतुर्दशरात्रे पृष्ठा  
रूढावृत्तं कराति सैषा मध्यावृत्तिर्यत्राति रात्रात् पृष्ठा  
मुपयन्ति प्रथमस्याहो ऽस्य प्रत्ना भेनुत्स्य इत्यजाभ्यर्षी  
ऽथ खल्वत्र त्रयस्त्रिंशे अहनी सन्निपततः केनाजा-  
भौत्यह एष सामान्यादपि वा कखरथन्तर मनु-

\* "अभिप्रवन्वीनेष" - इति ख ।

कल्पयेत्. पूर्वस्थाङ्ग आसंवं उत्तरस्थ. वा. मध्यन्दिने  
 पृष्ठा. उत्तरस्थं विषुवत्स्थानीयो वृतं पञ्चदश-  
 रात्रस्थ पृष्ठा. एवात्तरस्थ तत्राग्निष्टुतं मुषं दधाति  
 क्षत्रप्राये ब्रह्मस्थानवच्चिकीर्षुस्तथाग्निः प्रत्नेन  
 जन्ममेति होतुराज्यं मजाम्यर्थं व्याख्याता अन्यतो  
 ऽतिराताः ॥ १० ॥

न्यायकृत्त मा सप्तदशरात्रात् सप्तदशरात्रं ऽभिपूव-  
 पञ्चाहः संप्रवेति ते खलु स्वतन्वा एव त्रिकटुकाः  
 सूरित्येके यावत् षट्त्तन्नेयुः षडेव सन्तस्तन्वाण्या-  
 पादयेयुः स्त्रियापादयितव्यस्तन्वाणि मन्यत इति  
 गौतमी ऽहर्गणप्रत्यवायो ह्येवंमभविष्यत् त्रहाद् द्वाह  
 मेव मिव ब्राह्मणं भवत्यनन्ता वा एता यत्पञ्चाहविधा  
 इत्यन्ताहर्ह्यैतः षष्ठं मुपैतीति स वै पञ्चाहतं एवा-  
 भविष्यन्न षष्ठात् किञ्चित्पत्याहरिष्यदिति. प्रत्याहरे-  
 दिति. गौतम एव मिव ब्राह्मणं भवति पञ्चम ऽहनि  
 षष्ठस्थाङ्गस्तृतीयसर्वं प्रत्याहरति षडहाविलोपाय  
 सं त्वेवं स्तोमो र्यः पञ्चमस्य सा सत्स्थं रथन्तर-  
 वृहत्पृष्ठाः पञ्चमस्थाङ्ग एष प्रत्नानुरूपं इत्यजाम्यर्थी  
 व्यावृत्तये पृष्ठाभिपूवयोः श्यैतनौधसब्रह्मसामा पौ-  
 ष्कलश्रद्धीष्णिहाभीवर्त्तसुज्ञानयो रन्वपायस्वामु

श्यैतन्नौधसे, अभीवर्त्तकारिता हि प्रगाथां इत्ये-  
तेनैवोत्तरे व्याख्याताः षाष्टिकानि पञ्चमस्थाङ्ग  
उक्थानि तत् कुशल मुद्धरति गूढं द्विपदा अनन्तेना-  
चिकीर्षीत् तत्रैतदध्याह नवमादन्तान्वितं तदा  
देतासु यजिष्ठं त्वा ववृसंह इत्येता आपन्नाः पञ्चम  
सहर्भवन्तीति सौश्रवसं मासुत धेति विचारयन्ति  
वैभक्तं सौश्रवसं पाञ्चमिकं मासुत मथ यत्र  
भिप्लवयो रात्रिसन्नेषु कथं कल्पविचारितानीत्य-  
कर्त्तव्यानीति शौचिवृद्धिर्भान्यत्र संवत्सरानुसंवत्सर-  
सम्भितासु च नेतिकर्त्तव्यानीति गौतमी यावन्ति  
यावन्त्यभ्यश्रुवीरन्ति विहितान्यप्रतिषिद्धान्यथाप्येव  
माप्तिरग संवत्सरखेति विंशतिरात्रे इत्यर्थे सति  
विशुजिदभिजितौ करोति कथं हेतोरिति सम्पूर्णां  
विरुजं सत् सुपकृतं भावेतौ वैरोजौ वा पञ्चसूक्तैः  
स्तोमैः पृष्ठैरिति यद्देवैव पृष्ठमातौ तौ पृष्ठादनन्त-  
रिताविति ॥ १६ ॥

पूर्वस्मिन्नेकविंशतिरात्रे तृतीयेऽभिप्लव आवृत्तो  
भवतीः अनावृत्त इत्यनावृत्त इति शौचिवृद्धिर्न  
ह्यावृत्तिर्मिन्नायते ऽथापि कथं सप्ताहो विषुवान्स्था-  
दित्यावृत्त इति गौतमी रोहप्रत्यवरेऽहो सत्र सुपकृतौ

विषुवानिति षडेतदनादिष्टावृत्ति रिति नाभिप्लवस्था-  
 वृत्तिः क्वचनादिष्यतेऽर्थ एवावर्तयतीति यद्देतत्  
 कथं सप्ताहो विषुवान्तस्यादिति दृश्यते षडहो विषु-  
 वतस्थाने चतुर्दशरात्रे तथा सप्ताहः सत्सत्स्वित्य-  
 थापि यदनावृत्तो ऽभविष्यदतिरात्रो ऽभिप्लवः षडहो  
 द्विरात्रो धावभिप्लवो षडहा वतिरात् इत्यभविष्य-  
 दिति रूढावृत्ताविति खतो नाना दिशत्युक्त्या  
 नुत्तरस्त्रिन्त्वरसाम्नो ब्रुवते पृष्ठोपधानात्तत् नान्येव  
 विधनानि यान्येकविंशत्यहकारिणां श्यैतनौधरा-  
 ब्रह्मसामानः स्वरसामानः पौष्कलश्च्यौष्णिहा विषु-  
 वतः साम त्वचस्य लोक आभीशव मभीवर्ता पाया-  
 च्छायन्त इव सूर्य मिति विकर्ण मिन्द्र क्रतोर पाया  
 न्यायकृत् मां सत्सद्यः सत्सत्सु पृष्ठं विषुवत्-  
 स्थामीयं करोत्यनिरुक्तं च तद्यस्त्रिंशत् खलूत्तरस्य  
 त्राहस्य स्तोमैरभि विधत्ते वै विषुवतीय मत्याधि-  
 रसन्तस एष आवृत्तः स्तोमः पूर्वस्त्राहो ऽनुपूर्वस्तोम  
 उत्तर एतं विशालः पृष्ठ इत्याचक्षते पृष्ठास्तोमं पुर-  
 स्तच्चोपरिष्टाच्च रूढावृत्तामनिरुक्तं सप्तमं मात्रा सम्पूर-  
 णायैकाहं तत्रानुष्टुभिवृत्करोत्यजाम्यधेऽथापि  
 वृत्तस्थानो भवत्यौपोत्तमादुमयसामवतमिति ॥ १२ ॥

न्यायकृत्तः मा चयस्त्रिंशद्वाचान्तप्रञ्चाहविहितं  
 तत्कतमीऽयं पञ्चाह इति पृष्ठास्तोमः पञ्चाह इति  
 कापटवेऽनादेशे कृ मन्थं प्रतीयामोऽथापि यत्-यत्  
 चैकष्टुको भवत्यादिशत्येवैनं तत्-तत्राऽथाप्याह  
 नानां ब्रह्मसामान्यपयन्तीत्येष नाना ब्रह्मसामा  
 भवत्यथापि दाशरात्रिकै रहोमिः पञ्चाहान् संवर्ण-  
 यन्ति पृष्ठास्तोमपञ्चाहर्त्त्रादेवाऽथाप्याह त्रिवृता  
 प्रयन्ति त्रिवृतोद्यन्तीति त्रिवृत् प्रथमं दशरात्रिकं  
 तदेवावृत्तस्योदयनीयं भवत्यथापि विश्वजिता जा-  
 नोमो विश्वजिदुःप्रत पृष्ठां विलोपनन्ववैतीति स वै  
 नून मभ्यासक्तोऽभ्यासक्तो ह्यहीनेष्वनभ्यासकान्तु  
 मन्यामहे न हि विज्ञायतेऽभ्यासक इत्यभिप्लवपञ्चाह  
 इति गौतम आदिष्टः कल्पेन भवत्यथापि न पृष्ठा-  
 पञ्चाहः कृतोऽकृतो विश्वजितेन पृष्ठास्तोमपञ्चाहो  
 ऽभिप्लवपञ्चाहस्तु विद्यते तं कृतवदतिक्रामत्यथापि  
 कृत्स्नाविव पृष्ठास्तोमो नाभिप्रयोगं लभते कृतो  
 विलुप्तो लभेयाता भित्यथापि शश्वदेकेऽध्वर्यवो ऽभि-  
 प्लवपञ्चाह मादिशत्यथापि कालविवितो व्यूहेनादि-  
 शत्यतिरात्रो ज्यातिगौरायुः पञ्चाहः स द्वितीयः स  
 तृतीयो विश्वजिदतिरात्र इति यदेतदनादेश इत्या-



देशजातिरिषा भवति यदधिकारो यदेवद्यच्च यत्र  
 चैकद्रुको भवत्यादिशत्येवैतन्न तत्र तत्रेति पृष्ठास्तोम-  
 पञ्चाहो वा अयादिम्यते पृष्ठात्रलम्बं उत्तरे नव-  
 रात्रे कन्दोमवति दशरात्र इति यदेतन्नाना ब्रह्म-  
 सामान्यपयन्तीति कारणकारित मेतद्भवति यदेतद्वा-  
 शरात्रिकैरहोभिः पञ्चाहात्संवर्णयन्तीति सङ्ख्याभि-  
 प्राय एतदाह द्वौ पञ्चाहौ दशरात्र इति यदेतत्  
 त्रिवृता प्रभवन्ति त्रिवृतीयन्तीत्युत्तमं एतत् त्रयस्त्रि-  
 ष्ट्रात्रे ऽभिवन्द्यावाह्यं वदति त्रयः पञ्चाहाः पुर-  
 स्नात् त्रय उपरिष्ठादिति यदेतद्विश्वजिता जानीम  
 इति नैह पृष्ठाश्वेन विश्वजिता गच्छति विषुवदर्थे नैष  
 शान्कतीति नाना ब्रह्म सामान्यपयन्तीति यदे पृष्ठा-  
 योरनुव्यत्ययं यदेतन्नौधसे व्यत्यहरिष्यद्भूयान् व्यत्यय  
 चाकलक्ष्यो ऽभविष्यत् प्रतिपदा साज्याना मौष्णहंयो  
 रिति श्यैतनौधसंवर्णानि बाह्वद्रथन्तरपृष्ठाद्यदु विश्व-  
 जितं विषुवन्तं मित्तो यदपैति तत्स्यैतच्छिन्ननुग्रह  
 इति ॥ १३ ॥

॥ इति निदानसूत्रे नवमः प्रपाठकः ॥

॥ अथ दशमः प्रपाठकः ॥

अग्निमूर्धा दिवः ककुदित्यकथप्रगायेः करोति  
 कथं हेतोरिति सामान्या मूर्धान्वृत्तौ वैषुवतीयोऽभि-  
 रूपं तत्रैतत्सत्रांसांहीय मापन्नञ्च विप्रजित मृषि-  
 च वैषुवतीयं विषुवत्युभे षोडशिसामनी करोति  
 वैषुवतीयं मन्यवित्सद्रुत्तमः पञ्चाह आषुत्तो भव  
 तीर अनावृत्त इति तद्वांख्यात् पूर्वस्मिन्नेकविंश-  
 तिरात्रे सत्र मासत उत्तरं तत्रैते सामर्थ्यं निदधा-  
 त्येकविंशतिरात्रञ्च इदं पञ्चाह चैते नानात्वकृते  
 इति पञ्चाहकृतं मुत्तमं प्रथमे विंशमयुक्ताः पञ्चाहा-  
 हन्व पञ्चाहानैव करवाण्येवं पक्षसीः समाधिर्निति  
 तत्र कथं बृहद्रथन्तरे इति यथालोकं मेव न हीह तद्  
 ब्राह्मण मिति कथं मु ब्रह्मसामनीति श्यैतनीधसे  
 एव न हीह तद् ब्राह्मण मिति यद्य तु स्यात् स एवायं  
 पञ्चाह इति तथैव तस्य बृहद्रथन्तरे तथा ब्रह्मसाम-  
 नीति ते ज्ञेयथालोक बृहद्रथन्तराः प्रथमस्य प्रथम-  
 स्याद् एष प्रदानुरूप इत्यजामर्थी यद्वा वा अयथा-  
 लोक बृहद्रथन्तराः प्रथम एवाथोपरिष्ठाद्यद्यु ह यथा-  
 लोक बृहद्रथन्तरा उत्तरे बृहन्निधनं बार्कजम् मनु-  
 कल्पयेद्यद्यु वा अयथालोक बृहद्रथन्तरा उत्तम

एवा ऽथ भवत्सह ग्रंथिष्वजति छन्दोमानुपयन्तीति  
 कस्येदं ब्राह्मणं स्यादिति षाडहिकानां समस्ताना  
 मिति चतुराश्रिता मिति छन्दसा मिति त्रिवृता  
 प्रयन्ति त्रिवृताद्यन्तीति त्रयः पञ्चाहाः पुरस्तात् त्रय  
 उपरिष्ठादिति न्यायकृपमां विधृतिभ्यो न्यायकृपमां  
 विधृतिभ्यः ॥ १ ॥

अथैता विधृतयो भूतानां विधारिण्यस्त चैतान-  
 हर्गणान् करोति चाह षडहं दशाहं द्वादशाह मिति  
 तानतिरसचैर्विधारयत्येव सर्वं मेवं विधृतं भविष्यतीनि  
 कानि तन्नांणीनि दर्शरात्रतोमविकृत इत्येके ज्योति-  
 शोम इति शौचिर्वाक्षरनादेशे क मन्यं प्रतीयामो  
 ऽथार्थाह ज्योतिष्टोमस्यायनेन यन्तीति शतसंवत्सरे  
 ज्योतिष्टोमायनेन यन्तीति वैतदवोचदिति कौसु-  
 विन्दे इति गौतम एतेन कल्पेन प्रदिष्टे भवत इहो तद्-  
 भिरूपतरं यथो चाहीने सचे ह्येव समाप्सो ऽभिरूपतरो  
 यथो चाहीन इति व्याख्यातानि संश्लिषामाण्येवं  
 चैत संश्लिषाम स्यात् कौत्सस्य लोक उद्दृशीय मतेने-  
 डाकासश्च सिध्यत्यजामिकल्पश्चेति तद्यदेताखा त्वा  
 विशन्विन्दव इतेयता राचेर्विक्रती दृष्टा इति नित्यासुं  
 वेति विचारयन्त्यर्थकारित मद्दृशीय स किमर्थी

नित्याश्चावयेदिति पञ्चदशानां दशमस्य नानदु  
 षोडशिसामैवं छन्दसा मनन्तरं यस्तदुं सन्धिसामैव  
 भवत्यथौशनकावे समाचारयिष्यत्पथा रथन्तरं मप-  
 चिंत्या रथन्तरं सञ्चरते ऽथार्षिं कावं तृतीयसवनेन  
 समधिचारयिषीत्तदशेनौशनं तत्रैने वैश्वज्योतिष-  
 वासिष्ठे अपरस्तात्स्तोभं पदानुस्यारे यद्यौशनकावे  
 एकविंशेष्वर्कान् करोत्यन्तर्पिषिणो हि स यद्भवम-  
 प्रभृतिष्वन्तर्पित्वादेवाथाप्येते सप्तमप्रभृतिषु दश-  
 गात्रे दृष्टा उपपन्नं द्वादशाहं नवमप्रभृतिषु प्रयुज्जे-  
 रन्निति कावस्यर्क्षु दीर्घतमसोऽर्कं एतासां हि स्याग-  
 मापन्नं द्वादशे ऽहनुत्संधनिषेधौ करोति दशैमा-  
 दन्तान्वितौ यमातिरात्रास्वादित्याना मष्टावति-  
 रात्रान् करोत्यष्टौ यमा आदित्या दृत्यादित्यानां  
 इन्द्रदर्शनादभिप्लवातिरात्राणां इन्द्रानि करोत्यथ  
 खल्वायुस्तोमे ह्यभिजिति वात्रामिकल्पे सौभरं  
 करोति तत् खलुं हारिवर्णश्चर्क्षुं करोत्ये ताम्नां हि  
 स्थानं मापन्नं मिति ॥ २ ॥

अथैता आञ्जनाभ्यञ्जनाः प्रजापतीप्सा मुपकृता-  
 स्तत्र सर्वक्षोम मुपहारयेत्येषो ऽह्नु स्रोमतः स-  
 स्यातः पृष्ठत इति तद् यत् प्रउविंशस्थानं मेव

मर्षविलोप इत्युत्तसाकभिप्लवा वावृत्तौ भवतोऽ-  
 अनावृत्तावित्यनावृत्ताविति शौचिवृत्तिर्न ह्यावृत्ति-  
 विज्ञायते ऽथाप्यमध्ये सर्वस्तोमो मध्यस्थानो विषवा-  
 नित्यावृत्ताविति गौतमः प्रतिष्ठाकामसत्र एतस्मिन्  
 स्थाने कृतं करिष्यन् भवति नैतदन्यत्र मध्यरदाभतो  
 भवतीति यदेतदनादिष्ठावृत्तिरिति नभिप्लवस्था-  
 वृत्तिः क्वचनदिश्यते ऽर्थः एवावर्त्तयतीति यदेतद-  
 मध्ये सर्वस्तोम इत्यपर्वविलोपयैतद्भवति पश्चाम-  
 ङ्गामध्ये विष्वन्तं यथा त्रयोदशरात्रे संसृतिस्त्विति  
 संवत्सरसंभ्रितासु प्रायणीये चतुर्विंशं प्रतिषिध्यत्  
 तं प्रतिवृदेव कार्यमित्याह निष्पन्नचोदितत्वादेतदं-  
 पूर्वं प्रायणीयं चेति स्तोमविकार मेके तस्मैवाधि-  
 काराच्चतुर्विंशं त्वेवं कार्यमिति निष्ठा तथा हि  
 ब्राह्मणं ता एताः संवत्सराणि सुपंकृतास्तत्र  
 यदेतान्यहान्येव संवत्सरं प्रयुक्ततमान्यहानि  
 भविष्यन्तीति तृतीयं ऽभिप्लव इषावृधायि समन्ते  
 कुर्यान्न कुर्यादिति न कुर्यादित्याहुः पृष्ठसात्रिपा-  
 तिके च्छमे भवतो न चेह पृष्ठे भवतीति कुर्यादित्य-  
 परं नाना पर्वणोरिमे सन्तामार्थं भवतो नानापर्वणोः  
 रवेते अहंगणश्चैवाहश्च भूयसा चैव सांवत्सरिकाणां

द्रव्याणां मविप्रयोगो भवत्यथाप्यत्र, विश्वजिदभि-  
जित्सन्निपातो भवत्येती च पृष्ठांसदृशावित्यावृत्ते  
ऽभिप्लवे कतमत्सन्नि कुर्यादिति यत्वं मित्येक एतदे-  
कार्थं दृष्ट मथाप्येतदेषां माकृतांना मन्ते भवति;  
मध्मोहाय मिदं सच मित्यपत्य मित्यपर मेवं पुर-  
स्ताच्छन्दोमानां द्विष्प्रयुक्तानि भवन्ति. सन्तनीत्यपर  
मेतद् येषां मादां भवत्यसम्प्राप्तेरन्ततो लोपः शांकार-  
वर्णं मित्यपरं मेतदेषां मकृतं भवत्यथाप्यत्र सम्प्रा-  
प्ययं भूयः सांवत्सरिकं द्रव्यं मनुगृह्यत इति ॥ ३ ॥

प्रजातिकामसत्रं मुत्तरं तन्न नवाहान्करोति  
म्यूनात्प्रजाति रिति षडभिप्लवस्य सचखेदं स्थानं  
स चतुरभिप्लवता मनतिचिक्रमिप्रन्नेतानेव षडहान्-  
न्तमंशुह्य चतुरो नवाहान् करोत्यथ खल्वत्र भाग-  
स्तांमान् करोत्येते ग्रा न दृष्टा इति तेषां यदेवंविधः  
संस्थायीग एव मुभे रूपे षडहहूपञ्च ककुब्रूपचायां-  
घेव तावत्यः संस्था यथा प्रसां मभिप्लवाना मित्यु-  
डरत्यकं यो विधृतिषु दशराचे ह्यकान् करिष्यन्  
भवति राथन्तरेणाह्ना त्रिवृतः प्रतिपदाते बार्हतेन  
षडदशान् राथन्तरेण सप्तदशान् बार्हतेनैकविं-  
शान् अवेतानवाह्यसूतं व्यश्यासः कुशलेनोपपदात

इति प्रतिष्ठाकर्मसत्रं मुत्तरं तदाञ्जनाभ्यञ्जनाभि-  
 व्याख्यातं न्यायं कृत्वा मेकषष्टिरात्रा द्यैतदेकषष्टि-  
 रात्रं संवत्संस्मितांस्थानमेव तत्र नवाह मभितः  
 युष्मै करोत्येव संवत्सांवत्सरिकं द्रव्यमनु-  
 गृह्यते इति ॥४॥

अथ केनासंस्तीर्णान्त्रभिर्विदधीते ऽतिरात्रिसत्र-  
 न्यायेनेत्याहुयथा शतत्रात्रमित्यपि वा दशरत्रञ्च  
 व्रतं चान्ते निधाय यत्र सांवत्सरिकाणां मङ्गाः सम-  
 वहारः सिद्धान्तथा कल्पं कुर्वीत यथा संवत्सरः  
 स्मितांस्वपि वा सत्रं भागंस्तोमानां समविभागः  
 सिद्धेभ्यः कल्पं कुर्वीत यथा मभितुः ककुप्सु ज्याति-  
 श्चोमेभ्यः वैषं जनस्य पूरयितेरथ प्रायणीयोदयनीय-  
 योरतिरात्रयोरदिशयेकत्र षोडशिनं नैकत्र तत्  
 कथं न्यात् षोडशीति यथा विराट्सम्पदं सम्पत्सं-  
 मानां मन्येत तथा कल्पं कुर्वीत द्वादशीहस्य च  
 गत्रामयनस्य विराट्सम्पदं षोडश्युपकृते ऽथानुप-  
 पद्यमानायां प्रकृतौ निर्णीयं यथा मन्येत तथा  
 सशयेषु प्रतिपादयेत्तेषां ग्रानि रात्रिसत्रन्यायेन  
 वर्तन्ते षोडशिमन्तवै तत् यथा द्वादशाहेऽथ यत्र  
 रोहप्रत्यवगोहौ सत्रं मुपकृतमषोडशिकौ तत्र यथा

गवामयने. यवानुमध्यं षोडशिकी, यत्र यत्रो न  
दृश्येत षोडशिमन्तौ तत्र तत्र कारस्त्रायापि वा चतु-  
ष्टोमेष्वषोडशिकी सर्वस्तोमेषु षोडशिमन्तानिति  
षोडशिमन्तानिति ॥ ५ ॥

अथातः सांवत्सरिकाणि तेषां यद्गवामयनेन  
सामेति व्याख्यातं तद्यदप्रवदति व्यावृत्त्यर्थे वा  
तदपि ब्राह्मणेनैवं कारणं वदति तत्रादित्यानामय-  
न उद्भिद्बलभिदौ मात्रासम्पूरणाय कर्णेति तत्रैक  
इन्द्रकतावुत्सेधनिषेधौ कुर्वदत्येष औत्तरपान्निक इति  
तत्र निन्दा यत् षट् प्रगाथा भवन्त्यष्टौ प्रागाथिकाः  
सीति यथासमाम्नायन्तेवैवं पक्षसोः समाधिरिति  
पञ्चदशत्रिवृद्धा मुपहिते गीत्रायुषी ते पञ्चदश-  
त्रिवृद्धां प्राचिक्रमैषीच्छन्दोमखोमं दशरात्रं करोति  
पशुक्ता कन्दोमा इति तस्मान्ते चतुर्विंशे सन्निपत-  
तस्तत्र पञ्चविंशं करोति नानात्वार्थः स इ चतु-  
र्विंश एव भवति चतुर्विंशो ऋषेः एकाहिक-  
प्रसुत इत्वाल्लोभाद् बृहद्रथन्तरे पृष्ठे अथापि स्तोम-  
ज्ञात्रेणाथाप्येवं त्वावन्तः पृष्ठोपाया यथा गवामयने  
समूहति बाहृद्रथन्तरंपृष्ठ्यावुद्धरति षोडशिनं चतु-  
र्थाद्विराजा मन्वपाथः स्वराजोपेयुः स्तोमंश्च वा



लोभादन्वथापि यद्यु-हेम मेकविंश मकरिष्य दस-  
 यिष्य कृन्दोम्याद्यदि कृन्दोम मेकविंश्यान्न वैक  
 मेकविंशे कृतावनेकविंशस्तथेह भवतीत्यथाप्येवं  
 तावन्तः षोडश्यापाया यथा गवामयने ऽथाप्येवं पञ्च-  
 दर्शसंप्रदशरात्रस्य सिध्यति षट् स्तोत्रीयाः पञ्च-  
 दश मतिरिच्यन्ति त्रीण्यत्र सन्तनीत्येकांस्तावानि  
 तेभ्यः षट् प्रस्तावा लुप्यन्त एव मेषा पञ्चदर्शसम्पत्  
 सिध्यतीति ॥ ६ ॥

दशमस्य चतुस्त्रिंश मेके ऽग्निष्टोमसाम कुर्वते  
 कृन्दोमत्पये चतुस्त्रिंश मेक एकाहस्तेामी भवतीति  
 त्रयस्त्रिंशन्त्वेव स्यात् क्रियमाणे ह्येवैतस्मिन् पुरा  
 कृन्दोमस्तोम मेतद्दह भवतीति यथाभूयस्तेनाथाप्याह  
 चत्वारश्चकृन्दोमा इत्येष एव सृशय एकस्तोमेषु  
 द्वादशाहेषु सर्व एव द्वादशाहो विकृतः स्यादित्येके  
 द्वादशाहे च क्रियमाणे क्रिसृशो ऽवयवं प्रतीया-  
 दिति कृतप्रमाणाः सृशया भवन्तीत्यपरं ते पश्या-  
 मोऽन्यावन्तिरात्रौ कृतावाहाभिनिद्वद्वादशाहे विप्र-  
 जिद्-द्वादशाहे इत्यथापि नमनांपदि रात्रिः ससन्धि-  
 कायाः स्तोमविकारा विद्यते सा कथं सृशयेषु  
 प्रतीयेतीथापि महत्सु स्तोमेषु सस्त्रिस्तोत्रीयाम् प्रत्य-

कल्पयिष्यदथैतेन सर्व एकस्तेमाः व्याख्याता अप्य-  
हीनेष्वथ षोडशैकविंशस्तेमो वा स्यादपि वा ये  
प्राक् त्रिणवत्रयस्त्रिंशत्तया मंहस्तेमं तेष्वन्विषा-  
देकविंश मुत्तरं ध्विति तौ खल्विमौ द्वादशरात्रौ  
भवेत् उभयत्राह दशमंधर्मा मानसे तु विचरर्यन्ति  
पूर्वस्त्रिंशत्त्येके एषोऽयुक्स्तेमो विष्कृते नानापृष्ठे  
धर्मात्युत्तरस्त्रिंशत्परः मेष स्थानस्थोऽथापीदं यं-  
नाप्त मेतदन्ते ऽभिरूप मथापेयं व्रतस्य मनसंस्त्र-  
चाव्यवायेषु भवत्यथापेयं त्रिवृत-पञ्चदशस-स्यंद्दश-  
रात्रयोः सिध्यत्यथापि यत् पूर्वस्त्रिंशत्करिष्यद्बहुना  
ऋतेन मानस मध्यशाययिष्यदथापि यत् पूर्वस्त्रिंश-  
शरात्राद् बहूपैति तस्मैतस्त्रिंशत्तनुग्रह इत्यन्न आसूष्णि  
पवस इत्युत्तरस्य दशरात्रे करोति ऋत्य हेतोरिति  
शिगुंत्वन्न मिदं भवति सैषाग्नेयी पठिताभिव्याहारा  
शुद्धार्थे ऽभिरूपायग्याग्नेय्य आङ्गिरसः सैषाङ्गिरसो  
देवतेति ॥ ७ ॥

प्रतिष्ठाकामसत्र मुत्तरं तत्र षोडशिकान् मांस-  
भाजो रूढावृत्तान्निर्दधात्येवञ्च सिद्धौ रोहप्रत्यव-  
रोहाविति व्याख्यातं व्रतं विषुवात्सत्रोक्त मयने-  
ष्वपि पृष्ठस्तेमसे विहितः स्यादित्यथापुंदाहरन्ति

यज्ञसमाप्त उत्तरं तत्रैतानि वृत्तितानि स्थानान्यति-  
 रात्रः शौनासीर्कं मासो दशरात्रो महाव्रत मिति  
 कर्त्तव्यानीत्येकं एषं सत्रं न्यायं इतरा कर्त्तव्यानीत्यपर-  
 मेव पुराणं वेदयन्ते ऽथाप्यनादिष्टः प्रायणीयो  
 व्यूहेन भवति तत्र यत् पुरस्तादतिरात्र मकरिष्यं  
 लुप्तो राहो ऽभविष्यदपि च सुव्यां हविर्यज्ञा वाव-  
 यिष्यन्निति यज्ञसमाप्तत्वाद्बोचासमासो हविर्यज्ञ-  
 मक्रमत्वाद्त्सरुकैश्चमसैर्भक्षयन्त्यथ खल्वत्र द्वौ गृह-  
 मृती सन्निपातौ होत्राध्वर्यवेनैकेन सुवर्त्तये इव  
 स एषं बृहत्थ एव द्वितीयः स यज्ञहपतिरतद्गणस्थान-  
 मिति स्वर्गकामसुत्र मुत्तरं तत्र संवत्सराभिप्रयोगोः  
 भवत्यत्र यज्ञतपसोरभिवृद्धिरिति तत्रोक्त मय-  
 नेषु तेषां यान्त्रेकां ह्यैर्वर्त्तन्ते गौरीवितानि तानि  
 यानि नानाहोभिः सगौरीवितानि नानाहो हि  
 सन्नानार्थं गौरीवितानि मित्यथ पुरुषस्य नारायण-  
 स्थायने विप्रवज्रदेवोभयोः पक्षसोः स्यादित्येक एव  
 पक्षसोः समाधिरिति यथासमस्तरयन्त्वेवैवं मवि-  
 लोप इत्यथैतेषु दशसु विचारुवन्ति कानीमान्यहानि  
 स्युरिति ज्यातिष्टोम इत्येक एषो ऽविकृतः \* पुर-

\* 'एष विकृतः' - इति ख ।

स्ताद् भवत्यनापन्नान्येतानि पृष्टानि ज्योतिष्टोम  
मित्यपरं पृष्ठं गृह्यमाणं महर्गृहीयादिति ॥ ८ ॥

अथैतत्क्षेत्रकतापञ्चित मित्याचक्षते चत्वारो दैत्रा  
मासाश्चत्वारः श्रीपसदाश्चत्वारः सौत्यास्तस्य कल्पो  
श्वामयनस्य प्रथमोत्तमौ पूर्वस्य पक्षसोर्मासौ स्यातां  
तथान्तस्याऽपितन् महातापञ्चित मित्याचक्षते चत्वारो  
दैत्राः संवत्सराश्चत्वारः श्रीपसदाश्चत्वारः सौत्यास्तस्य  
कल्पो गवामेवायनं चतुरूपेयु रपि वैतस्यैव पक्षसो  
अभिवृद्धे स्यातां त्रयोविंशतिरयनमासाः पूर्वं पक्षसि  
सुर्धाविंशतिं रूतरेऽपि वैतान्येव प्रथमानि चत्वारि  
समखेद्यथा वीणि संवत्सर इत्यपि वा ज्योति-  
ष्टोमायन मेव कुर्वीरन्नेतेषां यन्मन्येऽस्तदपि  
वा यथा गणसंवत्सराणां तथा कल्पं कुर्वीताऽथै-  
तच्छाक्तानां षड्विंशत्संवत्सरं तरसपुरोडाश  
मन्नसुरोधाद्यदन्तःपुंसप्रस्तदन्नदास्य देवतेति ते  
यन्मांसमथा वाः स्यामाकमथा वीभे आपन्ने हविष्ट  
मित्यथैतानि महासत्राणि देवानां मेव दीर्घायुषो  
देवा इति मनुष्याणां मपि सिद्धानि स्युरित्यपरं ब्रह्मः  
सन्निविश्य संनुयुः पुत्राः पौत्राः प्रपौत्रा इति तानि  
खल्वतिरात्राण्यविषुवेत्कान्युर्धायनात्तीमानि भवन्ति

तत्र यदातिरात्रं वा विषुवन्तं वा करिष्यं लुब्धो सोऽहो  
 ऽभविष्यं दद्यापि न कल्पेनादेशो विज्ञायते नुं ब्राह्म-  
 णं नाथपिवां प्रराणं वेदयन्ते ऽथाप्याहैकविंशो-  
 ऽन्ततः स्तोमानां भवतीति शतसंवरसरे ऽनतिरात्रस्यैव  
 सत इत्यथैतदग्नेः सहस्रसायं परमा विराज मुप-  
 कृतं मणिं वा सहस्रसंवरसरेषा मेवोपकृतं स्यात्-  
 तच्चेत्त मयनेषु ॥ ८५ ॥

स्वर्गकामः सत्र मुत्तरं तद्यत्सारस्वत मेषा  
 स्वर्गात्ता भवतीत्यथैषा ऽग्नये कामायेष्टिः पृष्ठशम-  
 नार्थेनैव भवत्यथ स्वत्वाह तस्यां मशवाञ्च पुरीषीं च  
 धेनुके दत्तवेति केभ्यो दद्यादिति प्रसर्पकेभ्य इत्येके  
 दृश्यते च प्रसर्पकेभ्यो दानं मथापि ब्राह्म्यस्तोमेष्वनृ-  
 त्तिवरभ्यो ददातीति पृथगेवैतरेतरस्यां इत्यपरं कर्तृ-  
 भिः संयुक्ताः क्रतुदक्षिणा भवन्ति तत्रातपनिर्वर्त्य-  
 माने किमर्थी ऽवयवं प्रवीर्यां दित्यङ्गणायां कृष्णा  
 मुदवसानायां भिरिष्टिभिर्यजेरन्निति गौतम एव मुद-  
 क्संख्यं कर्म भवत्यथपोप्रां लोकोक्ता भवतीति  
 सारस्वते एवोत्तरे कुशलं यत्सन्ततस्तुत्ये त्रिवृत-  
 पञ्चदश मिन्द्राग्नेरयनं मेताविन्द्राग्नेर्भक्ती इति  
 यज्ञोच्चायुषी इन्द्रकुक्षी सप्राये चापि चैता सभ्या-

मत्याधिस्त्रिवृत्पञ्चदशयोरिति त्रिकटुककृत्सु मुत्त-  
मस्यैतेऽयने दृष्ट इति यदु विश्वजिदंभिजिताविन्द्र-  
कुक्षी सप्राये चापि ताभ्यां मत्याधिस्त्रिकटुकाणा  
मिति ॥ १० ॥

अथैतद् दार्षद्वंत्तं स्वर्गकामायत्तं तस्यैते पुरश्च-  
रणे गौपाल्यञ्जाग्नीम्हनञ्च दीक्षाभ्यः प्रति गौपाल्य  
मुपसदभ्योऽग्नीम्हनं संयदृत्विजो वाचार्यस्य वैतौ  
स्थानिनौ गुरु तयोः प्रेषचरणं मभिरूपं तदेव  
मनुष्येभ्यस्तिरो भवतीति तत एवारण्य माविशेज्ज  
पुनर्याम माव्रजेदिति स्वर्गं लोकं माक्रमत इत्येके  
व्यावर्तते श्रेयान् भवन्तीति वा ऽथैतत्तौर मिष्ट्रा-  
यनं स्वर्गकामाय त मेवाभिरूपं तदेव संवत्सरसु-  
त्यान्नेदीयत्या माचयैप्सीत् किमर्थं उ तदिति  
साभुज्यं स्यादित्यननुभूतिजं स्यादिति सिद्धिदर्शी  
वा स्यात् सिध्यति वै खलु संवत्सरसुत्याया इष्टा-  
यनेनाग्निस्तर्वाप सुत्या देवता भवन्ति यावदेव  
मर्थरूपस्यादीक्षितः कृष्णाजिनः प्रति मुञ्चते नव-  
नीतेनाज्ञान्यभ्यङ्गे दीक्षारूपं मेतद्भवति वराखता  
इष्टय इष्टयन्त वा पश्वन्त वा सोमान्तं वा कुर्वीते-  
त्युभयोः पृष्ठमनरूपं मेतद्भवति ॥ ११ ॥

सर्पसत्रे क्लिं मयनं ह्यादिति गवामयत्तं स्त्रिम-  
 विकृत इत्येके ऽनादिष्टान्यहानि व्यूहेन भवन्ति संव-  
 त्सर आदिश्यन्ते तत्र किमर्थो ऽवयवं प्रतीयादित्य-  
 थापि विषुवदादेशेन रोहप्रत्यवरोही गवामयनो  
 त्पादवितौ भवतो ऽथापगह षण्डकुषण्डावाभिगरा-  
 पगराविति वृत्ते ऽभिगरापगसौ भवतः कौसुरुविन्दे  
 इति गौतम एते कल्पे ऽनादिष्टे भवतो यदेतदना-  
 देश इत्यादिष्टे कल्पे न \* भवतां यदेतद्विषुवता-  
 देशेन रोहप्रत्यवरोहाविति दृश्यते विषुवानेतयो-  
 र्भूतन्वयोऽर्हति वातवतो रयने तथा रोहप्रत्यावरो-  
 हाविति यदेतत् षण्डकुषण्डादभिगरापगरावित्यन्यत्र  
 सतो र्वदिष्यदपि वेहोपासकयोरपि वा वचनाद-  
 भिगरापगसौ ह्याताः तत् खलु हृठप्रत्यवहृठं  
 ततोः विषुवानिति व्याख्यातानि सर्पसामानि विषु-  
 वति सर्पसामानि कल्पसप्ररथाणीति तेषां यदेव  
 मानुष्यं निधनान्निषां मादित्यक्षेपा मुपकृतानि  
 तेषां मेव मानुष्यं मथापेक्षा श्वेतङ्गनिधनं तत्  
 त्रिणिधनानुग्रहाय माध्यन्दिने ऽचिकौर्षीदानुष्यं  
 मितरे ॥ १२ ॥

अथैते गौषूक्ताप्रवसूक्ते भ्राजाम्भ्राजयोः स्थाने स-  
 प्राये चापि वैनयोर्ज्योतिः सप्राये निधने यथा भ्राजा-  
 भ्राजयोरिति दंशिनं स्तोमं करोति दंशुकाः सर्पा  
 इति द्वादशं विषुवन्त मित्याधित्सन्नयापि शश्वद्-  
 द्वादशौ विषसेचनौ नाम सर्पाणां दन्तौ भवतस्तद्रूपं  
 विषुवत्यचिक्लीर्षीत् प्रजातिकामसन्नं मुत्तरं तन्न मध-  
 त्सराभिप्रयोगो भवति संवत्सरं हि प्रजाः पशवो  
 ऽनु प्रजायन्त इति हि भवतीति तत्रैतान्धैव त्रौणि  
 समस्य निदधात्येव मा तृतीयं पृष्ठाभिस्त्वयोर्दश-  
 रात्रस्येति विकार उपपरस्यत इति तत्रेके गवामयन्  
 मन्ततः कुर्वन्ति प्रजादिकामसन्नत्वाद्देतेन वैः सृवं  
 प्रजातिं भूमान मगच्छत् प्र जायन्ते बृहवो भव-  
 न्तीति स्तोमतश्चैव गवामयनाजाः रोहो भविष्य-  
 तीति यथैतत्प्रजापतेः सहस्रसंवत्सरं परमां धिराज  
 सुपकृतमपि वा प्रजापतीसा भिवीपकृतं स्यात्तत्र  
 खलु त्रिवृतं करोति यथान्तरेञ्च लघुश्चायस्तोमश्चाद्यं  
 प्रजापतिरिति ज्योतिष्टोमं तन्न माग्निष्टोमौ स-  
 स्थाः रथन्तरं पृष्ठं तत्र खलु बृहस्पतिसवं करोत्येषो  
 ऽग्निष्टोमस्त्रिवृतस्तोमो रथन्तरपृष्ठो ज्योतिष्टोमतन्तो  
 भवतीति न्यायकृत्तमुत्तरं न्यायकृत्तमुत्तरम् ॥ १३ ॥  
 इति निदानसूत्रे दशमः प्रपाठकः ॥ समाप्तोऽयं ग्रन्थः ॥





# ॥ उपगन्थसूत्रम् ॥

( छान्दोग्यवेदीयम् )

॥ ऋ षिं - प्रो ऋ मिं दं म् ॥

आवसथश्रीसत्यव्रतसामश्रमिभट्टाचार्येण सम्पादितम् ।

कार्लकस्य—सत्ययन्त्रतः

( १६-१, घोषसूत्रेण )

श्रीहितंरतचट्टोपाध्यायेन मुद्रयित्वा सम्पादकेन प्रकाशितम्  
॥ आकाः १८१८ । संवत् १९५३ । ख्री० १८६७ ॥



# ॥ उपगन्थसूत्रम् ॥

॥ अथ प्रथमः प्रपाठकः ॥

॥ हरिः ॐ ॥

प्रथं सम्पत्तिविरंजादेशे स्तोत्रीयान्तः श्रुति विज्ञेयः संख्या-  
समस्ताख्ये प्रंतेरकं मर्थाहिनियमो ज्योतिष्टोमिः भव तं मुक्थ्ये  
त्रिपञ्चाशे द्वाचत्वारिंशानि चत्वार्यतिरात्रे सवनानां भक्तिवाद्-  
छन्दस्तोभंभक्ष्यानदैवतैर्यानि सप्त चतुस्तराणीति गायत्री-  
जगत्यो हे ब्रह्मन् बुध्निक्चिष्टुभौ च हे पङ्क्त्यनुष्टुभौ सैदं  
सप्तमी यैरुक्थ्यैश्च छन्दोभिरिति षष्टिस्त्रिष्टुभस्तासां सिद्धि-  
स्त्रयोविंशतिर्गायत्राः पञ्चचत्वारिंशत्तम् ब्रह्मन् द्वादश ककुभ-  
श्चतस्रभिर्गायत्रीभिस्ता ब्रह्मन् स्याः सप्तपञ्चाशत्तं तावत्पञ्चराणि  
गायत्रास्तैस्तास्त्रिष्टुभस्त्रिष्टुभौ पुरोजित्वां दशपद्यःपदान्य-  
नुष्टुप् शिरसिश्चाक्षर्यःशीत्यक्षरज्ञीत्रायुषोः पूर्वस्यैकचत्वारिंशे  
परस्यैकान्नषष्ठे न्यूनोतिरिक्ता त्रैत्रे सप्तानां विराजत् सम्प-  
द्येते चत्वारि त्रिंशान्यतिरात्रयोत्प्रादशायुषोभिजाः पञ्च-  
द्विषष्टान्यतिरात्रे गायत्री सम्पन्ने तासां सिद्धिः ॥ १ ॥

इदं प्रकृत्या गायत्राः सप्त पञ्चाशत्तं ब्रह्मन् स्याः पञ्चाशीति-  
र्द्वादशाक्षरं च चतुर्नकतिरुष्णिक ककुभ स्या नवशतत् षोडशा-  
क्षरं च षड्त्रिष्टुब्जगत्यो ब्रह्मन्तिषोषेण द्वादश सप्ताने नाम्ने-  
धोरामया सारं मनुष्टुभस्ता हे षष्टिर्धनां षोष्णिक ककुब्भ्यात्

शेषेणाभिजिदिश्वजितोसत्वारिण्ये पञ्चैकानविंशत्यतिशय-  
योत्रते द्विषष्टिः शिरःपञ्चपुच्छानां परिमाद्विस्त्रयः पञ्चविंशः  
सहस्रं विंशतिस्त्रिंशतो दशाधिका बृहती चैका विराजस्ते  
चत्वारोक्षर्यास्त्रिंशतः मुरि इ साहस्रोत्तमर्षभयोर्द्वा नव तं ताः  
सहस्रशुभः सायस्केष्टयतन्तास्त्रिंशत् ऋगक्षरा बृहत्या विराट्-  
परयोर्विंशत् पूर्वस्याध्यर्षं सुत्तरं चतुर्विंशतिरेकत्रिके ॥ २ ॥

ब्राजपेयविशाराः सप्तदशाशतस्त्रिंशदतिरात्रे/त्रिंशत् सप्त-  
दशव्यष्टौ सप्तविंशानि राज्येष्टवैकविंशः परे विंशोप्यदे  
हादशाधिकाः प्रकृतेरजेः स्तोत्रे चैकोद्भिद्वंशभिदेन्द्रानेषु चतु-  
श्वत्वारिंशन्ताः षड्गायत्रास्त्रिंशती जगत्स्त्रीण्यपचितुत्तरै  
पिपेनसह्ययोः षोडशैताः षड्बृहत्सहस्रविंशतिस्त्रिंशतस्ता-  
स्त्रिंशत् त्रिंशत्सोमं सम्पद्यते बृहतीच्छन्द इति बृहती-  
च्छन्द इति ॥ ३ ॥

चैत्रये पूर्वस्याःस्त्रिंशत्पञ्चाशे चत्वार्यष्टाशत्वारिंशानुत्त-  
रस्य समस्तयोः सप्तैकाधिकानि जामदग्ने प्रतंष्टं जगतस्त्रिंशः  
षट् सप्तैकादश षोडशैकेः षट्शतं षट्त्रिंशत् दशमेऽशुष्टु-  
प्परीण्यं चतुःसप्ततिः सतिच्छन्दः संस्रानवे तासाश्च सिद्धिः  
षड्शुभः प्रकृत्या जगत्स्त्रिंशत्सैकाधिकानि श्लोकस्त्रादिति पञ्च  
षष्टं गायत्रास्तास्योर्विंशत् गायत्री चाशीतितरेकेना बृहत्या-  
स्ता षष्टाशीतिः ककुत्सात्रा च षट्त्रिंशत्संशतयो नवोणिक-  
कुम्भस्त्रिंशती द्विपदा गयत्रातिशेषस्य नूनातिरेकैरेकोनाविं-  
शतिस्तासुत्तरं चरश्चातिच्छन्दस्त्रिंशत्सुत्तरैण ताः पुञ्जानुष्टुभी  
ज्योतिर्विचारेष्वक्षरतः प्रकृतेर्यावद्यावदर्थे तावदन्वयाद् असते  
तस्मादिति निर्दोषो वर्धिष्नास्योस्तादिति ऋषे प्रजातिकार्यस्ये

निर्मूढोर्षेः । ज्योतिःपृष्ठात्म्यं त्विष्टिर्ज्योत्संगामयादिसंभवसाहस्र-  
प्रतिक्रमेषु रथन्तरात् षोडशं क्रमं संस्तुह्वं ब्रह्मार्थतनीया षष्टिरभि-  
चरतो षष्टकारणिधनाद्विभ्रष्टपहारयोः । आयन्तीषाञ्चतु-  
र्विंशतिस्तत्रयाणां कालेयाद्यज्ञायज्ञीयबृहद्विष्यमाने षड्भ्र-  
संज्ञात्तदुष्णिक्कुम्भोः ॥ ४ ॥

आग्नेयेनोक्थप्रथया व्याख्यातास्तेषां सिद्धिर्नामिधा त्रीण्यष्टा-  
चराण्यभ्यस्तादेकविंशतिश्चतुरचराणि पञ्चयोश्च चराण्युत्तरे समा-  
नोभ्यासं चत्तमे त्रीण्यष्टिगभ्यश्चतुरचराणि लुप्यन्ते समाचराणि  
पञ्चिभ्यस्तदेकया पञ्चया सम्यादेयेदभ्यस्ते चैकं द्रष्टे आयन्तीय-  
षष्टकारणिधनाभ्याश्चतुर्विंशत्कालेयोश्चिक्कुम्बयज्ञाय-  
ज्ञीयेभ्योऽतिरेके प्रातःसवनात् पञ्चदश गभयत्रास्तत्पृष्ठानां ब्रह्म-  
सामाच्छावाकसान्नीर्माध्यन्दिनत्समदशं बृहद्व्यस्तत्रायत्रसंहितः-  
संफस्यावाश्वाभ्यो गवयज्ञायज्ञीयेभ्यस्तस्यानुव्याख्या चतस्रः प्रकृत्या  
बृहद्व्यस्तत्रायत्रोऽनुष्टुभश्चाष्टौ ककुम्भोऽष्टाचरश्च काकुम्भ मानुष्टुः  
भश्च द्वादशाचरं ककुम्भोऽनुष्टुभ्यां सिद्धौ द्वादशाचरेण गार्धत्रो-  
ऽष्टाचरेण शेषस्त्रिष्टयमानेष्टौ गार्धत्रा आग्नेयः सप्तदशाष्टाच-  
राणि आयन्तीयात् सप्तदशं द्वादशाचराणि वैखानसात्तस्यानु-  
व्याख्या वैखानसातिशेषेण बृहत्तमः सिद्धः ककुम्भोश्च मध्यमौ  
पादौ आयन्तीयेनानुष्टुभोऽष्टाचरश्च काकुम्भ माज्यशेषः कखस्थ-  
न्तरं ककुम्भौ सम्पकिं द्विस्तृतीये साहस्रप्रतिक्रमे पूर्वद्वस्तोपस्तत्  
कौत्सवह्णसान्नेर्वृद्धं चरयोर्द्वारसंज्ञां हे तदुष्णिहः परोद्वित-  
कुम्भोनयोर्द्वादशाष्टाचराख्याकूपारात्तत् पृष्ठानां ब्रह्मसान्नेस्त-  
मृष्ठानां ब्रह्मसान्नेः ॥ ५ ॥

अथातः प्रायश्चित्तानुगतात्तथैव चिद्धेऽद्विचिन्तः संयज्ञकतुः सं

हि स्यात् इति क्रतुदक्षिणां प्रतिषेधं प्रतिवन्ति नाङ्गदक्षि-  
 यानां पुरा हि सर्पसकालाद्दक्षिणाः ग्रहदेवोऽध्वर्यवोऽधीयते  
 तासु दत्तास्त्रिदक्षिणत्वं नोपपद्यत इति तेन पाञ्चदक्षिण्यं  
 व्याख्यात मेतेन सार्ववेदसं क्रतुदक्षिणाणां मेद्वैतत्परिमाणं  
 भवति नाङ्गदक्षिणाभिः सार्वं मितप्रयुक्तैस्सार्ववेदसिकं प्राय-  
 श्चित्तं सर्ववेदसदक्षिण्यं नुपपद्यमानं मन्यन्ते नितप्रतान्न हि  
 नित्येन प्रायश्चित्तार्थं उपपद्यत इति तत्र दक्षिणावन्ति  
 प्रयश्चित्तान्यहर्गणेषु नुपपद्यमानानि मन्यन्त एकए ह्यहः क्रतु-  
 भूतं मविक्रताति भवन्ति न पुनरहर्गणेषु क मंहः क्रतुभूतं  
 विद्यते तत्रैकस्याङ्गो श्लेष इतरमा मभवे भेषजः कल्पो नोप-  
 पद्यते इतरथापूर्वं प्रथमादङ्गो नैवादाक्षिण्यं नुपपद्यते न पाञ्च-  
 दक्षिण्यं मिति । तदुं चेद् ब्रूयुरथवेतदेवाह दक्षिणं स्यात्तस्य  
 चेन्न पुनः सुतिः स्यादिति स दीचीपसत्कस्य वै क्रतोः प्रकृतौ  
 पुनः सुति मा ममतीति ब्रूयान्ते नैतन्नोपपद्यत इति ॥ ६ ॥

अथ तच्छायन्तीयं दक्षविभ्रष्टस्य ब्रह्मसामान्नातं तदन्वह  
 महर्गणेषु स्यादित्युक्ते श्रायन्तीयं ब्रह्मसामेति ह्यहः श्रायन्तीयं  
 ब्रह्मसामेति शोक्ते कि मन्य दन्वहकरणादेव प्रतीयामेति तदै-  
 तदुपपत्तेरताम्निपावमानौ चेद्द्वार्षिककल्पोऽन्वहकत्या मयसता  
 वैकस्मिन्ने वाङ्मनि क्त्वा मयहितेन मन्यन्ते श्रायन्तीयं मध्येकस्मि-  
 न्नेवाङ्मनि समद्विषयापुपपद्यत एवैष श्रायन्तीयादेश एकस्मिन्ने-  
 वाहन्वसम्भवादिपूर्वापरयोराकाशयोः पूर्वस्य प्रत्याज्यागो भव-  
 तीति क उ खलु विभ्रष्टस्य इति यः कश्च श्लेष इत्येके न देतन्नो-  
 पपद्यते संख्यां श्लेषं यद्ब्रह्मसु रागयेत सर्वेषु चेद्वरीषेषु पुनः सुति  
 रिव स्यात्पक्षेव विभ्रष्टस्या भवन्तीस्त्रीणां प्रमा निहन्नातुरवच्छेदः

सोमापहरणं सोमाभिदहनं सोमर्जत्तपवमं क्रतुविलोप एव  
 पञ्चमं एतेषु हि पुनः सूतिराज्जातः संयुक्तं तु खलु पुनः सूति-  
 विभ्रंशेति हि यस्मिन् क्षेत्रे यन्नक्रतौ विभ्रंशेति तत्रैव तस्य प्राय-  
 श्चित्तिरिति हि भवतीति कियति कालात्यये विलोपो भवतीति  
 यत्राग्निहोत्राहुतौ अन्योन्यस्याः स्थानं मापद्यते यत्र दर्शपूर्ण-  
 भास्ते युत्र वापि कृत्स्नं सुत्याहः परस्याहः स्थानं मापद्यते काहो  
 वा परमाहिरित्याह रिति तदु चेद् ब्रूयुर्येत्किञ्च कर्त्तान्यस्य  
 कर्मणः स्थानं मापद्यते विलोप एवैवं वादस्य स्यात्तदेव मन-  
 वस्थाविलोपानां संग्रहिति तत्र ब्रूयात् पूर्वपक्षादिस्थानस्या  
 भावात्स्थानपरपक्षापादने विलोप मध्ययव आमनन्त्यपरप-  
 क्षादिस्थानस्य पौर्यामासस्य पूर्वपक्षापादने हरादिस्थानायाः  
 प्रातराहुते रात्र्यापादने रात्र्यादिस्थानायाः सायमाहुते रक्ष-  
 रापादने एतेन मन्यन्ते ऽहरवराध्यं वा कालात्यये विलोपो  
 भवतीति त्वयं ज्यायस्यभिजानन् ह्ययं न हरन्तरात् काला-  
 त्ययानेतद्वरार्थं विलोप मान्नासीदिति ॥ ७ ॥

• यदि सत्राय दीक्षेरन्नथ सामुत्तिष्ठेत्सोम मपभन्तुं विश्व-  
 जितातिरात्रेण यजेत स्रववेदमेनेति भवति स खलु विश्वजिष्य  
 कामादुत्तिष्ठतः स्वाद्यत्र त्वेनं ससत्रिषो बध्ना ऽन्यत्र वा यजो  
 विलोपः स्वाद्यत्र वेनन्तद्रूपो व्याधिः स्पृशेदेनास्तः सत्रं प्रायश्चा-  
 ष्णं तवदुत्याय विश्वजितातिरात्रेण यजेत कामापत्तिषु किं  
 प्रायश्चित्तं विधीयत इति तदु चेद् ब्रूयुः पश्चामो नापदि कामा-  
 दुत्यानं यथा दृशसु मार्सेषु गवां षट्सु वातवतः सप्तदशेषो  
 नैमिषीयानां नित्यवेत्तयं वै खलु वा दधानां पद एवोदस्या-  
 श्चिन्नोपागुपवाद्दरूपं ह्यस्य प्रायश्चा ऽमध्यं गावेषु नैमिषी-



यास्य वेलाग्र्यहेत्यवर्ष एवोदंस्यास्वन्नृषयो ह्येव गावो बभूवुस्तथा  
 नैमिषीयाः आर्षस्तुः खलु सर्वत्र प्रमाणं भवत्यर्थापि सिद्धिं मेव  
 गवा मांमनति तथ्य नैमिषीयानां नरे खलु विलोपे सिद्धि  
 मांमभ्यदिति तदु त्वेद् ब्रूयुर्येऽनः प्रजाया मृध्याते स एतत्  
 सत्त्वं समापयादिति विलोपानुवादरूपं ब्राह्मणं मितुपपद्यते  
 वा एतद्विलोप एव ब्राह्मणं वेला हि यत् प्रजायै ज्ञायः  
 सप्तपर्वा साञ्चिष्यन्त इति ते खल्वेते द्वे पर्वणी सत्रे तथा त्रिपर्वा  
 ऋषीतिष्टोमसप्तुष्यर्षणि सारस्वतानि तादृशं मेतद्भवति ॥ ८ ॥

स खलु विश्वजिज्ञदीचाभ्यनुत्तिष्ठतः स्यादित्येके सोमाप-  
 भागेन जानीमोऽक्रौती हि दीक्षासु सोमी भवतीत्यपि दीचाभ्य  
 इत्याचार्याः सासुरत्यांनकारितो हि भवतीति यहतकोमाप-  
 भागेन जानीम इति क्रौते सोमे संयुक्तो भवति नाक्रौते तद्यथा  
 विश्वजिज्ञा धर्मा एकाहे ऽहःसंयुक्ता भवन्ति नाहर्गणेषु तादृशं  
 मेतद्भवति तत्र कथं सोमक्रयं इति न विद्यत इत्येके विश्वजिति  
 चेद् हिः क्रौतव्यो भविष्यत् क्रिमर्थः सोमापभाग मान्नास्यदित्य-  
 थापि सोमसंस्कारार्थः सीमक्रयो भवति सोऽयं पुरस्तद्देव संस्कृतो  
 भवतीति क्रत्वङ्गलोरेपो ऽक्रौयमाणं सीम इत्याचार्याः क्रौतव्य  
 एवेत्यथाप्याह सर्वस्या एव दीक्षते सर्वं माप्नोतीति स योऽन्या-  
 दीक्षापसद् आमनन्थान्यं सीमं न क्रौणीयाद्ग्रावात्तदुपोऽन्यस्मिन्  
 सुक्रौते सात्त्विकं सीमं अपि सृजियुर्देतत्क्रिमर्थः सोमापभाग  
 मान्नास्यदिति सप्तसमाप्ति मेतदीपाप्रुबन्धन्यत एवं पश्यामः  
 साद्यस्तेषु सद्यस्कृते सत्यान्वे दात्तं यस्यापि सर्गात् सद्यस्त्व  
 मान्नायमानं तादृशं मेतद्भवति यदि चऽपि सोमसंस्कारार्थः  
 सीमक्रयो भविष्यत् क्रौते सीमेऽपहृतेष्वः पुनः क्रौतव्यो भविष्य-

दपुंसः क्रयण मु खलु दशयति स खल्वेकस्योसिष्ठत प्राज्ञातस्त  
त्वर्थसाम्भन्वात् सर्वेषा मध्यच्छिष्टतां प्रतीमः प्रतीमः ॥ ६ ॥

यदि पर्यायेऽस्तु सभिव्युच्छेदिति तत्त्वर्थसामान्यादप्ये-  
कस्मिन् पर्याये प्रतीमीऽपि द्वयोरभिव्युत्साच्छ्रमाना इत्या-  
र्थ्यकल्पोऽनभिवासाथी हि रात्रिसएरीधो भवति यद्वेतदभि-  
व्युच्छेदिति ब्राह्मण मपेय विभक्त्यपनिपाते एव स्यादभिव्युच्छे-  
दिति त्वेव ग्राह्यायनिब्राह्मणं तथा भाङ्गविनां तथा भालवविनां  
तथा तैत्तिरीयाणां कथए सर्वेषां विभक्त्यपनिपाते एव स्याद-  
थापि चेदनभिव्युत्साथी रात्रिसएरीधो ऽभिव्युच्छेदपरिमितः  
'स्तोमी ऽभिव्युच्छेदथा नाभिव्युच्छेत्तथा सुवीरन्नित्यभिव्युच्छेद-  
भिव्युत्साथी रात्रिपरिमाणं सुपपद्यते ते सु परिमाणेनेव स्तोमस्य  
जानीमो व्युष्टा संयुक्त एवायं कल्पो भवतीति क उ खलु गर्भ-  
विरात्रे प्रथमस्य रात्रिपार्श्वः स्तोमः स्यादिति पञ्चदश इति  
पञ्चदशभिर्हीत्रेऽस्तुयुः पञ्चभिः पञ्चभिरितरेभ्य इति ह्याहेति तदे-  
तन्नोपपद्यते पश्यामः प्राज्ञतान् कल्पन् प्रयहते रन्वान्नायमा-  
नायथेतदजोऽनीधोमीय ऐन्द्राभिरुता उक्षाणो मारुत्यो वृक्षतर्य-  
सक्री वत्सदक्षक्रीवद्वेविर्षान् मिति चैतेन मन्थन्ते पञ्चदशभिर्हीत्रै  
सुयुरित्यपि प्रायहते रन्वान्नाज्ञातो भवति तस्मात् षोडश  
एव स्यात् ॥ १०

अथ खल्वर्वाक्सूवातिष्ठवीपत्रं स्तोत्रं मधिंक्तव्यं भवत स्तोत्रार्थ-  
सामान्याऽसामान्यस्तोत्रेऽपि प्रतियन्ति प्रथमे चेत्यर्थायेतिष्टुतए  
स्वादुत्तरयोः प्रतिनिरखेयुः पूर्वयोर्वातिष्टुत मुत्तमे चेदतिष्टुवन्तो  
विगीतावीए स्तोत्रायै प्रस्तायांश्च रत्नसमाप्ये व तां विरमेयुर्न  
च तेनातिष्टुतं भव्येत् यद्यर्वाक् सुयुः प्रीतिभिर् सुयुर्यदतिष्टु

युर्वीवतीभिरितिष्टयुरिति हि भवतीति कक्षाणां स्तोत्रीयाणां  
 मधिकारी भवति न स्तोत्रीयतार्थानां मित्यर्थात् एतच्च स्व-  
 जपिता खच्छिद्रासु बुध्येरं सुवीरभिव ताभिः स्तोत्रीयाभिरिति  
 मन्थनी व्यवायी हि स्तोत्राङ्गैः स्तोत्रस्य न्याय्यन्तरो यथा चेत्  
 स्तोत्रीयालोपोऽथाप्येव सत्युत्तरं स्तोत्रं यथाप्रकृति भवत्यथे-  
 तरथोर्भे एवायमप्रकृते भवतस्तावन्तीभिर्वातिष्टयुर्भूयोत्तरं भि-  
 वेति सच्छिद्रस्या अधिकता मनान्त एव मिव च ह्येतस्य  
 वाक्यस्यार्थो भवत्ययने तच्च प्राकृताच्छिद्रायोगाद्भवति तदप्या  
 स्वारंशोऽयोः क्रियमाणयोर्निवाचरसामान्यत्वात्स्य सुपपद्यते न  
 ह्यन्तःसामान्यात्साम्यं तादृशमेतद्भवति समानस्तोत्रे चेत्  
 स्तोत्रीयाविपर्ययः स्यात् अतः स गणयितव्यं आनुपूर्व्यार्थं न  
 ह्यभ्यावर्तमाने स्तोत्रातिरेकः स्यान्न आनुपूर्व्यं न व्यवाप्येत तत्र  
 सर्वप्रयत्नमेव स्यात् ॥ ११ ॥

तं चेदसुते गायत्रेण संहितस्यैकस्याः स्तोत्रीयायाः  
 सुतायां बुधेरंशसमापयेयुरेव संहित मिति मनान्ते स्तोत्र-  
 सम्बन्धानि हि नानां सामानि पूर्वमानेषु भवन्त्येवान्तरसम्बन्धस्त-  
 वत्यं सामं बाह्यतर उ खलु सम्बन्धा व्याहन्त्यन्तरो यथा चेद-  
 वान्तरसम्बन्धोऽप्येतरथा ह्युच्ये संहितं पुनः प्रयोगे भवति  
 तदुच्ये सामं विद्यत इति तदु चेद्बुधेरथ वं गायत्रस्य च सन्नि-  
 यातः स्यात्सुखं च तज्जामि स्यादिति विद्यते जामिकल्प इत्या-  
 हुर्वीवतीषु च गर्भिषु च तदप्यद्विद्यते तदेव संशये प्रत्येतव्यं मित्यथ  
 यत्तस्मिन् स्तोत्रे द्रव्यं न विद्यते चेत्प्रमत्ताः सुवीरन च तेना-  
 तिष्टुतं मन्येत नित्यरनां ह्यथ द्रव्याणां मधिकारी भवति ना-  
 नित्यानां न अनित्यानां लोपे प्रायश्चित्तं मा मनतीति ब्रूयाद-

द्यापि यः सर्वेषां द्रव्याणां अधिकारं मन्येत सर्वेषां मपि स्तो-  
 मार्गा अधिकारं मन्येत तस्यैवं नार्वास्तवातिष्ठवो स्यातां मद्य  
 खलु विहांस्तीमं संसृज्यादित्येके काम्यापत्तिषु हि प्रायश्चित्तं  
 विधीयते इति नाभिद्रुषां संसव उपपद्यत इत्योहाहमाजिर्न हि  
 ज्ञानाविषये संसवः स्याद् दीर्घत्वादीध्वना विहांस्त्वेव संसृज्यादृ  
 यत्नासथुसुन्वन्यज्ञात्ययाच्छङ्केत यद्देतदंकोमरपत्तौ प्रायश्चित्त  
 मिति पश्यामो न काम्यापत्तौ प्रायश्चित्तं यथाहितान्तेः प्रवासजा  
 मिष्टिं तादृश मेतद्वधति ॥ १२ ॥

महति रात्रेः पुंस्तरनुवाकं सुपाकुर्यात् पूर्वो वाचं पूर्वच्छ-  
 न्दासि पूर्वो देवता वृद्धन्ते पूर्वोऽभिषुण्युरिति तां न पूर्वचिकीर्षां  
 मनेप्रतेवं पूर्वकल्पस्त्वेषु भवति वैद्वि पूर्वचिकीर्षां भविष्यत् पूर्व  
 प्रातरनुवाकं सुपाकुर्यु रित्यभविष्यत् तु काज्ञनियोगात् प्रातरनु-  
 वाकस्य जानीर्मां न पूर्वकरणात् पूर्ववादा भवन्तीति नद्यापि  
 पूर्वकरणं कृतं मनेप्रताशक्यमाने स पूर्वकरणेन प्रायश्चित्तं कुर्यात्  
 परेषां हि देवतासु परिगृहीतासु देवतापरिगृहीतार्थं प्रतिजा-  
 न्मानः कस्मात् कुर्यात्तदन्वह महर्गेषु स्यादित्येके हरयेत्सूये-  
 तैति कृत्वादात्रिवेत्योहाहमानिस्तच्छ्रायन्तीयेनेव व्याख्यातं तत्र  
 व्युत्पद्यः स्युस्त्रिष्टुभगतौरेव वृषण्वतीः कुर्यादेवं प्रायश्चित्तं च  
 कृतं भवति व्युत्पद्यानुगृह्यत इति नियुक्ता वा प्रायश्चित्तकल्पेन  
 वृषण्वती भवन्तीति चेज्ज्योतिष्टोमे ता नियुक्ता भवन्तीति ब्रूयात्  
 तद् यथा सर्वेषु प्रायश्चित्तानि ज्योतिष्टोमं श्राव्यायमानानि  
 सर्वत्रगाणि प्रतियन्त्येव मप्येतद्वृषण्वरूपं ज्योतिष्टोमेषु नियुक्तं  
 सप्तवर्षगमतीमोऽद्यापि य एषाः सर्वत्रगा मनेप्रतं षडे द्वाश-  
 रश्रित्येके ऽवित्तददृषाहरिति सप्तवर्षे वैद्विष्यवमाने चाभवे पान

पुनः समानाहनि स्तोत्रोपाधुधारो विद्यते ऽन्यत्र विद्यमानात्त-  
 देतन्नीपपद्यते यदि ह्येना ज्योतिष्टोमे नियुक्ता मनेयत सर्वत्रैवेना  
 नियुक्ता मनेयत न ह्येतदुपपद्यते समानस्यादेशस्यान्येषु क्रतुषु  
 नियोगो भविष्यत्कृतेषु प्रयव इति यद्यु वै ज्योतिष्टोमेऽपि प्रयवं  
 प्रतीया दनेषा मथादेशानां प्रयवम्प्रतीयादयथां स्वाराणा मति-  
 हवे चोडाना मर्वाकसूवे वैष्णवीयानां मनुष्टुभां कलशदरणे  
 यामानां स्तोत्रकल्पार्थमिति ब्रुवन्नाथैककल्प मभित्तयामत्रेति ब्रुव-  
 त्सदृशं व्याहृत्यात् कस्माच्चन प्रायश्चित्तेन व्यहो व्याहृत्ये ताथै-  
 षस्ते इति प्रतिपद मिव वृषखतीं कुयोदसञ्चाराय पिकल्पो ह्येवैष  
 भवति प्रतिपदां वृषखतीं कार्यां सवनमुखेषु चिति सवनमुखेषु  
 चिति ॥ १३ ॥

॥ इति उपन्यसूत्रे प्रथमः प्रपाठकः ॥

॥ अथ द्वितीयः प्रपाठकः ॥

॥ हरिः ॐ नमः ॥

यदि सोम मन्नीतः मृषहरेयुरनाः क्रेतव्यं इत्येतावदेतन्न-  
 वति तत्र न प्रयश्चित्तं विद्यते दीक्षितं भागमयेतासोम-  
 साभादपि गिरिन्धावेयुरित्यपि शांखायनिब्राह्मणं यदि क्रीतं  
 यो ऽनेया ऽभ्यासश्च स्यात्त ग्राहृत्यो न दूरादाहृत्यो न ह्युपसदां  
 विकर्षो विष्टृत इतीवार्था भवति स खल्वीत्तमा दाध्यायनकासा  
 द्वागमयितव्य इति मन्त्रान्ते प्रत्यक्षाभिषवो हि ज्ञायान् भव-

त्याद्यायमानानां यथास्थानकरणादिति तद् यद्येतत्प्रत्यक्षाधि-  
 गम्येत यदि परोक्षो नैवेन पुनः क्रीणीयात् पूर्वस्यैव हि स  
 क्रयणक्रीते भवति सोमविक्रयिणे तु किञ्चिद्द्वान्न पुनः क्रीतव्य-  
 इति वार्धो भवति क्वात्साय तु किञ्चित्कन्देय मिति श्राव्याद्यनिः  
 ब्राह्मणं तच्चेद् यजुष्कृते परोक्षे प्रत्यक्षाधिगम्येत परोक्षेणैव च  
 येयुरिति मन्यन्ते न हि यजुष्कृतस्यापघातो विद्यत इति प्रत्यक्षा-  
 लाभादेव हविषः परोक्षो भवतीत्यपरं प्रत्यक्षं मेव प्रयुञ्जीदन्नि-  
 त्यथाप्यनया यो यत्नवत्तरं वा परोक्षेणैव वर्त्तयेयुरिति यद्देतन्न  
 यजुष्कृतस्यापघातो विद्यत इति पश्चाभा यजुष्कृतानां मात्रा-  
 व्यापादाद्दहविष्यानाम्नायमानात् पञ्चगारद्वये यथा ते मात्रा-  
 व्यापादीद्दहविष्या भवन्त्येव मपि प्रत्यक्षेऽधिगतेऽहविषः परोक्षो  
 भवतीति स खल्वधिगमनं तदेव प्रत्यक्षं प्रयुञ्जीतानभिषुतश्चेत्  
 परोक्षः स्याद् यद्य वा अभिषुत उत्तरस्मिन्नभिषुतकालेऽभिषुतयु-  
 रथ परोक्षं मपो वाभ्यवहरयुः सक्रदेव वा सर्वं मभिषुतयुः तच्चे-  
 दनभिषुते परोक्षे प्रत्यक्षाधिगम्येत तन्न सर्वप्रायश्चित्तं मेव  
 स्यात् ॥ १० ॥

सन्निपाते हीतरदीन्नात्वं भवति क्रीतस्य चापहरणे परो-  
 क्षाभिषवे च तन्न विप्रयोगे कृत्य मथ खलु सत्वेभ्योपेयात् पाञ्च-  
 दक्षिण्यं सामं प्रायश्चित्तं तु क्रियेत्येके तद्यथैतद्हीनेकाह्वानां  
 सत्राख्यापदप्रमानानां दक्षिणा अपयन्ति तादृशं प्रेतद्वति नं  
 तु प्रायश्चित्तानां मन्त्रावलीपेन वृत्तिं पश्यामः कत्स्नानि ह्येव त  
 मर्थं साधयन्ति तद्यथा दृश्यप्रायश्चित्तं मूर्धं ब्रह्मसाम्नोऽतीत-  
 कालं ब्रुवते ब्रह्मसामान्यया देवं मपि पाञ्चदक्षिण्यस्यासिद्धे  
 सामयोगोऽपि न सिध्येत्तत्र सर्वप्रायश्चित्तं मेव स्यात्तद्ये त तृतीयं

सवनात् सोम मण्डहरेयु रीमाध्यन्दिनात् सवना. दुषनिष्ठत्वं  
 माध्यन्दिने सवने ऽभिषूण्युरिति मन्थन्ते न हि तृतीयसवने  
 सोमसंस्कारो विद्यते इति तदेतन्नोपपद्यते यदि ह्येन मापदो  
 हेतो रसंस्कृतं पुरस्तात् माध्यन्दिने सवने ऽभिषोतव्यं मन्थेतायेन  
 भापदो हेतोस्तृतीयसवन एवाभिषोतव्यं मन्थेत न च हि साधु  
 कृतस्योपनिवृत्तिर्विद्यते ऽपि च तृतीयसवने तैत्तिरीयाऽजोधा-  
 भिषुः सामन्वन्ति पयो वा हिरस्थोदकं वा प्रतिनिदध्यादित्यपर  
 मतो ह्यनभिषवकाले सोमप्रतिनिधी भवत इति यदि तु द्रुत-  
 भृतिसोमसंस्कारो विदेरतायैतदेवं स्याद् यदेव वै पूतभृदपि हतः  
 स्यादन्य मेवाभिषूण्युर्न ह्यविद्यमाने सोमातश्चने पयसि वा  
 हिरस्थोदके वा सोमत्वं सुपपद्यत इति ॥ २ ॥

यदि कलशो दैर्घ्येतेति भवति त मेके पूतभृदाधवनीययो-  
 रर्थधिकारं मन्थन्ते कलश इत्युक्ते सर्वेषां सोमधाराणां कतरं  
 मनुकतमं मनेमहीत्यनियुक्तं तु पूतभृदाधवनीययोः कलशत्वं  
 कुम्भाविति हि वयं मन्त्रोर्महे ऽथापि पश्यामो द्रोणकलश मेवा-  
 धिकृतं तस्य कलश उपदस्यतीतेनेन वचनेन पूतभृदाधवनी-  
 ययो रदौर्णयो रूपसदनं विद्यते यावान् ह्येतयोः सोमो भवति  
 तद्वरेव तावान् भवति तदादेव कलशो दौर्णः सिध्येत तदिदं  
 प्रायश्चित्तं कृतं नैवादौर्णं सिध्यमनेनोप वा सिद्धे दौर्णे ऽथ  
 सोमातिरेकात् स्त्रीवोपजनः सवनसंस्थास्त्राग्नी भवत्यग्नि-  
 ष्टोमातिसाकडोश्च तत्स्वर्धसामान्यादित्सास्वपि संस्थासु प्रतीरः  
 स खलु नाविद्यमानात् संस्थां प्रथमेत्तस्य तस्य कर्तोऽर्षोति-  
 ष्टोमं त्वर्धकृत्य प्रायश्चित्तान्यान्नायत्ते तस्माद् न ष्वोतिष्टोमीः  
 संस्थां प्रथमाकर्तोति िर्धेऽप्यस्य वेत् कर्तो ष्वोतिष्टोमीः

सप्तम्याया प्रतिरिच्येत द्वितीयां वा सप्तम्यां प्रथयेदेकस्तोत्रं  
वोपदध्यात् ॥ ३ ॥

तच्चेदुक्तं सप्तम्या दतिरिच्येत विष्णोः शिपिविष्टवतीषु गौरी-  
वितं चतुर्थं मुक्तं कुर्यादकृतं चेदहःकल्पे स्यादथ चेत् कृतं  
मच्छावाकसामजातीयमेव शिपिविष्टवतीषु कुर्यात्तच्चेत् षोडशिशि-  
सप्तम्यादतिरिच्येत विष्णोः शिपिविष्टवतीषु गौरीवितं द्वितीयं  
षोडशिसाम-कुर्यादकृतं चेदहःकल्पे स्यादथ चेत् कृतं षोडशिशि-  
सामजातीयमेव शिपिविष्टवतीषु कुर्यादथ वाजपेये कृतं मेव  
गौरीवितं भवति कृताः शिपिविष्टवत्यस्तच्चेदन्त्यामिष्टमः शिपि-  
विष्टवत्योऽधिराम्येरस्तासु बृहन्निधनं वाकजभ्रं कुर्यात् कल्प-  
बृहहा यदु वैन्न त्रिष्टुभोऽप्यस्मच्छन्दस्याः शिपिविष्टवत्यस्त्वैव  
यदु न शिपिविष्टवत्योऽपि वैश्वव्य एषा ह्येवात्र देवता प्रयु-  
ज्यते तच्चेद् बृहत्सन्धिषाम्णांतिरात्रादतिरिच्येत विष्णोः शिपि-  
विष्टवतीषु रथन्तरं द्वितीयं सन्धिषाम् कुर्याद् द्वितीयं  
सन्धिषाम् क्रियमाणं किं मन्यद्रथन्तरीदेवं प्रज्ञायांमोऽथामोर्वाग्नि-  
गौरीभक्तमेव शिपिविष्टवतीषु कुर्यात्सिधो हि तिरोरारात्रौ-  
णस्योपसञ्चार उपसञ्चारः ॥ ४ ॥

नेदिष्ठिनि दौक्षिते प्रेतस्यैव पूर्वपूर्वैः सह नामान्ति-  
गृह्णीयुः संवत्सरेऽस्थीनि याजयेयुरिति भवति त मेव उभयोः  
प्रेतकल्पयोर्मन्यन्ते इत्यस्याने ह्यान्नाता भवत्युपरस्यैवेत्यम-  
मेकदयुक्त्युरिति हि पूर्वं कल्प मपहन्त्योत्तरेण संयुज्यान्नातो  
भवति स खलु संवत्सरे जियुक्तो भवति यदु हेमण्ड सपिचः  
कुर्वुः सन्नान्ताकत्रसदं गणयेयुर्यदु नेदिष्ठौ प्रायश्चित्ता दह  
प्रायश्चित्तात्तरीणीस्त्रियाजनं च प्रेतस्यैव दौष्येरेत त्वेषदन्ति



होतुः ह्येत न दर्शपूर्णमासाभ्या मिष्येत प्राणावभृथे ह्येषोऽग्नि-  
होवाहुत्योश्च दर्शपूर्णमासयोश्च सन्ध्यास्तस्मात् प्रेते कर्त्तव्येऽती न  
आहारा न प्राणावभृथा भवन्ति तस्मात्ते प्रेता अपि समापयि-  
तव्या असन्धितः स्तोत्रं स्यादिति भवति तत्रैकेऽसमीष्य स्तोम-  
स्येमात्स्वः सुवीरं नित्यसन्धितं प्रतियन्तुपपद्यते च यज्ञस-  
यस्वः कर्त्तव्यस्वः च स्तोमाना मपि प्रेत्यासन्धितं ब्रूयादेव  
मसन्धितं भक्तौति न त्वे वैवं पर्यायधर्म आराध्यते न विष्टावधर्मो  
न ज्योतिष्टोमानि च तर्कान्मान्नुर्ध्वं वै त्रिहतो याथाकामौ  
स्तोमानां स्तुतिर्दित्यपरमेव मेतत्सर्वं माराध्यत इति तत्र त्रिहतः  
प्राग्ने दृग्निप्रभृतीनां याथाकामौ स्यात् षोडशप्रभृतीनां पञ्च-  
दशस्याष्टादशप्रभृतीनां सप्तदशस्य षाविंशप्रभृतीना मेक-  
विंशस्येति ॥ ५ ॥

क्षेत्रे उपदस्ते हिरण्यमेवापोऽभ्यवनयेद्विरण्य मभुन्नये-  
दिति भवति द्रोणकलशे हिरण्यमवधाय तत्रापोऽभ्यवनयेयु  
हिरण्यमेव चमसेष्वत्रधाय तेष्वपोऽभुन्नयेयुः प्राणर वा आपो-  
ऽमृतं हिरण्यममृत एवास्य प्राणान्दधाति स सर्वं प्रायुरेतीति  
भवति नारायणस्य उपवायते तस्यासु भवनयेदित्यस्य भवनये-  
दित्यर्थं मन्यन्तेऽसु मिति हि भस्त्रहस्त्रिणाजा मृत्युं भावयते यदि  
पीतापीती शोभो सुकृच्छेयाता मिति, हुताहुता विव्यर्थं मन्यन्ते  
न भक्षिताभक्षितौ न च ह्यच्छिष्टं ह्योमो विद्यते उपपद्यते च हुता-  
हुतयोरेव पीतापीतत्वे हुते ह्येवाभक्षिते पीतवन्नन्नवर्णा भवन्ति  
यदेवेन्द्रपीतस्यत इन्द्रियावत इत्यस्य स्वस्ववहृष्टमचीनाजानु-  
च्छन्दो नादियति तद्यस्य छन्दसः कालः स्यात्तच्छन्दसा भक्षयेयु-  
रिति सन्धते तदेतन्नोपपद्यते यद्वाव मभविष्यत्तच्छन्दस इति

वान्वास्यदच्छन्दस इति वा यथामुष्यरीण्यायेत्यंजाजानन्न राजान  
 मामनन्वथापि विक्रतो भवति तद्यथास्मिन्विकार एव मप्यस्मिन्न  
 च्छन्दस्वाविकारोऽथापि चेदनाजानच्छन्दो नादेत्यदिदं  
 पीतता मपि नादेत्येव त्विन्द्रविन्द्रपीतस्थेत्याहेते न मन्वन्ते  
 प्रस्थित मधिकृत्यामनन्तौति प्रस्थित सु चेज्जानत्किलैवच्छन्दो  
 भादिशत्युच्छन्दस्वादेव भक्षस्य यंस्यो हेतोः प्रस्थितं मधिकृत्या-  
 मनन्त्वन्वयस्थान आन्नातं सर्वस्तोत्रेषु प्रत्येष्यतीति ॥ १ ॥

तत्र नाराशंसानां मिन्द्रिन्द्र मवागात्तस्य ते देवतेः पिष्ट-  
 भिर्भक्षितस्येति प्रातश्भवने समानं परं भवेत् काश्चैरिति परयाः  
 भवनयो रथ षोडशिन इन्द्र मवागात्तस्य ऐन्द्रं सहासर्जातिः  
 समानं परं मथ सन्धिभक्त इन्द्रिन्द्र मवागात्तस्य त इष्टयष्टुवष्टो  
 देवसोमस्तुतः स्तोमस्येति समानं परं मथ ख्वाज्येनाभुपा-  
 क्तस्य जुहुयादिति भवति यत्र सदसोऽनिर्हृतं नाराशंसस्य  
 स्तोत्रेषाभुपपकुर्युस्तदिदं प्रायश्चित्तं कृत्य किमु खलु होतव्य  
 मिति सोम इत्येक आजिनाभुपाकृतस्य जुहुयादिति स्वाहा-  
 जिनाभुपाकृते प्रायश्चित्तं जुहुयादित्यभविष्यन्न चेत्सोमाहुतिर-  
 भविष्यदनाश्वारस्त्वानीध्रिये सोमाहुतीनां न चोच्छिष्टहोमिह  
 विद्यतेऽथापि वषट्कारंपदानः सोमो भवति न च सोमः सोम-  
 देवतो विद्यतेऽथाप्याजिनाभुपाकृतस्य जुहुयादितुक्तेऽकिमन्व-  
 दाज्याहुतेरेव प्रतीयंमिति तदु चेद् ब्रूयु रजिन, स्तोत्रेष्वेति वर-  
 वितुस्याद्यो भवत्यत्र हि प्रथमं मभुपाकरणाङ्गयं भवति यदा  
 अत्रक्यं सर्वं मधिकृत्यान्नातुं तदन्वयस्थानं प्रामनतीति ब्रूया-  
 दयेद् स्तोत्रास्यधिकृत्यान्नातं भवत्यथाप्येति कात्यायनीयाना  
 मध्यय्यां स्मृतिव्रतं भवति यस्य चमेसोऽभुपाकृतः स्वाक एन

सुत्तरसदसि. चावस्थाप्य पूर्व्या द्वारा सदसोपनिषत्स्य पुरस्ता-  
दान्नीध्रीयस्य निधायाज्यं जुहुयादिति यद्ये तदाज्येनाभुपाकतस्य  
जुहुयादिति ह्यजीरनाभुपाकते प्रायश्चित्तं जुहुयादिति वा  
एतदुपपद्यते ॥ ७ ॥

१०. सोमोऽभिदग्धे सोममभ्यन्यभिषुणुयुरित्यध्वर्युर्ब्राह्मण मन्वाभि-  
रोषधिभि रभिसंस्मृज्यतेति शाखायनिब्राह्मण मीदुमर्या  
भग्नापहृतोत्खलतदग्धपरुदाया मन्वा माहृत्य तथैवावृतीच्छृत्यो-  
ज्ञातानीध्रीयं गत्वा महाव्याहृतिभिर्जु हुयादथ खलु न बहिरवमृथं  
यूपविरोहणेऽभेषं मन्येतापि न कलशदरणे ग्रावापिशौरणे महा-  
वीरभेदन इति बहिरवमृथं भेषं प्रतीयायं इहैवं मन्येताथ  
यस्य विप्रुषिद्धप्रायश्चित्ता भेषाः पूर्वापरे युगपत्सन्निपातेयुर्यथा  
श्राद्धदक्षिण्यस्योत्तरीयोरवच्छेदयोः सन्निपातेऽसिद्धिप्रतिषिद्धानि  
सन्नेत्तराणि प्रायश्चित्तानीति विद्या दथ चेत् सर्वे युगपदिच्छिद्ये-  
रथसिद्धिप्रतिषिद्धान्येव ततोत्तराणि प्रायश्चित्तानीति विद्या दथ  
चेदनको ग्रावापि शौर्येण पूर्वस्मिन्वाभिषेजेऽपि क्षीभयोरुभयोर्वा  
सर्पेण्योः प्रतिहर्ताविच्छिद्येत यूपैकादशिनया वानिको यूपो विरो-  
हिर्दिभवेत् सन्नतं सकृत्कृतं प्रायश्चित्तं विभवेदिति ब्रूयादेका-  
द्येव स्तोत्रीया हीडमाताऽतिष्टयमाना सारं वा जनयति चीडं  
वाथ दक्षीषु सकृत् कृतं मेव विभवेदित्येतेमन्त्रामहे बहूनपि  
समानजातीयभेषात् सकृत् कृतं मेव विभवेदित्येतेन ब्रह्मणः  
प्रायश्चित्तं व्याख्यातं सकृत् कृतं मेव विभवेदिति तत्र याथावृत्तयो  
महावीराभिमर्शनं च तद् ब्रह्मा कुर्यात् प्रायश्चित्तित्कमुद्रताता वा  
प्रकरणादध्वर्युकर्मत्वे वैतन्मन्यन्ते एष च हि मृत्तिकाणा  
माहुतीनां होता अत्रावीरपरस्य भवत्यभ्यपि जीवातुमुत्संशया

सोमाहुतिर्विद्यते, न ब्रह्मणो नो मंहोऽनोरथराविम भवत इति  
भवत इति ॥ ८ ॥

पृष्ठाना मनुकल्पः अथमेऽहनि रथन्तरमोत्रे त्रिषिंधनमध्ये  
निधनयोः स्थाने तृच्ये स्थाना पतिष्ठेऽज्ञोहगौतिपृष्ठरहंसा-  
पुचित तस्माद् हृद्द्रथन्तरे एकर्चं न कुर्वन्तीत्येडकावमत्य मेकस्य  
बैखानसं वेदानुग्रहदृष्टान्तात् स्तोमासंभ्रवांश्चिह्नलभिदेकत्रिक-  
दर्शनेर्नित्यैर्वा सहैकर्चाः यज्ञगोह्रवमध्यो वा बृहत्यां साम तृचो  
नित्ये अन्तरानुष्टभि पृष्ठोदले ह्यौ प्रथमायाए सर्व एकर्चास्त्रिणि-  
धनमध्ये निधनानुष्टमहवृत्तेः स्वारात्सं नशयदृष्टेर्वेशालार्थी-  
हगौतिरेवं प्रायणीये त्रिवृत्ति स्थाने च तृचेषु पराणि स्तोम-  
संभ्रवोहगौत्यादिभिरागन्तूनि प्रत्यहं देवस्यवसमैधातिथपूर्वा-  
भीषधेहारायणकौलमलबहिषाण्यै हवहामदेव्यं मयासोमीयं व्यूढे  
मांगोयवं निधनवञ्चदानुष्टमानानुष्टपाग्निष्टोमसाञ्च सोही-  
निके स्वारे द्वितीयपञ्चमयोः शुद्धाशुडोसए समूहे प्राङ्घाभि-  
निधनवञ्च द्वागन्तु संयोगिनेकर्चानित्यानुग्रहस्तोमोपपत्ते स्तृषा  
कार्त्वा जामिस्थानपृष्ठान्वग्रहतिदर्शनैरागन्तु पृष्ठं चान्ते परि-  
स्वांगथां च प्रीगन्याद्धिति त्रिषाक्ती-चेदैडं चेदन्त्यं प्राण  
हांभ्यां निधनवञ्चत् पृष्ठं तृच्ये हृहत्यां माघाद् विपरीते पश्चि-  
चान्येत्यतिक्तत्य नरायस्य मागन्तु तृच्ये ऽशष्ट्रान्येधागन्तु  
हृहतीषष्ठे गौरीविंसादिपरीते व्यूढे ॥ ८ ॥

द्वितीयस्याग्नेव गार्धत मेकस्या मर्षादनुष्टभा वापञ्चक्रमोऽ-  
भिषेचनीयवसंथोत्तरयोर्जामि चेदन्त्येनेत्यनयोर्मध्ये विपरीते  
व्यासास मेकधन्तुच इति चतुर्थे वा ककुवादेयस्यै एकर्चा-  
स्तृषाणोतररथेण षष्ठे विपृष्ठाभिर्मानितत्वात् सुरस्तादुपरिष्ठा-

दित्युभयोः स्यादुपाङ्गपृष्ठान्याहार्यपृष्ठयोश्चैवं प्राच्यादिषु द्विसा-  
मत्वाच्छन्दस्य वारवन्तीयं स्यादुभयोः पवमानानुकल्पः पृष्ठानु-  
पूर्वेषु स्त्रीचौयानान्त्वद्वा प्रत्यक्षपरोक्षास्त्रिः सामानादेशा-  
च्चोभि पावमानिके रेवतीसंयोगाद्वास्त्वोत्थेन प्रत्यक्षार्थं दार्ढ-  
स्यते न परीक्षार्थं प्रत्यक्षाणीति प्रकृतिपृष्ठात्परोक्षाणीत्युभयतः  
पारीष्यात् प्रत्यक्षपरोक्षकक्षार्थात्रिभिर्दर्शनाच्चैकद्वेषे वा प्रत्यक्षेषु  
विष्टृतीनां पृष्ठाधिकारत्वादुभयेषां च दर्शनात् तु पञ्चमे  
मिदान् हि महाभान्त्रीष्वन्यदभीषत्कालेयानुकल्पइति चेतो-  
भयासम्भवादनुवक्ष्यकार्त्तत्वाच्च स्यात् विकल्पनियमात् सम्भवस्य  
द्वयमेव हि रथन्तराभीषत्तयौधजयानि सामद्वचोर्क्षाज्जामि-  
व्रतद्वद्गभिषत् रुद्रं त्रैकर्षाः पञ्चद्वहत्यां पञ्चगौडवाभ्या  
क्षवधाय चीन् पद्ममायां मेव द्वितीये तदादिबार्हताद्यादभी-  
वर्त्तनासेये यथाजाति षष्ठे तु हर्षेत्स सामद्वचस्ततोऽभिविध-  
नवत् पृष्ठं द्वितीयपञ्चमयोर्गायत्र मेकस्यां द्वितीयपञ्चमयोर्द्वि-  
तीयद्वितीययोः ॥ १० ॥

विश्वजिति प्रघ्नाताः पृष्ठदेशास्त्रेषु तस्य तस्य प्रद्वहस्य  
पृष्ठाद्यनुकल्पयेद् यथाभक्ति न पावमानिकानि पृष्ठव्यपदेशाः  
स्युः सुपुराभावादिश्वजिति प्राग्यत्र पृष्ठदर्शनादुभयसामानाया-  
त्वाच्चोक्तं प्रावापसंक्रमेणान्यन्दिनापदेशानि गायत्रीद्वहत्यो-  
येष्टोक्तं मजाम्भिकमेण विश्वजितेयव दर्शनात् सिमास्त्रिष्वन्यच्चैव  
मेवाभवे यज्ञायत्रीयं न्याय्यानि च द्वेष्वपाङ्गपृष्ठान्याहार्य-  
पृष्ठयोश्चैवं प्रत्यक्षाणां स्थाने परोक्षाणि हृद्द्वयन्तरपुरस्ता-  
दुपरिष्ठात्परोक्षोर्गायत्रां जराबीर्धीर्गन्तः सामद्वच एव मेक-  
ानुकल्पे रथन्तरद्वहतीमेष्टोतिग्रमन्धः सामद्वचः प्रकृत्यैव

आर्भवे गायत्र बुष्णिककुभौ वैकर्षीः सामलक्ष ममिता रथन्तर-  
 हहतीलक्षयोः प्राङ्ख्यादिषु यत् पूर्वोऽस्तदादिता हहत्यां पर्याय-  
 वदिति चेत् हृषा कार्यात् सञ्चाराभ्यां स्वैत्योऽच्छावाकस्य  
 पारवन्तीयं यत्तच्छेत् पृष्ठार्थे छन्दस्यहिफ्हास्वेकलक्षे त्वनिष्ठे म-  
 कामनी पाठिकनित्तने देवतमेदादेशानुगृहीतहहद्रथन्तरे  
 नित्यकत्वत्वात्सञ्चाराच्चानुगृहीतपरोक्षतरे यथाक्तं माध्यन्दिन  
 आर्भवे गायत्रा मेड् सीपर्णं सामलक्षन्त्या मनुष्टं नाद्यं हहत्या  
 परोक्षं हहद्रथन्तरपृष्ठस्य ॥ ११ ॥

साहस्राद्यात् पूर्वो सवने लतीथाहाङ्कानि श्येत् मित्कता-  
 बुष्णिकंप्रभृतिव्रतादेतस्मिन् पाङ्गापृष्ठान्वाहाय्यपृष्ठो तन्नामधेया-  
 ह्यत्रयी हहत्यां वैरुपाङ्कीनां श्रीचाण सामलक्षो बित्याद्येद्य-  
 तिहरेदनाम्यर्थेभारभणकत्वत्वादनुष्टं भिगोर्देवितात्तृचस्थानीति  
 चेत् पूर्वो एकर्चानुगृहीतप्रत्यक्षे जराबोधोयस्य स्वारणं सीपर्णे  
 शक्यो बृहत्यां समन्तस्य वैरुपं नित्यानुष्टुप् इति त्रैलोक्यवस-  
 पूर्वयोर्मेधात्प्रसमन्ते आर्भवे ककुभादेयस्य एकर्चा गायत्रा-  
 नुष्टं न्त्ये आर्भवीये यथा छन्द एवमेवोत्तरे प्रत्यक्षाणां स्थाने  
 परोक्षानुगृहीतप्रत्यक्षे च नित्यः सर्विपृष्ठानुगृहीत हि यथा  
 यतनं न्याय्यः कर्तान्ताञ्च सभार्याज्याद्यवर्तनीयानि च पृष्ठ-  
 संयोगात्कालेयवामदेय्यत्रयमज्ञीयानां चान्तानुग्रहं साद्यस्तेषु  
 यथा शक्यनुगृहीतं हहद्रथन्तरे चैवं हहत् पृष्ठं बृहद्रथन्तरपृष्ठ-  
 त्वाद्देराङ्क मनिष्ठोमसामव्यस्यनगार्थत्वात्स्य स्तोत्रीयं निष्के-  
 वल्येऽनुष्टुप्सयेहिराडनुग्रहाय च बृहद्रथन्तरपरोक्षयोसोभयतः  
 परोक्षार्थेभौवर्त्तकालीयेन्द्रकृतं नित्यइत्यनित्यः प्रधानकारात्  
 पृष्ठाणिष्टोमसोऽर्थोऽथायतनं मिति न यथास्तेमं साद्यस्तासौ

याम्णोः क्षणान्तादिति षडहे यस्तेनातिदेशाच्छ्रित्ये विश्वजि-  
तन्वद्यपत्नेयानुसञ्चाराच्चानुगृहीत बृहद्रथन्तरे दृश्यन्ते चोभय-  
सामतन्त्रे सप्तदशप्रं यथातोयाम्णि तत्र चेद् गुणात् सम्भ-  
तेन ॥ १२ ॥

० कृद्दोमस्तस्तीमयोरनुकल्पः पृष्ठातिदेशा एकविंशत्यङ्गेन-  
र्थात् प्रतिषेधाच्च नीचूराणि तनूपृष्ठे तदाख्यत्वाद्ब्रह्मजान्मथैकं  
सामान्यायजात् सप्तपारार्थानुत्तराणि द्विदुरत्येतत्प्रवीत-  
वत् स्यस्तु हादशपृष्ठदर्शनात्परस्ताज्ज्योतिर्ब्रह्मसाम्नि च पृष्ठदर्श-  
नाच्छेभपुरोहितयज्ञकोस्तनूपृष्ठ इति प्राधान्यादेकसामान्या-  
यत्वादिति बहूनि गर्भिषु वचसत्स्कारार्थं सधर्माणि विष्टृत्य  
नुपपत्तेर्महावैष्टम्भ भवावापेष्वितराणि स्थः सुतृचस्य स्तोत्री-  
यास्थानसंक्रमकुलार्थिनो चतुष्टोमग्निस्तोमसामदर्शनाद्ब्रह्मत्य  
स्तवर्भं च विष्टृत्यपंपत्तेः सप्तदशवर्षिर्द्विहाराः कुशादिधानं च  
तस्य प्रथोमः पञ्चभ्यो हिङ्गृत्य महावैष्टम्भन्तिसृष्टु रेवत्य एतस्यात्  
रथन्तर मेकस्यां पञ्चभ्यो हिङ्गृत्य शक्ररौभिमभ्रमः पर्यायः  
सप्तभ्यो हिङ्गृत्य वैराज मेकस्यां वैरूपन्तिसृष्टुं छहत्तिसृष्टुं वा  
सर्वेषां महावैष्टम्भ-भैव प्रथमो विष्टावो वैराजं मध्यम उत्तमो  
वैराजं मध्यम उत्तमः ॥ १३ ॥

॥ इति उपयन्वसूत्रे द्वितीयः प्रयोगः ॥

॥ अथ तृतीयः प्रपाठकः ॥

॥ हरिः ॐ ॥

अथ खलु वैश्वस्य वर्णकल्पे काकुंबुत्तय्यं कखरथन्तरस्य सम्भ-  
 द्ददिष्टं विद्याद्वैश्वस्य स्तोमं हिं सर्ववृहत्तोषु भवत्यथ यज्ञायज्ञी-  
 यानुरूपे ब्रह्मिष्यत्तमाने ब्रह्मिह्युर्नानामानत्वात्, सकृद्विद्यपरं  
 द्विह्युर्विकारात्म्यदुपपत्तिर्यद्ब्रह्मिष्यवमानेऽ सकृद्विह्यताभिः  
 पराशीभिः संवन्तीति वीपपद्यवे च द्विह्यारस्तस्या विशेषात्  
 साम्ने साम्न इति चेन्न विशेषण्युत्तस्य रथन्तरबृहत्पृष्ठं नोधसः  
 श्येतं ब्रह्ममामेति षोडशमाम्नि भवति तत्र खल्वाचार्या, षड-  
 चशी गायन्ति रथन्तरस्य पूर्वं देशं बृहत् उत्तरं रथन्तास्तांशोभे  
 नोधसस्य पूर्वं देशं श्येतंस्योत्तरं नोधसस्य स्तोत्रीयं एव  
 षोडश साप्रा भवतीत्यन्यायः सामेतरादीनां लोप इत्युद्गाहमानो  
 रथन्तरस्यैव स्तोत्रीये बृहद्रथन्तरे व्यत्यासः स्यातां नोधसस्य  
 श्येत्नोधसे यत्र हि त्रिस्रत्यश्चदेश इति वा मनति बृहद्रथन्तर-  
 पृष्ठः षडह इति त्रा व्यत्यासपयोः एव तत्र भवतुपपद्यते  
 च यदेकसामीकृत्य स्तवनात्, षोडशसामेत्यवश्यदथाभुभय  
 सामायं भवति कृत्स्नाभ्या मेवोभयसाम्य सुपपद्यते न सामेतरा-  
 दीभ्या मित्यथैके बृहद्रथन्तरं नाम समार्थीयते, तदिह प्रत्येतव्यं  
 षोडशसामेति द्वाहाष्टादशसामा ह्यभविष्यद्बृहद्रथन्तरयोश्च श्येत-  
 नोधसयोश्च क्रियमाणयोरिति तदेतन्नोपपद्यते न हि श्येत-  
 नोधसं नाम समार्थीयते न पुनर्व्याहरते करणीये ॥ १ ॥

अथैतेषु प्रवर्हिषु सप्तमयः सुभूडाहा प्रत्येतव्या व्यूडाहेति



समूहादित्याहुर्बोर्होमान् इत्युक्तान् प्रतीयाद्विष्टजगतीना  
 अस्य स्तोत्रप्रवर्हाः सवनप्रवर्हासं सुान्ती खल्वविष्टजगतीक  
 महः पश्चात्तोऽपि सवनप्रवर्हाणां चतुर्थे चारयेद् यथायज्ञीयं  
 माध्यन्दिने सवने तृतीयसवने च न पुनः समानाहनि सान्नः  
 संचारो विद्यतेऽन्यत्र गायत्र्यादिति व्यूहादित्यपरं व्यूहो हि  
 द्वादशाहस्य प्रकृतिः प्राकृतमो एवं प्रदेशा वर्तन्त इत्यथाप्यन्यथं  
 परिजिहीषेन्नत्याद्यं मेवा पद्येत यदैनानानुक्त्येन प्रदिष्टा-  
 न्नयेत 'प्रथमस्याह' प्रातः सवनं चतुर्थस्य माध्यन्दिने सवन  
 मिति चाह नो खलु बृहत्पृष्ठेषु राथन्तरः प्रातःसवनं विद्यते  
 न राथन्तरपृष्ठेषु बर्हितं तदुभयं वा न्यायप्रत्ययोपनयेदुभयं  
 वा देशबलः कुर्या दक्षपि यो द्वादशाहस्य दशाहानौति चापि  
 चाध्यान् द्वादशाहविचारान् यथाविराट् सम्पन्न मगुरुप्राम्नि-  
 ष्टोमसमानि मिति व्यूहात् प्रतीयवर्धेमात्समूहान् प्रतीयात्  
 तद्व्यवस्थात् ॥ २ ॥

अथैव आवापवानेकाह ऋत्विज मकास्यं मपोह्यान् चर-  
 यिष्यत इतोव मर्षी भवत्यथैते धाचसोसा बह्वन्यादित्याहुर्नि  
 भवत्येकं कल्पाहस्तेभेवैसाहा वचनीयाः न हीना अन्यैवेयं  
 तृतीया जातिर्भवति तद्यथा पातुर्मास्यानि राजसूयं च नेवे-  
 काही प्रसिद्धान्ते नाहीनो तादृशं मेतद्भवत्यथ यावद्भिराद्युगे-  
 रथ व्यंष्टिभ्यानि स्तोत्राणि वर्तिष्यमाणानि मन्वेतादित एव  
 शावन्ति वृषीत् तेषां सर्वेषां सोमप्रवाकप्रभृतिकर्मास्यान्ते  
 सर्वे सर्वाणाम्राट्कर्माणि कुर्युर्यथा द्वियज्ञवाहुयज्ञेषु सर्वे यज्ञ-  
 मानाः सर्वाणि याजमानानि कुर्वन्ति तादृशं मेतद् भवति  
 स्तोत्राणि त न सर्वे कर्षी एवोत्राता स्तोत्राणि भजेत्स

स्तोत्रं युक्त्याद्यः स्तोत्रान्तः स यजमानं वाचयेत् किं न्विमानि  
स्तोत्राणाणि न सर्वं कुर्यादर्थवान् सर्वं सर्वं स्तोत्रं भजन्त एव  
मर्षीमानि स्तोत्राणाणि न सर्वं कुर्याः केन त्विमानि स्तोत्राणि  
वर्तिष्यमाणानि मृत्योताभ्याहारावृत्तिभ्याः मिति मन्यन्ते तौवत्  
कृत्वो ह्युपनिवृत्तं तौवत्कत्वः सुवतइति सुवतइति ॥ ३ ॥

• अष्टौते षडहविचारेषु यत्र प्रत्यक्षाणोत्याह रेवतीस्तौत्रैके  
प्रतियन्त्यथ यत्र पुरोक्षाणेति तत्र वारवन्तीयं प्रत्यक्षं मितुरात्ते  
किं सन्त्यद्वेवतीभ्यः प्रतीयाभिति तासां हि पृष्टवादा विद्यन्ते  
स्थापि पृष्टस्तोमात् पृष्ठानि आवायन रेवतीस्त्ववयन्ति तक्षा पराक्ष  
पृष्ठोपाङ्गपृष्ठयारनुंष्ट होतंपरोक्ष इत्यथाप्यनुष्टोतपृष्ठे रेवती  
रेवानुष्टोतांतीति द्विष्टमेतदङ्गभवेतीत्यर्थं तद्यथा बहव एताहा  
उभयसामती भवन्ति तस्माध्यन्दिन एव संतीनां रेवतीनां पृष्ठ-  
वादास्तद्यत्रैव संतीनां रेवतीनां पृष्टवादास्तत्र संश्रयते  
प्रत्येतव्या इत्यथापि वारवन्तीयस्यैव पृष्टवादा विद्यन्ते रेवतीषु  
वारवन्तीयं पृष्ठं भवति तद्वारवन्तीयेन पृष्ठेन सुवत इति स  
वीवाद्बलः स्याद्वारवन्तीय मपि प्रत्यक्षं मेव मन्येताद्यपि यत्  
प्रकृते षडहे तदन्यतरादाने प्रत्यक्षं ब्रह्मनीयं कर्म हि वादेभ्यः  
प्रमाणतरं भवतीति तन्न मन्यन्त उभे एतेत प्रत्यक्षे भवतस्तयो  
स्त्वन्यतर मितुरेषां पृष्ठाना मनुधर्मि करोति तत्र न पराक्ष  
पृष्ठो रेवतीरनुधर्मि करोति वारवन्तीय मनुष्प्रान्निष्टोमसान्नि  
वन्निसासु पृष्ठे च षडह एतत्प्रमाणा एवेतरेषु षडहविचा  
रेष्वनतरदनुधर्मि कुर्यात्तरस्मिन् साधोयोऽनुधर्मित्व सुप  
पद्यतेति ॥ ३ ॥

कथं सु त्वित् षडहिकानां पृष्ठानां पंचमानगतानां साभ

योगिका धर्मा इति न क्रियेरन्नित्येके स्वस्थानानि हि भवन्ति  
स्थानस्या धर्मा इत्यथापि कथुं सु केवलस्तोत्राणि धर्मांस्तभेरन्नित्ये-  
थाप्यनन्तरांसे ज्ञाप्येद्वा न्वेषु स्तोत्र जपस्यथु वै पुरस्तात् स्तो-  
त्राच्चोपरिष्ठायां पुरस्तात् जपान् जपेदुपरिष्ठात् जपान् व्यन्वेयुर्जपा-  
दनगानि सामानीति कर्त्तव्या इत्याचार्याः सम्प्रयोगाद्देवता  
मेते धर्मा भवन्तीत्यापि स्थानादपेतानां क्रियमाणान् पश्यासो  
ब्रह्मसामपृष्ठे च षडहे ब्रह्मसामानि पृष्ठानि पृष्ठानि ब्रह्म-  
सामानि सस्तोत्रायाणि सधर्माश्चैतद्यापि स्वस्थानानि च  
भवन्ति ङीतुः स्तोत्र मपन्नान्यथापि स्वस्तोमानि भवन्त्यथापि  
इतिपत्नानि भवन्त्यथापि सश्रयो लोपो लोपात्रायतरो  
भदतीति यथा एतद्वत् सु केवलस्तोत्राणि धर्मांस्तभेरन्नित्येके  
केवल स्तोत्रे वै खलु बृहद्रथंतरे ब्रह्मे धर्मांस्तभेते यथा एतद्वत् व्युर्ज-  
पाव्यन्धानि सामानीति व्यवैति वै खलु बृहद्रथन्तरयोर्जपान् ब्रह्मं  
एतेन संयुक्तेषु व्याख्यातं यथा विश्वजिति विश्वजिच्छिष्यासो-  
र्याम इत्यावापभूतानि गर्भभूतानासायाम इति गीतमस्तेना-  
कर्त्तव्या इत्यावानुगृहीतौ पृष्ठे च षडहेऽनुगृहीतबृहद्रथंतरे च  
नालरे चतुरहे बृहद्रथंतरेयोः साम्प्रयोगिका धर्माः क्रियेरन्निति  
अन्यं न ह्यवान्तर्यविज्ञयोः बृहद्रथंतरेयोः साम्प्रयोगिकाः क्रियंते  
इत्यामेविति कथं विप्रयुक्ताना मपि न क्रियेरन्नित्येके सम्प्र-  
युक्ताना मान्द्रातान् कथं विप्रयुक्तानां प्रतीयामेत्यथापि बृहद्रथ-  
ंतरेयोः सम्प्रयुक्तो रिवेतरैः पृष्ठे रथ व्यतिवर्त्तनं च दुन्दुभाहननं  
च भवतो नासंयुक्तयोर्महानास्त्रोनां विप्रयुक्ताना मपि भव  
मुदघोषं मज्यंतेऽपि ह्यस्त्रोमे सं श्लाघ्याये धर्मा भवतपैति नन्वपां  
मिनयं यशुषा स्यात् ॥ ५ ॥

तान् खल्विमान् षडहविचारानि नङ्गभूतस्यैके भवन्त्ये यथा  
 ज्योतिष्टोमविचारान् हादशविचारानित्यथ यदि सात्त्विक इति  
 न्वनङ्गभूतेनोपपद्यते संवत्सराङ्गभूतस्येत्यपरु मन्त्रेषु हि बहवः  
 षडहविचाराः पृष्ठमन्तरूपयन्त इति सात्त्विकः संवत्सरा  
 ऽथ य एव संवत्सरे षडहस्य पृष्ठतो विचारास्ते विश्वजित इति तु  
 भवति दद्याहो निक इति तु संवत्सराङ्गभूतेषु नोपपद्यते हादशा-  
 हाङ्गभूते तूभय नुपपद्यते आहीनिके ऽथ यदि सात्त्विक इति  
 तस्माद् हादशाहाङ्गस्य स्वरूपैतरान् पृष्ठादत्र तच्चादशितो भवत्य-  
 सात्त्विकितेन च सात्त्विकानि तज्जातवैयानि प्रभातव्यानि भव-  
 न्युपपद्यते यत्सांवत्सरिके विचारि विश्वजितं प्रदिशेत् षडहसात्त्वा-  
 ज्याचान्तरं पृष्ठ मामनिन् ॥ ६॥

अथेतस्य बृहद्रथन्तरपृष्ठस्य हादशाहस्य नानदस्तोत्रीये गौरी-  
 विते षोडशिसाम स्यादित्येके पृष्ठास्तोमेन ह्येवं प्रदिशतीत्य-  
 थापि विराजा मपाया स्वराजोपयन्तीति हेतुं बृहद्रथन्तरपृष्ठ-  
 पया बृहद्रथन्तरपृष्ठाच्च ह्येव समूहं चाभिप्रे पृष्ठास्तोमेन प्रदि-  
 शन्तीत्येव हि सर्वं मेव पृष्ठास्तोमस्य प्रतीयाच्छब्दोभवत् सन् दश-  
 रात्रस्य सभायाः प्रथमादङ्गोपनयेन कश्चरथस्तरं समस्यं साध्य-  
 न्दिनादो मिति ब्रुवन् जामिकस्य भाष्येते नेति ब्रुवन्तस्त्वरं  
 व्याहृत्वां दशमपि यत् समुद्रुक्ता विराजः स्वराजश्चाऽविच्छन्नं वैराज-  
 पृष्ठादन्यत्र स्वराजोऽभविष्यन्न च वैराजपृष्ठे ऽन्यत् स्वराज्य-  
 षोडशिस्तोत्रीयसान्नां स्यादिति नन्वेवं न भवत्येते न मन्यन्ते  
 स्वराज एवेह प्रत्येतव्या इत्येकाहे प्राक्तताश्च भवन्ति न्याय्यतराश्चै-  
 ताश्चैवानादेशे सर्वकृतुषु प्रतियस्येतेनावच्छिन्नस्य बृहद्रथन्तरपृष्ठस्य

षडहस्य षोडशस्तोत्रीयो व्याख्यातो यथैव षडहदिवारेषु यथ  
सप्तसत्त्विति सप्तसत्त्विति ॥ ७ ॥

अथ क्वचिन्निर्घनानीडोपायांसूहाकृतिरूपोऽहं रहस्यवदध्यर्हा-  
स्वर्हीष्यति सोमान्वा पूजा वा काशीतारुं हृक्दाङ्गिरसदेवोदास-  
कुशानिष्वेकिने स्वरा मुञ्जाने मां न हन्तेति यथा निहतः स्तनेद्  
गुरुञ्चाभार मभिनिधायाभि त्वा पूर्वेति वषट्कारः कायमायां  
वाग गव्यो षु यः सखाय प्रायाहोन्द्रस्येन्द्रपृच्छु यथाप्प पिप्पिल  
मवपदेतापो वा प्रमित्वाय द्विष्कृत्य दिवं गच्छार ३ तद्वा दिवं  
गच्छा २३ इति वृष्टिकामस्येद् ग्रहकामस्य न कलेत्यभि वस्त  
दिभ्र जोहार्षिकैकस्त मिन्द्रपरे स्वर्ग्योतिषी पृथक् कुष्ठः को  
कृत्स्नविदोपशावदभि न् मिन्द्र इव दस्यूर ९ रमृणार ३४५ मूर्य इव  
दस्यूर ९ रमृणार ३४५ वजिन्सुवज्जीर ३४५ नपिषैव तेषा भिकं हे  
पूर्वं वीररे वा सर्वाणि आ समस्यान्नास्त मेव स्वरयेद्यथा वायांभस्त्र  
मन्त्युरपादन्सकिह्मिणीनां पृथक् द्योतानयोराश्चन्द्रार आश्  
न्नाश् आश्नार ३४५यि सप्तशानेषु यथाधीतं ब्राह्मणस्य सञ्चित्यै  
विजित्यै सञ्चित्यै सजित्यै जित्या इति क्षत्रियस्य सम्पुष्ट्यै पिपुष्ट्यै  
सत्यपुष्ट्यै पुष्ट्या इति वैश्वस्यौपगवयो रथकामस्तुं नानाभिवर-  
धीयेषु क्षान्यत्रान्नि ९ हीतेति यथा महादिवाकीर्त्यस्थान्तोऽन्ततो  
निर्बलं पाद्विप्रेतिः कार्त्तरीक्षी च त्रयो विकल्पा दयित्तवेऽहं २३  
दयित्तवेऽहं २३ दयित्तवे हं २३४५ एवमेव सामान्ते नाश्कमाश्  
श्चार ३ जीर होरवाश् दश दशताः पक्षिण्यो दाशश् दशतार ३  
इति वाक् हृहृद्वन्तरयोः ॥ ८ ॥

अथातः प्रतिहंरस्य न्याय मुद्देशं व्याख्यास्याम उत्तमं प्रति-  
हारस्थानं तत्र पदसङ्ख्या ज्ञादेते चतुरक्षर माद्यं न्याय्य प्रतीयत्

सङ्ख्याविद्विज्ञासी च सङ्ख्याशब्दे चास्तीभिकान्यचराशीति विद्या-  
तस्य पुरस्तात् स्तोभा न्यायेनोद्गातुमपरिष्टात् प्रतिहर्तुः सप्त-  
नाम्न पुरस्तात् प्रतिहर्ता स्तोभं भजते न्याय्यप्रतिहाराणां मिडा-  
सञ्चाराश्च सूत्रैः स्वरैरवाषांहरस्वारकौत्सभोराङ्गिरसाभ्यसंवेत्कौ-  
ञ्चानां पञ्चानां मुपरिष्टादुद्गाता सीमेधस्वीर्षायवयोर्ध्वभपावमाने  
निधन मार्गैयवाणां मनेकप्रतिहाराणां मुत्तर मसादृश्यात् पूर्व-  
पदेषु पदसदृशगीत्सीनि विभाग्यानि तत्र पदं पदं विभजन्त उपो-  
त्तभं पदं प्रतिहर्तुः स न्याय्यं भा प्रसपदाभ्यो धर्माविधर्मणोश्चैवं  
चतुष्पदाकारे विषदानां तु तृतीयश्च स्तोभाशुद्धकस्मिं द्वैवं  
बहिर्षिधने दीर्घश्च सुत मिति यथा त्रैध संस्पर्षिधने यथा गो-  
ङ्गिरसस्योष्णिहान्तु विभागे तृतीयं ऽष्टांशं चतुरश्रमुद्गाह्यं यथा  
द्वैवोदाससोमितयं विच्छन्दस्वरवृद्धिलोपश्च तत्र गौतेन प्रति-  
हारं विद्यात् प्राग्च उपायवान्स्तोभंः पदनिधनेषु यथै ग्नेष-  
प्रतोदयोः ॥ ६ ॥

तन्वान् मेधाषेयाणां विच्छन्दसा मनुच्छन्दसं विनियोगं  
अभ्येत्ते तु जागते मासवाजजिती विच्छन्दसो भास मनुष्टुभो  
हृहरष्टे विष्वति द्विपदा वाजजिच्छन्दो भवति दशरात्रे छन्दसा  
जाम्यसञ्चारस्यैश्च समीचीतं प्रतिहारं यज्ञेषु नेदन्ताश्च सात्रः प्रती-  
यात् सन्निपाते च पूर्वं क्रमलिङ्गाभ्यं च सङ्ख्यानादेशं वनाय मन्थ  
मिति दशतः सन्निपाते ऽनन्तरं याश्च सामपूर्वयुद्धेन न्याय्यं अया-  
न्त्येषु सङ्ख्यानां मेकं प्रभृतौनां यथैसङ्घं पदं प्रतीयादुत्तरयः  
रिति वैकं चेदाषेय मुद्गानिकश्च साम ब्रूयात्तावता तदाषेयं प्रती-  
यात् प्रतीयात् ॥ १० ॥

हृहरष्टे भज मस्य याश्च सात्रानां वाश्चोऽष्ट इत्सीशनं न्याय्यी

वा साकमश्रुत् सयार३ हा३यि तदुक्थेषु वास्तु मन्नायित्वा३  
 का३ जराबोधीयत् स्तोमा३ रुद्रा३ वारवन्तीये वारवन्तं वन्दध्या  
 नमोभिः संन्वागन्त्वा मित्युत्तमे स्तोभौ वेहेति तदनादेशे सैन्धुचित  
 माच्छान्म३ २३ खल्वेतस्यात् सैन्धुचितं स्वारं मुक्थेष्वैडं पाव-  
 मानेषु चतुर्धा स्वारं माध्यन्दिनमापन्नते ऽभिषेचनीये गोसवयो-  
 ऽच्छन्दोमपवमानयोश्चाच्छान्मो३ २३ हा इहवहामदेव्य मग्निर्नी-  
 वत्सुतार३ इमि० समूहकृपाणि तयोर्न्याथी काशीत् शंयोरभी-  
 तदभिर्पूर्वस्वरसान्मोर्गाराङ्गिरसस्य सामो होइ हू३ वार३यि  
 धुवए गोपातए यज्ञायज्ञीयं दा३सान्नामंघ मूर्जाम्पाता चतास्तभा  
 इति च स्तोभान्ती भरद्वाजस्य पृश्निरेवात्पार वार होवा३ हाइ  
 पौरुमेदं द्विवासायौक्त ओ३३४ त्वा माच्छव मद्यादार३ यिवा३  
 गौर्तम मायिवासा३ हा हो३ \*दैर्घञ्जवसं मधो३र्न पा३ माया  
 इति च पौरुमीठ मग्निः सूर३ दी मानवे यन्नमस्या३३ यन्ना-  
 मा३३ स्यात् इत्युत्तरे तदनादेशेऽन्यत्र पृष्ठ्याभिपुवयोरभीवत्त-  
 लोकात् ॥ ११ ॥

समन्तं यन्वा३यि यर३सी३३ हो३ वा३ हा३यि श्यावास्त मि३उ३  
 स्यद३यि सर्वं पदं न्याथी० वेम३ स्तोमं यन्नसारथि वसिष्ठस्य  
 वैराज मन्थं तन्मर्यादा भरद्वाजस्य प्रसाह मन्थं त्वेषस्ते यामं  
 बृहदाग्नेयं वर३ सार३उधा३ यदाहिष्ठीय सुत्तरं त्वदा३ना३ बृह-  
 दधी मृद्धिबीवेति च त्रिषतिहारं वेदिशोविशीय सो३ हुवा३यि  
 शूर३षा३ पूर्वे वा इत्यन्तरस्तोभान्तः परो वा इत्यन्तरस्तोमादि रात्रेयं  
 मत्तार३ सो३ दो३ अरूढवदाङ्गिरस मासिते तयोर्न्याथ्यावुत्तरं  
 द्विरष्टमे छन्दोभवती दशरात्रस्य नवमपौण्डरीकस्य पूर्व-पूर्वमती-  
 न्यत्र शुधिया इति शुध्य मष्टाचारी वा ककुप्सु ताना३ न्यः षोडश

ब्रह्मस्तीषु दश नैदं व इति चतुरक्षरी गायत्रीषु प्रेमच्छिष्टोय  
मुपा३ श्री३ हो३ गायत्री समासितमुपा३ हो३ ई श्रुता३ हो३  
वाजभृद्याख्या३ हा३ त्वा३ सा३ सीभरं ई३ वती३ इव्य मूर३  
हा३ साध्य मा३ स्वया३ ज्ञार३ अगस्त्यस्य प्राचीनो मन्त्रं यहा उ  
विप्रप्रतिरिति ॥ १२ ॥

शंयन्ती श्री३ हो३ यिगारवा३ यि तदनादेशे शंयन्तार३ इवे३ आश्व  
जे३ ननून३ र३ स्मा३ ऐट३ मं३ ङ्गीया३ चान् उभाकर्षति च द्वा३ सु  
निधने न्याय्य इडानां३ मन्त्रा३ क स्तोभादिगी३ पू३ त्वा३ स्तो३ र३ तार  
मे३ र३ गो३ र३ सखी३ हु३ वा३ इ हु३ वा३ इ आश्वमू३ क मा३ र३ स्तो३ तार३ र३ मा३ र३ इ  
गो३ र३ गारं मा३ र३ ना३ र३ भा३ र३ या३ र३ न् सी३ प३ र्णा३ ना मै३ ड३ सा३ त३ मि३ क  
स्वारं नावमिकं निधनं वहाष्टमिकं तद्विलम्बिभीषणं मन्त्रं न्याय्यः  
द्वचक्षरी परयोः शाकल सा३ र३ वार३ मु३ णि३ च्चु रो३ हित३ कु३ ली३ ये वा३  
र्षी३ र३ वा३ र्षी३ र३ षा३ र३ मूर३ इत्युत्तरे तदनादेशे दार३ ह३ दि३ ता३ र३ ई३ सु३ र३ वा३ र३ र३  
ऐ३ भ३ वा३ ह म३ ना३ देशे येषा३ र३ मि३ न्द्रो३ र३ यु३ वा३ र३ इ३ ह३ र३ ये३ र३ षा३ र३ ना३ र३ यि३ न्द्रा३ र३  
ओ३ र३ वा३ र३ इत्युत्तरे समस्य मरुतां सा३ वे३ शी३ य३ हा३ वि३ ष३ त३ हा३ वि  
कृतथोन्याय्यी का३ क्षी३ य३ तं य श्री३ हो३ र३ वा३ र३ दक्षिणधनं तन्मोक्षं  
परार३ दूर३ र३ षा३ र३ हो३ र३ वा३ र३ हा३ र३ श्री३ प३ ग३ वे तं सौ३ भ्र३ व३ से इ३ न्द्रो३ र३ रा३  
यि३ न्द्रा३ र३ य३ तार३ शा३ र३ इ३ रा३ इति न्याय्यो या पूर्वं सु३ षि३ ष्टि३ ष्टा  
हो३ त्री३ यं नि३ भ्र३ म३ काम मि३ हार३ हो३ र३ वा३ ज३ दा३ व३ र्यः चूर३ मा३ र३ ॥ १३ ॥

॥ इति उपग्रन्थसूत्रे तृतीयः प्रपाठकः ॥



॥ अथ चतुर्थः प्रपाठकः ॥

॥ हरिः ॐ ॥

वेतङ्ग्यं यदोकोनिधनं शास्ताऽक्रांतूः षडक्षरो वा गौरी-  
वितं तच्छाश्वे दार्शनाऽथाऽताः चतुरक्षरो वा काण्वं कारः  
रुः श्रितकत्त मार्कमर्वाऽहाः देवोदासः रात्रिषामैः रं हाऽयि  
मार्थाः शाकरवर्णः सायणकेषु जुहूरमाऽसाः शीदलः सुद-  
वाऽमाः इति न्यायोः वार्षमं त्राऽम्यः कौत्से ऽपरे तयोर्न्याय्यौ  
पूर्वमर्गदेये शीमेधः सरताऽय आः देवातिथः ह्यायि साऽखाः  
यस्तोः मः शीऽदीः क्रोचः षष्ठे गायत्रीसामं पिवाः तु  
वस्याः गवाऽहाऽयि छतसुतिधनं माधुच्छन्दसं शिवाः तुवीः  
होऽवाऽहाः आकूपारः रात्रिषामैः होऽयि महारहऽज्जऽदक्षः  
होऽई गौरीवितं सुतुः संत्याः वामदेश्यः ष्यौहोऽ इमाः  
न्यायोः वा सत्रासाऽयिः सिधौः होवाऽहाऽयिया न्यायो वा  
त्वाद्गीसामं गायत्रीषु वन्वालीऽसाऽश्चतुर्थं त्रैककुभे मतीऽचैनेडङ्गा-  
शीतं प्रनपाऽयूः शीः ताः मार्कमर्खं तहुराः सप्तम वय मिन्द्राः  
सिऽस्थातरिति च स्तोभान्तो हरिऽनीनिधन मिन्द्राऽत्वाऽदाः  
आ त्वा सिन्धुषामं शीमितं वाऽजीः शामहीयव मुक्येऽवाऽईवाऽ  
तेऽरान् ॥ १ ॥

शैतं सहस्रं रणाऽयि शारऽशाः आभीवर्त्त इन्द्राऽङ्गाऽइ-

भी३ नौधस० मा३यिन्द्रा३म् चक्षुककालेय० हुवे३ हो३यिभा३राम्  
 कालेय० हुवा३यि भरी३वा३ ओ३ वा३ गौ३शुक्तं ने३मिं तष्टे३  
 वसो३वाऽ ओ३ वा३ पृष्ठं म३स्मा३० प्रा३वा३ जमेद३र्गैरभीवर्त्तोऽस्मा३३  
 ओ३वा३ हा३ को३ल्मलंबहिषं मे३ हो३यि गा३विष्ठया३यि षड३चरो  
 वा स्तोभा३न्तो जनिते वा३यि३खे३र३ हो३यि पि३वा३ हो३वा३यि३खे३  
 पि३बन्तु३को३र३ हो३ अनु३पूर्व म३ौपद न३वसं३प्रद३शु३योः पूर्व३ मतो३ ऽन्यत्र  
 म३ैधा३तिथ्य० रा३रि३यि पा३उवा३र३य्या३रता३उवा३ सन्वा भु३त इ३ति च वै३डा-  
 नसं तस्यो३त्तमः पा३दः प्रा३गभ्या३साद् भार३हाजं वहा३न् भू३सो३  
 कण्व३हृ३तस्यैष ए३व स्तो३भा३न्तो गो३ङ्गव३ मा३यिन्द्र३व३वा३ ओ३हा३  
 इ३न्द्रस्य३ य३गो३ऽनू३र३ हो३र३ सा३ध्र मा३रना३ ओ३र३ वा३ता३य३र३  
 ओ३प३वा३र३यो३क्तस्य३ च मा३यिन्द्रा३ गी३त३म३न्ना३यं क३ण्वे३र  
 ष३मूर३३४५ ॥ २ ॥

हरिायणं वायिदार३ षड३चरो वा स्तोभा३न्तो व३र्षण३सं३म  
 स्तो३र३त्वं रा३रजसु३ गार३यत स्तो३ द्य३चरो वा३भ्या३सादि३ अ३ट्कारणि३  
 धन० सन्वा३र३ ग३नानि वा३सि३ष्ट जी३र३क्व३र३ज्यो३ती३र्नव३तन्व ए३वा-  
 ष्कार३णि३धमं च का३ण्व३ भू३भिनि३धनं च दि३ङ्नि३धनं म३हं३वै३ष्टस्य  
 तयो३र्न्या३या३वादे३ द्य३चरो३ द्वै३गत० सु३ता३ पूर्३वा वा द३शा३क्षरः  
 आय३न्ती३ये प्रति३भा३र३गं न दी३धिमः प्रा३रती३ द्य३चरो वा३भ्या३सादि३  
 स३क्षर३चरो वा प्रा३गृ३ष्टि३हा३राद् वा३स्य मा३यिन्द्रो३हा३री३ पूर्३वा वा  
 द्य३चरो वै३य३खे३भ३रा३ मा३र३ ज्यो३स्त३च्छी३त्क न३वस३तन्व ए३व व३सि३ष्ट  
 भार३नू३र३ना३३४५न् भूः त३द३ना३दे३ये पी३रु३ह३न्तनं तस्यो३त्तमः पा३दः  
 प्रा३गभ्या३सा३दि३न३पं तदा३भ्रा३श्र३वं ज३न्द्रा३रि३मी३र३ती३र३ नै३पा३तिथ३ म३सा३  
 वि३प्रा३श्रा३र३हा३ ओ३र३ हो३र३ हा३ य३ज्ञं वि३पा३रि३ गि३री३वा३ ओ३र३वा३  
 ध३जी३र३ष्वी३ वा३ ओ३र३३४ वा३धि३ वै३य३त्वं धि३याः३वि३ष्ठ३ पा३र३ हो३रि३

बाह्वदक्षं गकिटादां वायं मन्दाशनाशीं माधुच्छन्दस  
मुपास्वारादां श्रीहोरां वाहा ॥ ३ ॥

असाविर्निहवन् श्रीरुक्ष्यं सृजा हा रां पूर्वं वातः पदं पार्थ  
मोरां श्रीहोरायि जट्ट्या वात्सप्रे ततोऽयोत्तमे उत्तम मनादेशे  
नाके दामं परिगणेषु ब्रह्मयज्ञान गृत्सामनी इवस्य बीजानं  
त्य मु तार्क्ष्यसामनी वार्तहुरं विसाशयिनाभिमयमारनारं उदं  
शोमः मुदं श्रीमीं वयाशयि मीरं चतुरक्षरो वाभ्यासादिरैया  
वती आष्टादं पूर्वं सक्तुक्ष्येहीनरात्वावकथं हिरुतरं मभि-  
प्लववैदत्रिरात्रयोऽर्थोतिष्टोमे च पूर्वेण विकल्पो महावैश्वामित्रे  
गोतमं धाररां श्रीहोरां वां न्यतां श्रीहोरां वां वसिष्ठस्य  
प्रियं धाररां श्रीहोरां आर्त्तां श्रीहोरां वां आकूपार मनादेश  
उभयां हां वीक्षं तस्यैष एवोच्चादिस्तरयां राश्यां रूपूर्वीं  
हारं हां शयि वैश्वामित्रं रजाः मूर्खैश्वा श्रीश्वा शुभाशुहीये  
तयोर्न्याय्यौ पूर्ण मनादेशे नानद मां पश्चा दां मधुशुनिभनं  
दाशयि वेर पुधां हां हां श्रीहोरां वां श्रीहोरां वां मातुतं  
धर्त्तां वजींश्वा श्रीश्वा त्रैशोक मुतोऽं हाशयि श्रीखण्डिनमच्छ  
वासदस्यव मुत्तरं वैषनं सीमसाम यस्यधायोऽं नदि चरन्तीतोऽं  
मां नुशमोऽं हां हां शयि वरुणसाम विष्कां भां शयितेऽं श्येनः  
सन्तौऽं हां शमद्रीं होरां पूर्वं वाताः पदे ॥ ४ ॥

श्रीशं स्यादं हां स्यां कौत्सं रात्रिषाम महाशं हाशयि  
धाः पूर्वं वा चतुक्षरं तदोकोनिधनि हाशिवर्णं सुलोकां क  
होश्रमशहां तैतं यदां मरुत्सुमारदं होशयि मातुतं होश  
दयतां शयि मां हां वैश्वमनसं ग्नित्यां शयि श्रीमित्रं श्री ही  
होशयि श्रीहोरां दपोऽं हां हां त्रैकक्षुमं ततोऽं हां हां

आक्षरं यद्वा३२३९सि वाचं देवोदासे यस्या३२३ या २३  
 सावत्तं गिरा३यिनं वी२ हो३ वां३ सुहो देवतमसः सोतुर्वा२  
 हृभ्या३९सुयता३३ः सुवता३ः शर्करं • क्षिना३यता३ स ३  
 वस्तुषा३यि न्याय्योवा • हृहल्कं • दृढाची३द्वा३ः • येषिरमू३ • दे३  
 वाग्मा३ प्राहा यात स्त्रीगमत मिषा३९ स्तो३तृ३ सञ्जय मिष३९  
 स्तोमृ३भ्या३ आ३ सौहविषाणि पू२ षो२भा३ • हा३यि तदनादेशे  
 पू२ षो२ भगा२या पू२ षो३ वा३ ओ२ ३४ वा३ कं पर्या३ष्विति मध्यमं  
 धर्मविधर्मणोर्द्विपदाकारे दशमैः स्तोमैः षष्ठदशमैर्वा ही चेत्यस्तोम-  
 विभागे वा पञ्चाक्षरं वाजिनां मामं श्लोकानुश्लोके उदंशेषु चो-  
 वा३यिं प्रा२यगा२थं गा२ ३या३४ ता३ गूर्हः शिवो२ सुवा३ः प्रा३ः  
 पत्य मतिच्छन्दसु मय३ सहा३हा इत्यग्निं र३भेतोत्तरं • बार्ह३स्ये  
 अनेर्वा राक्षोघ्ने ॥ ५ ॥

• ऋषभाभीकयोरुय९ शा३२४मा३ शतनिधनं वाभ्रघं भू३य३  
 हा३यि शा३र्मा३ हा३ शैशव मुय९ गी३४३मा३ आमहीषव मुथं  
 शर्मा३ आजिग मिन्द्रा३ या३ पा३ अष्टमिकं सुरुप इन्द्रायिमा३  
 इया३३ इया३ इन्द्राय प्रौ३ ही३इया संहितं मा२३ इन्द्रा३  
 श्रीशुभार्गवं विखादा३ धा३ योक्ताश्वं श्रीहोहो३ हा३इ विखा  
 विखा श्रीहोहो३ ही३इ ऋक्पूर्वः परे पूर्वैः प्रनादेशे सोमसाम-  
 दाइवा वा३इ रा३ हा३उ उत तदनादेशे भासं दा३यि वा३३  
 पूर्वी वा हा३चरी ऽप्र३हो३ स्तोमदामं दे३खावी२रा३ हा३इ चक्षकं-  
 वैष्टभं हरायि वा३३यि ती३इ ही३या३ हा३यि पा३र्षो३ कनी३ः  
 जुवा३यि ही३ वा३ इषो३धुय मर्कस्यायो३ च्यावनं ता३यि  
 मा३ हा३यि वैदन्वनानि मदा३इ पुरसा३इ३या३ इति प्रथमे  
 सर्वधा३ अमा३इ उभयेतस्तीमे हे ऽस्तीयः वासस्तीभ मुमीवा

औ३४हो३ई, न्यायेमानुपूर्व मीर्णायवे खानैर्या३३ती३ उत्तर  
मनादेशे अस्तीभावभयोः ॥ ६ ॥

शास्त्रदे वा३पू३ गारो३४५ अचिक्रदद्वर्षाहरं परिगाणेषु वाषीं  
पा३न्तमा३३३३४५ या३ वैरूपं त्वा३ आ३३ ना३या३३ द्यक्षरो  
त्रैत्रवद्दार्त्त्युत मुत्तरयोर्द्वक्षराऽवयासोमीयं मा३न्दा३नआ३ ये३  
सच्छन्दसां सोमसान्नां मादुष्टुभि चाभिषेचनीयगोसवयोरु३त्तो३  
दा३यिवा३३ः सा३द्यक्केष्वयास्य मू३ त्यो३ दे३वा३४५ उद्व्याजा-  
पत्यं मुत्ता३३हो३३यिदा३यि वो३४५ आयास्य मेकार्यं त्रिणिभन  
मा३३३३ औ३३हो३३वा३ उक्ता३३ औ३३ हो३३ वा३ उमे च तदनु-  
पूर्वं द्वाण्वरथन्तरं मुत्तो३३ दा३यिवा३३ः सौमिक मायास्य मुत्ता३  
औ३३ हो३३ सदाविशेषं मुत्तो३३दा३शयेवा३३ स्तीभान्तो हावो प्लवो  
वी३३व मुत्तो३३ दे३३र्वा३३ हिरा३३३ हा३३औ३३ हा३३उवा३३ यौधाजय  
मुत्ता३३ अ३च्छद्रयिष्ठयोस्तयः प्रस्ताधसदृशा आभीशवे दा३३ धा३  
रुपेति ३ स स्तीभान्ती पूर्वं भवमतन्त्र एव द्वादशं माण्डवं तत्सोम-  
क्रतु तप३हारे च३३ हा३३ तु३३वा प्रतोदगोष्ठी चाश्रुवं जा३ ना३  
औ३३ चा३ना३ पा३३ औ३३३४वा३३या३ सदीदेन इति चाग्ने-  
स्त्रिणिधने मा३३शो३३ः पा३३या३ अ३च्छाकोश मिति च द्विद्विह्वारं  
वामदेव्य मच्छा३३ वी३३शास्त्रधी३३ हो३३३३धून्ना३३ न्यायो बोक्षेध-  
निषेधयीर्ष्याग्नेस्त्रिणिधने स्तीभान्ती वैष्णवे परिधी३३रतिता३३३३  
परा३३ औ३३ हो३३ अनुपूर्वं मेवज्ञातीयान्धी३३त्पोरन्त्रे पवमा३ना३  
औ३३ हो३३ पवमा३ना३ हा३३हा३३ अनुपूर्वं वाजलितावा३३ हो३३  
स्वःपृष्ठ माङ्गिरसं मत्सरासो३३ ॥ ७ ॥

औशन मश्रुं न त्वा३ वा३ग्निं मा३३र्षया३न्ता३३ न्यायोवा  
द्वा३३ वारा३३ मङ्गिरसां संतोश उभुवायि हा३३उवेति वासिष्ठे

अनुपूर्वं मष्टमनवेमयोरिहवद्वितीयेऽह्न्यानादेशे तज्जुनितं समूढे-  
 ऽपि च समूढरूपिण्यभित्सम्पद्यत् कुलंस्याधिरधीयं प्रसेनाद्यं प्र ते  
 धारा इत्यतस्त्रीणि विप्रं ज्योतिषाणि दाशुस्यत्वं हन्ताश्चि रक्षोर्  
 वराश्चिंस्कण्वन्निति च स्तोभान्ती दीदिहीति त्रीष्टं तंस्व तृतीयं  
 पदं सस्तोभं कात्तयशं मपश्चारनं अथाश्चि षाश्चान् और्ध्वसङ्गनं  
 साश्चाश्चोर् दाश्चि श्यावाश्चं षाश्चान् आन्धोगव साश्चार्  
 उवाश् क्रीञ्चानि प्रथमाष्टमिकं सप्तधान्यत्वं च्छन्दोमपवमाने  
 ऽन्तर्वसी चतुर्वीरे षष्ठे षष्ठत्वाश्चीनिके सप्तमे त्वैककुभे क्छन्दोमदशा-  
 हस्य द्वितीये ऽह्नि विराट् सम्पन्ने षोडशिसामं सप्तम्योग्य  
 मोश्चि वियख्याश्चोर् उत्तमं स्वयोन्यन्त्रं प्रायणीयात्तुष्ये  
 एवास्तोभस्वाङ्गीसामीनि पवाश्चि त्वाश्चिदाश्चिवाश्चान्च्छा  
 हाश्चोर् वां देश्वारनाश्चोर् देवाश्चोश्चि म्च्छोर् हाश्चोर् अन्-  
 स्याश्चि वा स्वारे आद्यं तृतीयेऽस्वारयोश्च पूर्वं मुत्तरं पञ्चमे सप्तमे  
 चाहनि क्छन्दोमदशाहस्य चतुर्वीराद्युष्कामयोश्च तृतीयेऽहनि  
 विराट्सम्पन्ने षोडशिसामैड मतोऽन्यत् ॥ ८८ ॥

क्रीञ्चं षष्ठे सुवाश्चिय्याश्चोर् सभोश्चोर् वाश्चोर् इति च पूर्वं परित्य-  
 गाकूपार मैहं काव शोश्चोर् वाजजिहिश्चोर् धनाश्चोर् काव  
 माश्चोर् सुस्यस्य बृहतोश्चोर् बृहजाश्चोर् न्यायोवोद्दार्गाव सासराजे  
 हाश्चोर् होश्चोर् वाश्चोर् हाश्चोर् आश्चोर् नाश्चोर् परं वा चतुरक्षरं  
 पूर्ववमन्त्र एव सिमालां निषेध उत्तरयोद्दक्षरीं चतुरक्षरी वा  
 वैधृतं वासिष्ठं लीशयोः पूर्व मन्त्रादेशे प्रवद्दार्गाव धाम साश्चोर् इयाश्चोर्  
 वृषा च स्वारे मन्त्रादेशे महस्तं धेनु चाश्चोर् रश्चाश्चोर् अश्चिचाश्चोर्  
 इन्द्रस्यापामीवं वायोश्चोर् भिक्त्रं ह्यो द्वाश्चोर् वीश्चोर् ष्चोर् स्वार् पूर्व वा पदं  
 श्वाश्चोर् इति शार्ग मर्कपुष्पयोः पूर्व मन्त्रादेशे पौष्कल श्चोर् अश्चि  
 शक्तिं शाश्चोर् शोश्चोर् वाश्चोर् ही च्छाश्चोर् अश्चिचाश्चोर् कार्णश्चोर् अत्रं गाश्चोर्

शुनं हवीं स्वदया सुज्ञानं भयेर वा३ चार आतीषादीयं पव-  
 मार२नार सफं महाइयि वाचस्साम वा३ना१प्रा३क्षः३९९ शंकु धा३  
 यिष्वा३ वा३ सू३ तस्तीदन्तीयं भरद्वाजस्य लोम सी२३मा३स्त-  
 हीचं गायत्रपाष्टं क्री३१डा३नू३मी२ सन्तनिनस्त्रयः प्रस्ताव-  
 राट्टशाः ॥ ९ ॥

यद्येजोरूपे तृतीये दशाक्षरो ह्रस्वा ह्रहदोपशा न्याय्यो वै-  
 रूपे पददैवते व्यत्यस्थाखायाः पुरस्तात्स्तोभा अन्तरिचं पिबा व्य-  
 रिष्टं पिबा देवस्थानं तस्य तृतीये चतुरक्षर मन्यत् सस्तीभं शन्न  
 आदर्षण मुत्तरयोश्चतुरक्षरी गुरस्तात्स्तोभौ ह्रहत्त्वामित्स्वादित्वा-  
 थिरामकी धत्तेति दीर्घतमसोऽकी मरुतात् सत्स्तीभो अग्नेरकं  
 आञ्जदोहानृषभरेवते तृतीये मध्यमो ऽभ्यासः शाक्वरे चतुर्थत्  
 सस्तीभ माभ्यान्तात्स्तीं ऽतीषङ्गे धत्तेतिपदस्तीभा द्वादशनिधनाः  
 स्तीभोः पूर्वेण वाद्ये परेणान्ये विभागस्त्रैव प्रागन्यात्पदभाज इदे  
 चाभितः प्रथमे तुजश्चोत्तरे शेषे पदमध्ये उत्तमे ऽयुजश्चत्वारि त्र्यक्ष-  
 राणि यजस्तैश्चेष्टः पदं मिडा च चतुरक्षरशो वायुजी द्वैध मितरी  
 सत्सर्पाणि सर्पसामाभि लिङ्गतो नियमस्त्वं तूर्यस्त्रिषन्धि परो  
 वा वामदेव्यसदृश एकदृषा त्रिरुक्ताद्यमो वान्ता न च कष्टैकदृष-  
 स्तोपायवन्तः स्तीभाः पदानां निभभत्वाद्देवती तृत्तरयोश्चतुर-  
 क्षरावुच्चा शाक्वरेवर्णं तस्योत्तंवायांत् षडक्षरः स्तीभान्तो नित्यव-  
 स्तास्वतीर्षद्भवत् पञ्चाक्षरो रंथन्तरे समहत् समनो त्रयाणा माद्ये  
 कयः पञ्चनिधनं वामदेव्यं पिबा तैराजं तस्य तृतीये मध्यमो ऽभ्यास-  
 स्तीभो विभाग्यं वा ॥ १० ॥

ह्रद्वाद्ये प्राणापानौ पञ्चसषष्टे ध्रतपञ्चावुप त्वा बलभिर्दी  
 (भर्गयंशसी प्रसोमद इति घर्मस्य तन्वी) वागाहरे°त्वमेतत्तौर्यवसे  
 यदिन्द्रशोत्तरे ऽष्टाक्षरो नानापयो धेनुपयसी चतुर्थ्यं यखे-

पत्यो रत्तरयोः स्तोत्रीययोः सस्तोमै मध्यमे यदे . पायुर्नवस्तोमे  
 रायोवाजीयबाह्विरयोः षडक्षरः स्तोभान्तः संकतिनि चतुर्थे  
 स्तोभोः पार्थरश्मे प्रस्तावसदृशाः श्येने च भद्रश्रेयसो रश्मैः स्तोभैः  
 पञ्चमाष्टमैर्वा द्वौ चेद्दार्कजम् . न व इन्द्रायेत्युत्तरं विभाग्यं नाके  
 यामं परिमात्सु प्रथमं वसिष्ठशफौ शुक्रचन्द्रे स्वराणि यज्जा-  
 थयश्चत्वयुत्तमे विभाग्यः ॥ ११ ॥

सत्रस्यर्द्धिं चतुर्थे मन्थे . सोमव्रते सांपराज्ञीष्वग्निमीडे यामं  
 तस्य तृतीये कृष्णान्तं इमा उं . वा मश्विनोर्व्रते गवा मुत्तरे समं  
 न्यायन्तीत्यपां व्रते श्रीहोरात्रयो रत्तरे राजर्जरीद्विषे चतुर्थ्यन्ते  
 इत्तान्दं पञ्चानुगानं विभाग्यं . मविभाग्यं चेदाद्य उन्तमन्ता  
 स्तोभानां मध्यमेन स्तोमेन प्रतिहार उन्तमन्तानुगामस्य षडक्षर-  
 स्तोभान्तो वसन्त ऋतुषा यज्ञायज्ञीयं कथो पुरुषव्रत मेकानुगानं  
 लोकसमान्यशस्य साम प्रजायतेर्द्धदयम् ॥ १२ ॥

शुक्रियाद्य मन्वेव्रतं भ्राजाभ्राजि विकर्णभासे मङ्गादिवा-  
 कीर्त्यं पञ्च तस्यात्मा स्तोभाविभाग्यो द्विप्रस्तावं चंतस्मान्तस्याद्ये  
 देवते विपरिहरेदाद्यन्तसमाधये त्वस्थाः षट् परिधयः प्राक्  
 परिधिभ्यो प्रश्नोचनं मिन्द्रस्योत्तरं महानाक्षरः सिमाः  
 शक्यो मङ्गा वचनाद्दिप्रस्तावा द्विपदायाः प्रस्तुत्य शक्योः  
 प्रस्तौत्यधुसौ ऽतीषङ्गवदूर्ध्वं पुरुषात् षडक्षरश्चैके स्तोभान्तं  
 प्रस्तावं चांध्यास्यापुरीषपदेषु पुरीषपदशेषाणि निधनान्याचार्याः  
 स्वरितान्तानि . यथाभूतं तेषु पाम्बविध्यं चेन्नोयिकारादागन्तो  
 वागतः ॥ १३ ॥

॥ ऋति उपग्रन्थश्लोके चतुर्थः प्रपाठकः ॥ अथञ्च समाप्तः ॥





# ॥ सामप्रकाशनम् ॥

सामवेदस्य ) ।

॥ सामंशाचार्य-प्रीतिकरत्रिवेदि प्रणीतम् ॥

॥ आचार्यश्रीसत्यव्रतसप्तमश्रमिणा संस्थादितम् ॥



कलिकाता—सत्ययन्त्रे

(२१६—१, घोषसू लेन । सामश्रमिव्ययादित्पत्र )

॥ श्रीमहेन्द्रनाथसरकारेण सुद्रितं प्रकाशितम् ॥

॥ संस्कृत १२५१ ॥



॥ अथ ॥

## ॥ सामप्रकाशनम् ॥

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

गजवदनचरणकमलं नत्वा सामप्रकाशनं ग्रन्थम् ।  
रचयति सामसमूहात् प्रीतिकरः सारं सुदृश्यम् ॥ १ ॥  
यथापि मया निवृद्धी लक्षणनिवहः साधनाम् ।  
एकद्विप्रभृतिभिरत्र कौत्सिभ्यो भवतु ॥ २ ॥

( १ )

सं त्वा हि त्वेति कथितं षट्स्वर्जितं मेकं मेवात्र ।  
स्तोभादिनिर्मितं मस्मान्न कथितं सित्यप्ररम् ॥ १ ॥  
पञ्चग्रहणं पञ्चपदं पञ्चविहत्तिकं समीप्यगतम् ।  
वेये यस्ते नूनी मिति साधिवं नान्यत्र ॥ २ ॥  
एकं सप्तस्वरयुतं वेये सामप्रकीर्तितम् ।  
मो षु वाघतश्चनद्वितीयं मिति कौथुमे ॥ ३ ॥  
एकं पंचस्वं सोमेति महे दक्षाय संयुतम् ।  
विहत्तिरहितः समीप्यो वेत्यस्याक्षरः स्मृतः ॥ ४ ॥  
वेये ऽष्टग्रहणं चाष्टपदं चाष्टविहत्तिकम् ।  
प्रोक्तं मेकं हि यद्वाक्यं नेदृशं विद्यते क्वचित् ॥ ५ ॥  
सन्त्येषा उस्त्रियेकं वेये सामप्रकीर्तितम् ।  
नभैव ग्रहणं चात्र वेये नवविहत्तिकम् ॥ ६ ॥

एकं नवपदं साम प्रथमं राये प्रकीर्तितम् ॥ ७

ऋक्पादहीनं संक्रोशं तृतीयं यत् प्रकीर्तितम् ॥ ८ ॥ १ ॥

( २ )

ऋक्पादे प्रयुतं सामद्वयं वेगानि द्विस्वरम् ।

उपोषु जात मादिम मर्षा सोमादिमन्तथां ॥ १ ॥ २ ॥

( ३ )

अथ ऋष्टस्वरत्रयं वेद्ये साम यथाक्रमम् ।

मोषु त्वेति द्वयं प्रोक्तं मेकं मिन्द्रं सुतेषु च ॥ १ ॥

पुनरुक्तं पादं मेकं मादावन्ति यथाक्रमम् ।

उपं नो धरिभिः सुत मा न इन्द्रं परावृणक् ।

तरल मन्दी धावति वेद्ये प्रोक्तं मिति त्रयम् ॥ २ ॥ ३ ॥

( ४ )

इतिनिधनसंयुक्तं भवेत् सामचतुष्टयम् ।

द्वितीयं मनिं वा प्रोक्तं मय मन्वाथ चादिरम् ।

ये ते पन्था अधो दिवो यस्य त्यच्छन्तृतीयकम् ॥ १ ॥

एकविंशतिकं भुक्तं वेद्ये सामचतुष्टयम् ।

तं मिन्द्रं वाजं परमं सौत्याद्यं शव्यो षु णस्तथा ।

परिप्रधन्वां द्वितीयं मिन्द्रो विश्वस्व रादिमम् ॥ २ ॥

षड्ब्रह्मणं षट्पदञ्च षड् विंशतिकं मुच्यते ।

श्रेष्ठं वो हाउ इतं तदु यत्सोमा इन्द्रविष्णवा ।

अपामौवां मपारविष्वां वेद्ये तत्र चतुष्टयम् ॥ ३ ॥ ४ ॥

( ५ )

प्रस्तावपञ्चकं प्रोक्तं वेद्ये गाने यथाक्रमम् ।

कनिष्ठानामिकामध्यातर्जुनाच्चसमुद्भवम् ।

अग्निं हरेता चतुष्टयं तव त्वं नर्षं मित्यतः ॥ १ ॥ ५ ॥

( ६२ )

असम्पूर्णानि कथ्यन्ते वेद्ये सामानि षड् यथा ।  
 मानो हृणीया युगलं यस्मिन्नाहादिवर्जितम् ।  
 अग्ने त्वन्नी द्वितीयं च चतुर्थं च विवर्जितम् ।  
 वरूथ्य इति शब्देन धारा षष्ठं विवर्जितम् ।  
 अया रुचा द्वय मिति सम्पूर्णा ऋच आर्चिके ॥ १  
 अग्न आ याहि वीतय अग्निर्वृत्राणि जह्वनत् ।  
 अग्निस्तिग्मेन गोचिपत् अग्ने त्वन्नीऽन्तम् तथा ।  
 इत ऊतरे वा अजरं पुरी बजितो व इत्यपि ।  
 अकार आत्व मेतेषु षट्सु सामसु कोर्जितम् ॥ १ ॥ ६ ॥

( ७ )

शक्रन्ते अन्यदित्यस्मिन्न्रिडां मन्नेऽप्यङ्गः पुरम् १  
 अवद्रप्स अद्रुश्रमती मृपो षु शृणुही गिरः ।  
 पुना च दशमं सोमः पवते ऽज द्वितीयके ।  
 अभीनोवीहो जसेति सामं समाचलं अङ्गम् ॥ २  
 ऊकारो निञ्जनं वेद्ये गानं सप्त यथाक्रमम् ।  
 तैर्गूडयाद्ये च पिनांसुबस्य धिय संयुतम् ।  
 आ त्वा सहा त्वन्वीयेऽन्नं त सु अभि द्वितीयके ।  
 एतो न्विन्दुः सखायास्मिन्नुच्चा ने नवमे तथा ।  
 प्र सोमं दे चतुर्थं च प्रोक्तं मेतेषु सामसु ॥ २ ॥ ७ ॥

( ८ )

यस्योदाहरणं नास्ति तस्य संख्याक्रमो न हि ।  
 अष्टादिसङ्ख्या नाम्नात्वा प्राप्ता सैव कोर्जिता ॥ ८, ९ ॥

" अष्टमस्य आ नवमेर्वाशा च षष्ठ्यस्य प्रकाशयन् विद्वंस्य वेद्येऽभावात् तथारवात्तस्यः ।

( १० )

वेये सामं दशैवेत्तं दण्डोपा-निधनान्वितम् ।  
 उप ह्वरं गिरीणा मित्यैन्द्र पृच्छु कासुचिद् ।  
 प्र गिभाय मां न इन्द्रेत्येतयोः प्रथमं तवः ।  
 वय मेना द्वितीयं च को अद्य युंक्त इत्यपि ।  
 एष त्रय्य पञ्चमक सुपप्रचे ततः परम् ।  
 अर्चन्त्यकं मरुत इतूर्जा मित्र इतीरितम् ॥ १ ॥ १० ॥

( १२ )

ग्रहणेन विना वेये सामानि प्रादशैव हि ।  
 प्र व इन्द्राय योनिष्ठं इन्द्रवर इतीरितम् ।  
 इममीत्यन्तिमं काइ मिन्द्रो विश्वा द्वितीयकम् ।  
 यस्ते मद्गो जइ ह्य मसाव्य भिति चाष्टमम् ।  
 पवस्व मध्वभिदुग्ध मेतयोश्च द्वितीयकम् ॥ १ ॥ १२ ॥

( १३ )

आच्छानात्रे 'सर्वादा (ति) स्वातो हायि'-समानि च ।  
 पदान्यत्र प्रकथ्यन्ते वेद्यगाने त्रयोदश ॥--  
 आच्छानात्रे । प्रस्तोमाया । दाइवाअग्वा । वर्षीष्ठां ।  
 माहान्माही । वाचास्तावीत् । इवेमात्रा ।  
 सायांष्कावर्णीनीकाथं । नाजातामा । आइन्द्रात्वाय ।  
 दाइर्वाइरा । वाइश्वावासू । आमात्रात्वा ॥ १  
 वेद्यगाने समाख्याता माउवा ये त्रयोदश ।—  
 कयाष्टाम्बुहाषणागिरमेद्यायथा इति ।  
 यजामहास्यदाग्निवाक्षिता त्रयोदशेत्यतः ॥ २ ॥ १३ ॥

\* एकादशसंवेदायाः सन्ध्याभावाच्च त्रयोदशम् । एव कुरवापिह सर्वत्र बोध्यम् ।

( १५ )

पञ्चदश वयगानि कथितः स्थितिसन्धयः ।  
 अदशि विशो विशो वा अग्ने वाजस्य द्वितीयके ।  
 अभि प्र गोपति मध्ये नक्येनाकीति कर्मितः ।  
 अरन्त इन्द्र अक्षि तं वो दस्य चतुर्थके ।  
 इसा उ त्वेति वर्गाद्ये अत्ते दधामि सप्तमे ।  
 आ ते अग्ने द्वितीये च ततः स्वादिष्ठयोष्टमे ।  
 इन्दुः पविष्ट द्वितीये परीतो पिञ्च षष्ठके ।  
 सोम उ स्वा ण इत्यन्त एषा गायत्रपाश्वके ॥ १  
 वये पञ्चदश प्रोक्ता ओवाहोवेति मध्यतः ।  
 शन्नः परि प्रक परि इव नी देष द्वितीयेके ।  
 अत्राहाद्ये अभि त्वा पूर्वं जगृह्यत तं तृतीयके ।  
 पञ्चमे च परिस्वानानां इन्द्रश्च द्वितीयेके ।  
 अया वोता ऽऽपवस्वामि प्रिया पञ्चमके तथा ।  
 पवित्रन्त द्वितीये इथ प्रधन्वा युष्मत्तुर्ययोः ।  
 सोमः पुना र्द्वितीये च वा शब्दः परिकौर्त्तितः ॥ २ ॥ १५ ॥

( १७ )

दीप्त शुक्तः समदश वये सामे प्रकौर्त्तितम् ।  
 अभि त्वा वषथाय्य इन्द्र चमरेऽर्ज्यमम् ।  
 वामदेव्ये मथात्वा सहस्र मिति चतुर्थवग्ने ।  
 शग्धू द्वितीये मौषु ल्हा द्वितीयं क्रुष्टशेषजम् ।  
 नर्वके सुपर्ण मित्वा त्वा सखाय इत्यतः परम् ।  
 गायन्ति केति तृतीयं प्र व इन्द्राय विप्रहन् ।



अग्निं होतार मित्याद्य मित्नुः पविष्टचेतनः ।  
 आद्यन्वस्मात् रोम दे तुर्यञ्चाथ पुरो जिती ।  
 प्रथमं द्वितीयञ्च प्राणाः शिशुरतः परम् ।  
 द्वितीयञ्च तृतीयञ्च कश्चिद् दीप्तां श्रुतिं वदेत् ॥ १ ॥ १७ ॥

( २० )

य दाचीकेदू स्वः सुक्तं विशत्यास्थ मतः परम् ।  
 वेये सग्रहणं दीर्घं प्रत्युत्क्रमयुतञ्च तत् ।  
 प्रगाहय ममार्त्तिय प्र वाया मुज्जिहा ततः ।  
 नस्वसरेषु धेना वा इन्द्रा सबाधयुग्मकम् ।  
 तिमाभुसमवा यद्वा ज्येष्ठममार्त्तियं मद्म् ।  
 आराङ्गमाहयञ्चान्तं पवमानाभियर्षसि ।  
 मनोपिणो हयं यस्मादिन्द्रे सीमास्ततः परम् ।  
 वधनान्ततः सामा ऽश्वं नः स्तोम मिति हयम् ॥ १ ॥  
 अन्ते ऋक्काः समाख्याता वेये दिंशतिसंख्यकाः ।  
 असावि दे द्वितीये च जगद्वा ते द्वितीयके ।  
 चतुर्थे चाथ त्रस्य त्वा हये च संखान्तिमे ।  
 गृणे तदिन्द्र प्रथमे यंस्व त्यच्छा चतुर्थके ।  
 पवस्व सोमा मञ्जे नः स्वादिष्ठयाष्टमे ततः ।  
 इषे पवा पुना प्लव इहो इहेति कीर्त्तितः ।  
 अपा मिवेदूभ्यस्ता वाहयता द्वितीयके ।  
 धर्ता दिवो द्वितीये च पवित्राद्ये तथैव च ।  
 इन्द्र मच्छे द्वितीये च तृतीये च त्तः स्मृतः ।  
 आ सोहा परि पिचतेत्यथ प्रथमसामन्ति ॥ २ ॥ २० ॥

( २१ : )

वेद्ये षष्ठाः समाख्याता पुनर्विंशतिसङ्घिकाः ।  
 शन्नः प्रथमे मूर्धान् च वा वो ए जानमध्वरे ।  
 इन्द्रो दधीच प्रथमे ऽभित्वा शू यच्छते ततः ।  
 अभि पूर्वपीतये सान्त्वाहिन्ये तथा शिशु ।  
 अन्ते चैव जगृह्यान्ते ब्रह्मान्ते स्वरतोन्तमे ।  
 अथा वीतौ द्वितीये च ह्यौदया ऽपघ्नसंज्ञके ।  
 तवाह माद्ये ऽया पवा भवस्वेति द्वयोः स्मृतः ।  
 पवित्रं ते द्वितीयेऽथ प्रधन्वासो नृतीयके ।  
 सोमः पुना द्वितीये च कौर्त्तितः षष्ठसंज्ञकः ॥ १ ॥ २१ ॥

( २४ . )

ई-निधनं वेयगाने चतुर्विंशतिरुच्यते ।  
 मूर्धानं दिव इत्यन्ते ऽग्निवरो द्वये पुरुद्वये ।  
 तद्वो गाय चतुर्थं च गव्यो पुण्यो द्वितीयके ।  
 कदा वसो प्रथमके पिबा सुतस्य मध्येमे ।  
 असावि दे द्वितीये च जगृह्यान्ते च पञ्चभिः ।  
 प्र वो महे द्वितीये च्वयं ह्येषु द्वये तथा ।  
 अत्ताद्ये च सखर मस्त्रि पिबान्ते च प्रकौर्त्तितः ।  
 स्वादिष्ठयाष्टमे परि प्रियेति प्रथमे तथा ।  
 ह्यौदयापघ्नसंज्ञे न्व प्रोत्तमे तेषु सामसु ॥ १  
 ह लु अंमं पि गं प्र स्तु चि क्त ल्म सु  
 रां त वि नू ह भ ह्यो अ न्वि ग वृ ।  
 इति वेये चतुर्विंशत्यक्षरं मन्त्रधारिकम् ।  
 अत्येजितक्षरं तेज पादिनात् प्रकथ्यते ।

शश्वत्तमः ह । गर्भद्वेषु । यदि वीरो अ ।  
 प्र मः । सोमो अयः सुतः पि । घृतैर्ग । अभि प्र ।  
 न ख । नः । किष्टः क । नुदुतेः । शग्धू दु ।  
 सो रा । कः । यस्त्राहा वि । उपोपेन्नु । सघा तं वृ ।  
 पूषेभ । अया रुचा ह । ग्मिः ही । आ सोम खानो अ ।  
 यो देवान्नि । गुदेन सहृ ग । इन्द्र मच्छ सुता इमे वृ ।  
 इति त्रयोविंशत्सामसु चतुर्विंशदक्षरं  
 मध्याध्यायसंज्ञं सुक्तं मिति ॥ २.

चतुर्विंशतिः सामात्र उहद्रूपासमन्वितम् ।  
 मन्त माद्यं सुरुपाद्यं योगेयोगे द्वितीयकम् ।  
 आ ग्राह्युप नेतुक्कं त्वाग्निदि प्रथमं तथा ।  
 न सो मदे वे इत्युक्तं कस्तु मिन्द्रेति चादिमम् ।  
 इन्द्राग्नी अपादिय मित्तीन्द्रा हउ-सखान्निमम् ।  
 चन्द्रमा अग्नेरे तुर्यं पञ्चमञ्च तथाविधम् ।  
 उच्चा ते सप्तमं प्रोक्तं यस्ते षष्ठं मतः परम् ।  
 उपोषु जा द्वितीयं च प्रयद्वावेः अया पवा ।  
 आ ते इत्तं परीतो षि द्वितीयं चाटमन्तथा ।  
 तवाहं प्रथमं प्रोक्तं प्राणा शिशु द्वितीयकम् ।  
 आ सो द्वितीयं मितुक्तं सैतं सु त्यं च पञ्चमम् ॥ ३  
 चतुर्विंशतिरत्रोक्तं या श्रीहोवेति मध्यतः ।  
 अश्वत्त्वा द्वितीये च कायुष्माना द्वितीयके ।  
 मूर्धानन्दि व इत्यन्ते प्रहोता जात आदिमे ।  
 पुरुहये ऽरमश्वाद्ये तमिन्द्रं वा तृतीयके ।  
 य आनयद् द्वितीये च गसंम्राजं चतुर्थके ।

॥ वेद्यगानस्य ॥

हावाचेन्द्रोदधीचाद्ये महित्रीणां द्वितीयके ।

पिवा सुत तृतीये च यद्विन्द्रं नाहुषीषु च ।

अददरुत्परे च यं एकं इदं द्वितीयेऽन्विमे ।

अथ सहस्रं प्रथम उच्चं द्वादशके स्मृतम् ।

परि प्रिया द्वये प्रोक्तं मया पवा द्वितीयके ॥ ४ ॥ २४ ॥

( ३३ )

त्रयस्त्रिंशद्देयगान आद्विच्छेकः प्रकीर्त्तितः ।

अश्वं न त्वा द्वितीये च शन्नो देवी द्वितीयके ।

कायमानो द्वितीये च प्रं हीता नात आदिमे ।

न मिन्द्रं वा तृतीये च य आ नयद् द्वितीयके ।

ऐहो यैही प्र संज्ञांज चतुर्थे ष्णा ह गोर्द्वये ।

महिं चीणां द्वितीये च पिवा सुत तृतीयके ।

यद्विन्द्रं ना श्मि वो बोरं कुष्ठः को वा मददरुत् ।

द्वितीयेऽथ जगृह्णा ते दक्षिणन्तु तृतीयके ।

शुद्धाशुद्धीयके चाद्येऽभित्यम्पे य एवा इत् ।

द्वितीये च तृतीये च ततः ष्धा हीन्द्रं निर्वणः ।

तृतीयेऽथ द्वादशके उच्चा स्वाद्विष्ठं सममे ।

परि प्रिया द्वये ततः परि स्वाना द्वितीयके ।

आ पवस्व सहस्त्रिणं प्रकाव्यं सुशने द्वये ।

अग्निं प्रिया पञ्चमके प्र धन्वा युग्मं तुर्यमोः ॥ ५ ॥ २५ ॥

( ३४ )

पञ्चत्रिंशद्देयगाने मधीपानिधनं स्मृतम् ।

शन्नो देवी रिति युग्मं काप्यमानं द्वितीयके ।

आरोहनिर्निर्ति जज्ञानं ष्धा युग्मके तृतीये ।

गौर्इयादो कया मध्ये इन्द्रो दधोच आदिमे न  
 गव्यो ष णो यद्यत्याद्य उक्थञ्चजाय यर्चते ।  
 इ मा उ त्वं पुरु मध्ये ऽभि त्वा पूर्वं यदिन्द्र ना० ।  
 क्रस्त मिन्द्र त्वा द्वितीय इम मिन्द्राय सुन्विर ।  
 कुष्ठः को वा मखिना आ ततोऽयं वाश्म इत्यपि ।  
 कश्यपस्य सुवर्विदा अभि त्यं मेष इत्यसौ ।  
 सखाय आ शिषेत्याद्ये यस्य त्यच्छाद्यसामनि ।  
 आ याह्वयं त मिन्द्रञ्चो ऽग्निं होतार मितोरितम् ।  
 परि खानास द्वितीय आविशन् कलशं तथा ।  
 वा पवस्वेत्युप प्रवे प्र धन्वा सोम पञ्चसु ॥ २ ॥ ३५ ॥

( ४२ )

वेये सामानि कथ्यन्ते स्तोमैर्विरहितानि च ।  
 द्विवृत्वारिंशदेतानि क्रमस्तेषां मथोच्यते ।  
 अग्ने मृड महाः आद्य आ वो राजान मध्वरम् ।  
 पुर त्वा दा चतुर्थञ्च एन्यं पन्य इतीरितम् ।  
 सदा व इन्द्र स्तरणिरिक्षिषास्त मतः परम् ।  
 उ दु त्थे मधु यरेनिष्ट विधुं दद्रा त्यसू षु च ।  
 आद्यं चतुर्णां मेतेषां चातारञ्च ततः परम् ।  
 सञ्चूहणं द्वितीयञ्च तत आ नो वयो वयः ।  
 अर्वता प्राचता नारो विभीष्टो इन्द्रराधसः ।  
 आद्य मेदु मधोरक्तं यइन्द्रयोसुत्रे तुना ।  
 वेत्या हि निर्ऋतीना मथाभादभ्यो अनातुवाम् ।  
 योना इद सिद् साम इदं त्वः प्रथमं ततः ।  
 आविर्मर्शा अथाष्टमं इडा ते जात मन्वसः ।

इन्द्रायेन्द्रो द्वितीय मित्यथा सोमसु कृत्यया ।  
 पुनान्त्यं पञ्चमं प्रये जनिताद्य तथैव च ।  
 प्रं गायतेत्यधि यदा एव प्रकोश इत्यपि ।  
 प्रो अयासीदाद्यत्वारोन्द्राय प्रथमं तथा ।  
 प्र देव मच्छां क्षितुक्त मिन्द्र मच्छेति पञ्चमः ।  
 सोमः पुना द्वितीयं पञ्चमञ्च ततः पुरम् ।  
 आद्यं प्रोक्त मभिदान्नं ससुन्वेयस्यतुर्थकम् ॥ १ ॥ ४२ ॥

( : ५२ . )

द्विपञ्चाशत्समाख्यातं वेद्ये प्रद भूतः परम् ।  
 तर्जन्याद्यं कनिष्ठञ्जलं यांतातेऽस्मिन्निदिशं नम् ।  
 तिव्येवा गीतभ्ये ये विखा तृतीयं त्रिवोऽस्मृतम् ।  
 रायाभ्रमं यपोवा च प्रमं हिष्ठीयके सञ्चो ।  
 द्वितीये च चतुर्थे च स्तुभो मानो हृणी स्मृतम् ।  
 एषो उषा श्विनोवाय स्यपोवा च इमास्तई ।  
 अया धिया मञ्चोवेन्द्र इषे प्रथमके सुधो ।  
 इमा उ त्वा सुते नधोवातृश्चिदिन्द्र न् स्रवो ।  
 कद्रु प्रचेतसे स्रवो मितोवा च त्वमङ्गके ।  
 इन्द्रं क्रतु मशोवेति हृत्तीये वण्महां मही ।  
 हिरोषां पाहि या युग्मे स्याव इन्द्रायं सोमेऽपरे ।  
 यद्विन्द्रं शासो अत्रतं धिबोवा पंरिकीर्तितम् ।  
 कदाचनस्य योवेति युञ्ज्या हि इत्रहन् तिरो ।  
 आत्वा गिरो रथी नधीवा प्रत्यस्मै च दधुने ।  
 प्रप्रं वस्त्रिष्टुभं विवो सन्ते तृतीयके हरो ।  
 कृत्वा मञ्चञ्च अमोवेत्ति अस्तु श्रीषसिधीतयः ।

असाविया द्वितीये च निमीवापरिकीर्तितम् ।  
 र्वधोवेति परिस्नानः प्रथमे पञ्चमे ऽन्तिमे ।  
 अमृच्चं रयोवेति पवस्वेदेवरे ह्यो ।  
 परिस्नानास आं देमे तिधोवेति प्रकीर्तितम् ।  
 अया वीति परिस्रव प्रथमे च ततो स्मृतम् ।  
 पुमनः सोमधेत्यत्र ह्यिरोवा सप्तमे स्मृतम् ।  
 एकादशे परीतोष्यां मनोवेति ततः परम् ।  
 त्वाहं सोम रारणे तृतीये च तितो नथा ।  
 मृष्य प्रथमके तुर्ये पञ्चमे षष्ठके भियो ।  
 पवस्व देववीतये द्वितीये च मनो स्मृतम् ।  
 त्वं ह्यङ्गे तृतीये च चतुर्थे च यथो स्मृतम् ॥ १ ॥ ५२ ॥

( १३४ )

वियग्नाने नकारान्त्सपदशत मुदीरितम् ।  
 चतुस्त्रिंशत्सपदयुतं क्रमेणैव विलिख्यते ।  
 उप त्वाद्ये स्थिराङ्गने जरितद्वये ऽप्रोषिवान् ।  
 अदर्शि यस्मिन् काये हेसान् पू वो यद्दं माद्दान् ।  
 चिंता प्रथमके चरान् द्वितीये च चरन् चरन् ।  
 ऋतुषु शुकन्ते धोवान्हावो रासु ततः परम् ।  
 प्रातर्यास्मिन्नथासोहानत्र हान् सप्त प्रकीर्तितम् ।  
 राधे अग्ने ह्ये वषन् त्वं मिन्द्रा च त्रये वषन् ।  
 इदं वसो अये भयिन् यदद्य कश्च वचहन् ।  
 वय मिन्द्र तुमीवषन्निहेव शृण्व यद्दान् ।  
 दोषो आगाद् वृहद् गोमत्रा तू त इन्द्र वचहन् ।  
 सादा ष इन्द्राः सांपर्यन् नक्ये नक्की च वचहन् ।

त्वं ह्येहि चैरवे प्रोक्तं युगले मघवन्नतः ।  
 अभि त्वा पूर्वपीतये समस्वप्न-समस्वरन् ।  
 वयं च त्वा चतुष्टये यच्छक्रासि हये तथा ।  
 आ नो विश्वा त्रये प्रोक्तो वृत्रहन्वसामसु ।  
 सो षु त्वाद्ये रमन्वासान्दितीये च निरीरमन् ।  
 सुनोत सो हये पृष्णंभग्रन्मघवान् ततः ।  
 यदिन्द्रं शासो मघवान् कुष्ठः को वा ज्वान् तथा ।  
 अददरु मणवान् प्रथमे हान् द्वयोः स्मृतम् ।  
 वयो हाहाउ वावांधान् यं वृत्रेषु द्वयोर्द्वयम् ।  
 उपज्मन् को अद्य युङ्क्ते दुर्हृणायुश्च तंतः परम् ।  
 इन्द्रं विश्वा अत्रोवृधन् सर्वेषु न हि पञ्चमे ।  
 इममिन्द्रात्तरन् नास्य एतौ न्विन्द्रं स्ववामायिमे ।  
 शीर्वाणिति वयश्चित्ते प्रारान् अत्ते अहानिति ।  
 नोदेर नान्ते च वर्गेऽस्मिन् समेतं तृतीये चषण् ।  
 इमे तं इन्द्रं ते त्वादन् द्वादी यस्यां त्रये धयन् ।  
 वयं सु त्वादिमे वज्रिन्नाविर्मर्षास्तथा चारमान् ।  
 रवद्वयो रवद्वयान् विश्वस्या युगले वसान् ।  
 आविशन् कलशं प्रीच्छं द्वयोरर्षन् तंतः परम् ।  
 यवस्व वाजसा धर्मन् प्रकाषि भान् चतुष्टये ।  
 अस्य प्रिया हये प्रोक्तं तिरेभानिन्नि तंतः परम् ।  
 अक्रान्त्सुद्रो मान् कानी सायिदामित्यथ अये ।  
 प्रसे कृग्वान् प्रते ऽस्यान् देवा प्र गायतेति च ।  
 तद्वधदी हये मायन् कृवीयानधियत्ततः ।  
 महत्तद् द्वाद्वाङ्गव म्माद्यवर्जं तु तोत्तरन् ।



सप्तमे कथितं देवान् वृषा ह्यादि वाङ्मनम् ।  
 पवित्रन्ते हयोरन्ते योमान् प्राणा च पञ्चमे ।  
 द्विन्वम् त्वं ह्यङ्गित्वत्र द्वितीये घोषयन्निति ॥ १ ॥ १३५ ॥  
 लङ्घ्यवहाउवां पध सामान्तं परिकीर्त्तितम् ।  
 आघा द्वितीये — — सौदन्तस्ते वय उच्चरि ।  
 लिचतुर्थे परीतोषां वेयगाने यथाक्रमम् ॥ ५ \* ॥

॥ इति सामप्रकाशाख्ये वेयगानस्य कीर्त्तितम् ॥

( इति वेयगानस्य )

( अथ आरण्यमानस्य )

— ३०० —

॥ अतः परं मरण्ये गेयस्य गानस्य कथ्यते ॥

( १ )

एकं कौथुमशाखायन मारण्ये काङ्क्षसंज्ञकम् ।  
 सप्तस्वरयुतं सामः प्रोक्तं मत्र निदर्शनम् ॥ १ ॥  
 इमं वृषणं मित्येकं विष्टुपुच्छन्दसि कीर्त्तितम् ॥ २ ॥  
 एकं त्रिसामं गीतं त्रिषन्धिसामेति कीर्त्तितम् ।  
 नाम्ना त्वमिन्द्र मरण्ये गेयगानं त्व नाम्ना च ।  
 बृहता रथन्तरेण च संयुक्तं वामदेव्येन ॥ ३ ॥

न कथितं भाचिकमध्यं नैव स्तोत्रे चैवोक्तम् ॥

ऋक्पदसीमान्यरण्ये गेष्टे चाक्रन्दयेत्युक्तम् ॥ ४ ॥

एवाह्येवप्रभृतिभिर्बथार्चिकमध्यं तत्राप्युदे स्तोत्रे ।

हिंशब्दसहितं मभिहितं मरण्ये गेष्टं सिमसाम् ॥ ५ ॥

श्रीहोवाहोइडाद्युक्तं मेकं मेवेदं मीदृशम् ।

भ्रजन्त्यग्नइतीळान्दे ऽरण्ये गानि प्रकीर्त्तितम् ॥ ६ ॥ १ ॥

( ३ )

त्रान्तरं स्वर मारण्ये हयं माद्यं ऽश्विनोर्वते ।

होइहाइहोइहेति निधनं मोहोसंलग्नं मोहितम् ॥ १ ॥ २ ॥

( ५ )

एकारो निधनं प्रोक्तं पञ्चेवारण्यसामंसु ।

यद् द्याव इन्द्रे ते ऽष्टमं आ तू ना इन्द्रं वृत्रहन् ।

रौहिणे चोहुवीहोवा ऽथ द्वितीये वयोभनाः ॥ १ ॥ ५ ॥

( ६ )

आरण्ये षट् समस्थिता ऋग्यग्ने न स्मन्विताः ।

अतीषङ्गाश्च ते सर्वे तैर्जा स्तोत्राय कीर्त्तनम् ।

पुर उवासर्यसाव्य मभीनवन्तरत्समम् ।

उदुत्यं चित्रं सुभयं द्विसूर्ये खञ्जकेऽपि च ।

उदुत्यं ज्ञातवेदसं मिन्द्रवरश्च शंवरं ५ १

अरण्ये हाउवास्तोभस्तर्जन्यादिः प्रकीर्त्तितः ।

पृथक् प्रतुक्त्वाद्वाप्ये षडेवात् यथाक्रमम् ।

अथा तृतीयं ओवेति ह्येवेत्युक्तमस्मान्नि ।

हावीन्द्र इति हावीन्द्रो मत्स्वा वैराजसामनि ।  
 आहो एव्यो समस्यार्तो न्याशब्दो वाग्ददे दधा ॥ २ ॥ ६ ॥

( ८ )

कथन्ते ऽष्टौ द्विस्वराणि सामान्या —

अग्निरस्त्रिजन्मना च तथा धर्मं विधर्मं वै ।

सं त्वा भूता उवीयुग्म, माद्ययर्ज मंतः परम् ।

अष्टमं कथितं चात्र प्रतिष्ठासाम वागिति ॥ १ ॥ ८ ॥

( ९ )

अरख्ये नव सामानि वृचानि कथितान्यतः ।

उच्चा शाकार यगहाख्य मिन्द्र मिन्नादिनो वृहत् ।

अपत्य भुच्चा ते जातं आज्ञादिप्रभृतीनि षट् ॥ १ ॥ ९ ॥

( ११ )

एकादशैव सामोक्ता मारण्ये दीमसंयुतम् ।

हावीहोहो उहो शब्द दन्द्र ज्येष्ठं न आ स्मृतः ।

ए आसा साविवा शब्दः त्वमिन्द्रेष्व्वा प्रकीर्तितः ।

हाउवेति दाजामा ययः शब्दः प्रकीर्तितः ।

असाविदे परे प्रोक्ता ईकारा दश पञ्च च ।

मावो यादा च तत्रैव हुवीहो इति हो-स्वरः ।

आप्रागादिति हो-शब्दः प्रक्षस्य वृष्ण उद्वसम् ।

वृहहत्याय वेदय उक्कत्रय मितोरितम् ५

पञ्चत्रिंशदिति प्रोक्ता अरख्ये दीमसंयुक्ताः ॥ ११ ॥

( १२ )

आरख्ये हादशं प्रोक्तं यस्मीहोवेति लभ्यतः ।

इयाहोह प्रथमतो ऽयागायां च ततः परम् ।

अग्निमूर्हेतुं दुत्तमं मियहोदं सर्वाङ्गयम् ।  
 अयंवा हाउधामयदोहाओहांद धेनु यम् ।  
 आनोह्ववे दशस्त्रीषु प्रोक्तं मेतेषु साम्प्रम् ॥ ११ ॥  
 अरण्यं हादशं प्रोक्तं वग्रीहोवेति मध्यतः ।  
 उव वीहा उवाओवा कायमानाग्निमे ततः ।  
 ओवासन्नेपयाएस्युक्तं विश्वाधनात्ति रौहिणे ।  
 उडुवोहोवेतुपदित मियोहोवेति कीर्त्तितम् ।  
 रूपं वाक् च वयोहोद हादशैव यथाक्रमम् ॥ १२ ॥

( १५ )

पञ्चदश साम्प्रहितः स्थितसन्धिः कथित आरण्ये ।  
 इन्द्रपट्संज्ञे स्त्रीभः सर्वत्र इकारे कीर्त्तितोऽथान्यः ।  
 ओहोवेति तवेदिन्द्रा प्रथमं हस् सहस्रमम् ।  
 चिदोहमिति हुङ्कारो विद्रथे हस् अहन्नमाः ।  
 अभ्याभूरिति हस्प्रहस् सकास्थुमलं तथा ।  
 वीहायवा यमन्निति यशस्यास्त्रिन्वितीरितः ।  
 अनेयुंक्षति हस् प्रोक्तो यत्रायनिधनत्रये ।  
 आतून इति चत्वारो निधने स्वरजितः ।  
 षट् सकारे हसि प्रोक्तं वीहावङ्गिरसावृते ।  
 अर्चिः शोचिः प्रत्यये द्वे सकारे हसितीरितः ।  
 नम इति स्मृते देवव्रतमध्यमके ततः ।  
 एवाओवेति हुङ्कारो ऋक्ः सक्क कीर्त्तितः ॥ १३ ॥

( २३ )

उक्तं आरण्यके ऋक् त्रयोविंशतिरन्यजः ।  
 वयोहोहृदत एहविरत्र हंकार इरितः ।

एहिया शङ्खनिधनि प्राण्ये सत्या प्रकीर्तितः ।  
 आनोहिय मनी दोहा हा शब्दो बलभिद्-इये ।  
 भद्रसामनि हा शब्दः श्रेयःसामनि या स्मृतः ।  
 इमत्तवादिषिष्टये इहा शब्द इतीरितः ।  
 इडासामखिडा शब्द इहीहो हा प्रकीर्तितः ।  
 आधुःसामनि ता एवाह भूनिर्द्या प्रकीर्तितः ।  
 योसान्नि कथिती मेति ज्योतिःसामनि ता स्मृतः ॥१॥२३॥

( ३७ )

ऋग्वर्जितः स्तोभमयं सप्तत्रिंशच्च संख्यया ।  
 आरण्ये कथितं साम तेषा सुल्लेखनं ततः ।  
 पतिर्दिवस्ततो हाउं होहायेप्रभृतीनि व ।  
 यज्जाविवर्जितानीह हुवेवाच्चादयन्तथा ।  
 अश्विनज्योति रेवाहि सोमासोमित्यंतः परम् ।  
 इलांदप्रथम देवन्नतानि त्रीण्यहोअहो ।  
 इभा इडा इयमिति एयंस्कुन्वा वयो इयम् ।  
 सहोभाजोदरल्लोकानुन्नयामीति कीर्तितम्\* ॥ १ ॥ ३७ ॥

.. ( ३८ ) ..

जनचत्वारिंशत्साम्य आरण्ये षष्ठ इरितः ।  
 अगामायं ततो ऽग्निर्मूर्धा होवाइया ततः ।  
 इयहोइ हे शज्यदेहे चर्षणो हे सुषस्ततः ।  
 सृपा चोणि इयोः स्वादोरयंवाक्रदयेऽपि च ।  
 अभ्याभूः प्रिय-वीहाय हावीन्द्रा मित्युवा तथा ।

\* आपुरेवाहिल्लर्मविधमादीनिः च वानिचिदिह उती न् इहीतानीति त्रिव्यम् ।

धामयत्कोयमानोऽग्ने प्रसीऽग्नेऽचिक्रंदद् द्वये ।  
 विश्वे षां शुक्रचन्द्राभ्या मीवा संन्तेपया तथा ।  
 समिताद्ये दशस्त्रीभे ऽभिप्रघ्नेत्यत्रं सुर्वतः ।  
 उहुवीहो तथेयैहो अथास्मिन्नितीइति ।  
 स्वयंस्कृत्व ततोऽन्तर्देवेषु षष्ठ्य प्रकीर्त्तितः ॥ १ ॥ ३६ ॥

५४

अयामाया मीहोवाए हियाहाउ ततः परम् ।  
 तंस्मात्संत्वानोनबुर्हीहोबाईयेति होवोबि च ।  
 इन्द्रोराजा द्वये प्रोक्त सुदुस्तममिति द्वये ।  
 चिदोहुमाइहोहाहुम् प्रयचक्रमरादिमे ।  
 होइयाहोइया वांथ प्राणादिदशकेऽपि च ।  
 विश्वतोदावन् प्रथमे स्वादोरिन्द्रोमहाग्निमे ।  
 विश्वे षामथ याम्याख्ये नाकेसुपर्णामानि ।  
 हाउहोहाइ यज्जेति पञ्चमे बाग्ददेति च ।  
 कश्यकह्वाकिंद्रामैरयत्राप्राणादिपञ्चके ।  
 हुप्सामनोद्रीहो वाचस्ततोविराड्जोयत ।  
 वयोमनो वयथाद्वा न्बोतिर्हीदीहि षट् तथा ।  
 सर्वत्र चैव कथित मीज्जारं निधनं तथा ॥ १ ॥ ५४ ॥

( ६३ )

चिन्वतितम् मिह कथित भरथ्यं गेयुपदं नेकारोक्तम् ।  
 तत्पदसहित मभिहित् मभिहित्सिम् च अयस्त्रिंशत् ।  
 यद्याद्वितीये त्वावश्लिन्नक्रान् रिवासुतद्वये ।  
 होवाभीद्वये स्वदानाक्रन्द्य प्रथमे ततः ।  
 यन् शब्दद्वयं मलाश्रवीह्ययवे संग्रमन् ।

दुस्तरान् द्वादशः प्रोक्तं चेतुषाम्नि ततः परम् ।  
 उपत्वाजामहस्ते स्थिरन् धाम्भ्यस्जनयन्निति ।  
 यशस्यमस्मिन् षष्ठित्युक्तं यच्छब्दये च ह्रस्वहन् ।  
 यद्दिभ्रशाम्भ्येभ्रव्रते-युग्मे शुभाघावावन्निति ।  
 तृतीये हाउहोहाइ पञ्चधोक्तं समैरयन् ।  
 अयम्व्योतिरत्र त्रिदेवान् सोमव्रते ततः ।  
 सोमाराजान् ततो गावोहाउ जानानतः परम् ।  
 ऐरयभ्रव्रं कथितं मष्टादशपदं तथा ।  
 गायुर्यन्निति षट् प्रोक्तं दशरतोभि च साप्रनि ।  
 अहाग्-हय महस्तेकं ह्रस्वहत्याय-सारनि ।  
 अग्निरस्मिजन्मनाऽऽसन्नक्रान् अर्धान्-तयं स्मृतम् ।  
 एवाह्वेत्यत्र पूषान्-सन्नेति न्यैरयन्-हयम् ।  
 उवीति त्रय मायुर्धन् तरणिर्विष्णु मानुषान् ।  
 सिंसामग्नि ह्रस्वहन् पूर्वमप्यत्र कीर्तितम् ॥ १ ॥ ८३ ॥

( ६ )

उहुवाइहाउवेति गान् मारण्यके च षट् ।  
 हावोहो ऽभित्वाह्वषभा श्रीहोभालामहा तथा ।  
 इन्द्रज्योष्ठं ह्रस्वाम हुवोहोइ च मध्यमम् ।  
 यज्जायथा हसन्तं धोरयि वीऽन्न प्रकीर्त्तितम् ॥ १ ॥ ६ ॥

॥ समस्तमिदं मारण्यम्—

( इति मारण्यगान्ध )

## ( अथ ऊहगानस्य )

—ऊहस्याथ प्रकथ्यते ॥

( १ )

एकैर्धमंखिले ऽथ्येक मेनेदेव प्रकीर्त्तितम् ।  
 अयापवस्वदेवकुरित्यूहे सप्तसंज्ञकम् ॥ १ ॥  
 एकविंशतम् प्रोक्तं स्वासु हनः प्रपाठकः ॥ २ ॥  
 सुताहन्द्रा सोमसामि ग्रहणोद्घातवर्जितम् ।  
 हाडकारांक्षरं तस्य विद्वन्ध्यान्यत्र नेदृशम् ॥ ३ ॥  
 सप्तसंज्ञं पञ्चिप्राधेत्युक्तं ग्रहणवर्जितम् ।  
 यिसंज्ञमक्षरं प्रोक्तं मस्याप्यन्वत्र नेदृशम् ॥ ४ ॥  
 एकपादा प्रथमा सा श्रीहीहाइति या स्मृता ।  
 द्वितीया च तृतीया च त्रिप्रदां पश्चिर्निर्दिता ॥ ५ ॥  
 ऊहे इत्यन्तरसंज्ञश्च स्वयः संचारसामनि ।  
 दुग्न्तानि मानुषाणां मितुप्रदाहरणं मीरितम् ॥ ६ ॥  
 पञ्चविंशतिकं मूहे पञ्चग्रहणं तत्पदम् ।  
 एकं मभिद्रोषेति च प्रोक्तं सरमाख्यसंज्ञकम् ॥ ७ ॥  
 सोद्घातं पञ्चग्रहणं पञ्चविंशतिकं साम् ।  
 ऊहे सुज्ञानाख्यं मिन्द्रमच्छा कथितं मित्येकम् ॥ ८ ॥  
 दशभिर्ग्रहणैर्दशविंशतिभिर्दशप्रदैः ।  
 ऊहे श्यायन्तं गोष्ठाख्यं क्षाम कथितं मित्तेरकम् ॥ ९ ॥ १ ॥



( २ )

जहे सामद्वयं प्रोक्तं मिकर्चं स्वसुसंज्ञकम् ॥ १  
 श्रांसोताणं सख्यं चेति काचः सीक्तं मिति द्वयम् ॥ २  
 सामद्वयं मिदमूहे धर्म-विधमेति कीर्तितं नाम्ना ।  
 त्रिष्व सुभयमिलितं न च पुनरुदितं मपरम् ॥ ३  
 एकस्य वेयसान्नोऽत्र ज्ञेतिरूहे द्विधा स्मृता ।  
 वासिष्ठाङ्गिरसाङ्गोष्ठे, स्तोभयुक्ते निदर्शनम् ।  
 धर्तादिव असाविसो साम्नोर्वासिष्ठसंज्ञयोः ।  
 श्रीणन्तो गोभिः नानोवा साम्नोर्गोष्ठाख्ययोः स्मृतम् ॥ ४ ॥ २ ॥

( ३ )

सामद्वयं मिदमूहे द्विस्वरसंज्ञं कीर्तितं चास्मिन् ।  
 दादन्त्युत मिन्द्रयिन्दविति मरायेऽपि च तवाहञ्च ।  
 क्षिप्रपरिक्वर्जितं मूहे ऽत्रैव प्रोक्तं प्रपाठकत्रितयम् ।  
 नक्षत्री विंशतिर्गण इति तथा त्रयोविंशतिश्चैवम् ॥ २  
 द्विसामं गीतं मन्त्रोक्तं मूहे सामत्रयं ततः ।  
 अर्न्तारेण च संयुक्तं यौधाजय मिति स्मृतम् ।  
 श्यैतेन चापि सम्पूक्तं नौधसेन च संयुतम् ॥ ३ ॥ ३ ॥

( ४ )

चतुर्ऋचश्च चत्वारः साध्यास्ते कथितास्ततः ।  
 अभिसो मर्कटा राजा प्रह्विन्वेति चतुष्टयम् ।  
 परित्यं द्विर्यं मिन्द्राय श्रीणन्तश्च त्रैतुष्टयम् ।  
 प्रत्यैमेन यदीसते ऽस्या अस्मेति चतुष्टयम् ।  
 परित्यं द्विर्यं मिन्द्राय सा ए सखेतुत्तरे तथा ॥ १ ॥ ४ ॥

( ८१ )

सन्तन्यष्टी प्रकथितः प्रस्त्रवोक्ते खनादतः ।  
 अहीसाउ वृषाहाउ अषीहाउ अमीहाउ ।  
 अस्ताहाउ पवाहाउ इन्द्रेहाउ वयुहाउ ॥ १ ॥  
 यतइन्द्र पुनां मृज्य पुरी पाहि दुहा तवा ।  
 इमं सोमं च कथित मन्त्रैवाष्टौ समन्वकम् ॥ २ ॥  
 निषेधसंज्ञ मुदित मष्टौ साम यथाक्रमम् ।  
 पुनान इन्दुः आर्यन्त पुरोऽयम्पू पिवासुत ।  
 सोमानाञ्च ततः स्वादइष्टयासदाइष्टया ॥ ३ ॥  
 प्रसोमासोमदं चुरतः तिस्रोत्राचि उदीरते ।  
 आयिरातायि परिस्रुतासी गरयिरिष्ठाः ।  
 अदाभ्यः पुरः आयिता यस्तेमदो वरायिणियाः ।  
 पवमानो अज्जइ जनात् अचि क्रदद्गृप्रहिराइः ॥ ४ ॥  
 सफ मष्टौ प्रकथितं पवस्वधा अयोपवा ।  
 अभिदुग्न् हृहत्परिप्राधां भद्रोन इत्यग्नि ।  
 आसोतापोपशिचाप ससुन्धेय इति क्रमात् ॥ ५ ॥ ८ ॥

( ८२ )

आमहीयवसाभानि नवसह्यानि यानि च ।  
 प्रस्त्रवोक्ते खनात् तानि कथनीयान्यतः परम् ।  
 उच्चातेजातमन्वसा एवाहोअसिवीरयूः ।  
 हवीपवस्वधारया अन्नाहव्योअनातुवाम् ।  
 अस्यप्राणामपानता इन्द्रायेन्द्रोमरुत्वते ।  
 उगहृहतोअचीयाः पवमानस्यजिप्रताः ॥ १ ॥

नौघसाभि नवोक्तानि यत्तावोक्तं खनादिह ।  
 तंवोदस्यमृतीष हामिन्द्रक्रतुचंभ्राभरा ।  
 अमभ्रायाहि त्वम्भयिरिमाउत्वापुरुवसो ।  
 तंवोदस्यमृतीषाहामायिन्दुरखोनकृत्वाः ।  
 जसोदेवोहिरण्ययाः पूरोजितैवोअन्वसः ।  
 तंवोदस्यमृतीषहाम् अस्यार्षन् ( ? ) ॥ २  
 आन्धीगवं नव प्रोक्तं पुरःपर्युसुतविशः ।  
 अभीनोवा परित्यञ्च सोमाः पचन्त इन्दवः ।  
 पवस्ववा पञ्चदश पावास्तेत्रकविंशके ॥ ३ ॥ ८ ॥

( १० )

जावसंज्ञानि सामानि कथ्यन्ते ऽतःपरं दश ।  
 अथोवा धर्तीवा सूर्योवा समीवा अञ्जोवा ।  
 पथोवा जनीवा एतोवाअवोवेति दश ॥ १  
 दश श्वावाश्वकं प्रोक्तं पुरः पर्यु विसः प्रसू ।  
 अयम्भूषेत्यभीनोवा परित्यञ्चर्यतोहरिम् ।  
 सोमाःपवन्तइन्दवः पवस्ववाजसामृतः ॥ २  
 दश श्यैत मथ प्रोक्तं मभिंप्रेन्द्रक्रतुचंभ्रा ।  
 आनोविश्वासुह स्वादो रिमाउत्वा पुरुवसो ।  
 तद्भिदासे इदुरशः पुरंउक्ते ऽभिप्रवाङ्गकम् ॥ ३ ॥ १० ॥

( १२ )

कथ्यन्ती धामदेव्यस्य प्रस्तावा द्वादशीव हि ।  
 काया अग्निःपारो शायिशु ताया देव कास्तम् ।  
 एदु आदना प्रातुर शायिमाः आग्ने ॥ १ ॥ १२ ॥

१४

सत्रासाहेत्यसामानि कथ्यन्ते ऽत्र चतुर्दश ।  
 पुनानो अक्रमीदधी ओवा । अग्नायिं वोहधुन्तम् ओवा ।  
 उघाते जातमन्सः ओवा । अस्याप्रक्षां मनुसुरतम् ओवा ।  
 पवास्व मधुमन्तमः ओवा । प्रधाष्वा सोमजागृविः ओवा ।  
 अग्नायि त्वन्नोअन्तमः ओवा । त्यासुवः सत्रासाहम् ओवा ।  
 वसूरुचो दिव्या अभोवा । यस्तेमदीवरेणियः ओवा ।  
 पवास्व दन्नसाधनः ओवा । अग्नायिः मूर्धादिवःककुत् अेषां ।  
 तुवांहि वङ्गदेत्रिया ओवा । स्वराग्नि वोधातमीभुवः ओवा ॥१॥१४

( १६ )

जरावोधीयसास्त्री ऽत्र प्रस्तावाः षोडश स्मृताः ।  
 येमो मासोवा । यस्ते मदीवा । ओस्यां प्रस्तावा । पारी सुवेखा ।  
 स्वादि षयोवा । मन्द्रा होतावा । उवा तेजोवा ।  
 आइषुं तोकोवा । जारा बोधीवा । इन्द्रा मच्छोवा ।  
 प्रासो मासोवा । नामा स्तओवा । पावा मानोवा ।  
 प्राति थासोवा । एषो उषीवा । प्रावा जियीवा ॥ १ ॥ १६ ॥

( १७ )

अथ सप्तदश शुद्धे प्रस्तावाः परिकीर्तितः ।  
 उपीषुजातम् असुरोवा । प्राणाशिशुश्महीनोवा ।  
 इन्द्रमच्छा सुताइमेवा । अं वः सखायः मदायोवा ।  
 मेभ्मः पुनानो जर्मिणोवा । नदेव ओदतो नोवा ।  
 अग्नेवाजा स्यगोमतोवा । प्राणाशिशुश्महीनोवा ॥

गोमन्नायिन्दो अश्वयोवः । तंवःसखायः मदायोवा ।  
 उषस्तच्चन्द्रम् अभरोवा । अश्विनःवार्त्तिः अस्मदोवा ।  
 पन्नस्रदाइवा वीतयोवा । एनावोःग्निं नमसोवा ।  
 प्रत्युवदाश्रि आयतोवा । इमउवां दिविष्टयोवा ।  
 अनेविवास्तत् उषसांवा ॥ १ ॥ १७ ॥

( १८ )

कालेयस्याष्टादशैव प्रस्तावाः परिकीर्त्तिताः ।  
 तूरोभार्यिवीविदहस्रम् । प्रत्साधस्यमासदात् ।  
 मक्षरासोमदचुरताः । दुहानोन्नभजधनायि ।  
 सोमोदुग्धाभरत्ताः । वृषोआचिक्रदहनायि ।  
 परितोमिच्चतान्नुताम् । पुनानासोमधरया ।  
 पवस्वानधुमत्तमाः । अच्छानः शीरशोचिषाम् ।  
 यस्यायांविश्वआर्याः । इन्द्रंवाइश्वाम्रवीवृधान् ।  
 एषा ब्राह्मणः । वयमूखः मपूर्विया ।  
 मक्षिया पायितेस्रहः । आचान्नाथं यथोतयाइ ।  
 इन्द्रा योहियेषिताः । गापन्तुइ त्वागायत्रीणाः ॥ १ ॥  
 अष्टादशभैवर्त्तस्य प्रस्तावाः परिकीर्त्तिताः ।  
 उदुतेरमाधुमत्तमो वां । माचागिदुःन्याइउसतोवा ।  
 तंवोदास्रमृतीषहोवा । अभाइप्रावसुराधसोवा ।  
 आवासाहस्रमंगतोवा । यीराजाचर्षणीनोवा ।  
 सुवामा इन्द्रयशाभसोवा । पिबासुतस्यरसिनोवा ।  
 असोमादेतवीतयोवा । उलोदेवोदिरण्ययोवा ।  
 अभायि सोमासुभायवोवा । पराइधाइउरातिताउइहोवा ।  
 सन्द्राणयातिधरयोवा । पवमानाभियर्षसोषः ।

पुनानास्मीमधारयोवा । वयाङ्गास्विसुतवन्तीवा ।  
श्रद्धाजपुशचीपतोवा । सुवाभायिन्द्रप्रतूर्तिष्वोवा ॥ २ ॥ १८ ॥

( २२. )

गौरोवितस्य प्रस्तावा द्वाविंशति रथोदिताः ।  
प्रसु न्वानां यन्नन्धसाः । अयम् पूषा रयिर्भगाः ।  
सुता सोमा धुमत्तमाः । इन्द्र जुष्वा स्वभवहा ।  
पवस्व वाजसा तयायि । सोमाः पवात इन्द्रवाः ।  
पुरः जितायि वन्नन्धसाः । अभी नोवा जसातमाम् ।  
परित्यक्त्वायतः हरायिम् । आज्ञां शुवाभिः विप्रक्तंमम् ।  
प्रसु न्वाना यन्नन्धसीः । अयं पूषा रयिर्भगाः ।  
प्रति अन्मायि पिपीषतायि । विशः विशो वी अतिथायिम् ।  
उत्सः देवो हिरण्ययाः । परि जघ्नू प्रधानावा ।  
बणमहा आभि सूरियम् । किमित् तवायि णोपरिचा ।  
इममिन्द्रा सुतम्पिवा । असा विसो मइन्द्रतावि ।  
गायन्तित्वा गायत्रिणाः । ऐन्द्रयाङ्गा इहरिभायिः ॥ १० ॥  
प्रस्तावा वारद्वन्तीयसान्त्रो द्वाविंशतिः स्रुताः ।  
रेवतीर्नाः श्रीहोहायि । परिप्रधा श्रीहोहायि ।  
तरोभिर्वा श्रीहोहायि । उपत्वाजा श्रीहोहायि ।  
परिसुवा श्रीहोहायि । तुवन्नश्वा श्रीहोहायि ।  
अश्वन्त्वा श्रीहोहायि । यन्नायशा श्रीहोहायि ।  
एहियुषा श्रीहोहायि । शुधीहवा श्रीहोहायि ।  
सा श्रीहोहायि । इन्द्रविष्णा श्रीहोहायि ।  
प्राणशिश्रा श्रीहोहायि । हनावोश्वा श्रीहोहायि ।  
प्रववदा श्रीहोहायि । इमाउवा श्रीहोहायि ।

अग्नेर्विधा श्रीहोहायि । अभित्वाशा श्रीहोहायि ।  
 तुवामिन्द्रा श्रीहोहायि । रेवाइन्द्रा श्रीहोहायि ।  
 इन्द्रायेंद्रा श्रीहोहायि -- -- -- ॥ २ ॥ २२ ॥  
 यज्ञायज्ञीयसामान्नि । चतुर्विंशतिसंख्या ।  
 प्रस्तावोल्लेखनात्तत्र कथ्यन्ते तान्यतः परम् ।  
 यज्ञाय पुनानः पुरोजि देवोदः अदाग्निं विशोवा ।  
 समायिहं प्रदेवः इन्द्रायः पवायितः अयांपू धर्त्तादिवो ।  
 अभायिग्निं वृषाम पवास्व परायित्यं अभायिनः आजागृ ।  
 उंणोअं इवायिद्यु पवास्वमा पुरोजि सोमाःप सोमाःपः ॥ २ ॥ २४ ॥  
 जहे स्तोभैर्विना साम सप्तत्रिंशदथोच्यते ।  
 सर्वं यीधाजयं प्रोक्तं पुनःनस्सो प्रसोमदे ।  
 श्रीणन्तीगौ प्रह्विन्वानः प्रत्नम्पौष्टु तुचेतुनः ।  
 पुःहिनोअ तवाहंसो असोमा च्त्तरभंयुतम् ।  
 परीतोपिध्वतासुत मिन्द्रमच्छ अयापव ।  
 पपतेहर्यतः प्राणः चाग्नेवाजस्यगोमतः ।  
 गीमूत्रउ परिच्छापं परिप्राधेति चाष्टकम् ।  
 अथ नानाविधं द्वाभ्यं हरदशैवात्र कथ्यते ।  
 यस्तोमचित्रसुकृथाया मेषस्यधारिणासुता ।  
 प्रोयुसो दसाविद्यव्यभ्यालीशं यदुच्यते ।  
 अंतश्चाश्वी तथा गोविद्यभ्यालीशं प्रतुद्रवा ।  
 अभिप्रियाणि वासिष्ठं स्वादिष्ठयेति शैशवम् ।  
 पुनानो आयास माद्य मेतामूल्यं देशक्षिपा ।  
 प्रोवा आयो रभिकन्द मिति हार्दशं कौत्तिताः ।  
 सप्तत्रिंशदिति प्रोक्तं सर्वं भवति वर्जितम् ॥ १ ॥ ३७ ॥

( ६८ )

प्राद्यस्तोत्रीय मेकस्य मूनसप्रतिसंज्ञकम् ।  
 अद्यप्रंपाठके प्रोक्तं पञ्च तेषाञ्च कीर्तनम् ।  
 प्रसोमासो ऽयाप्रवस्व पवतेहा प्रसुदयम् ।  
 पवस्वे न्द्रमच्छं यम्पूषा गौरीवितं स्मृतम् ।  
 आसोतासा सखा चैति पञ्चैवोक्तं द्वितीयके ॥  
 पवतेह्यंतो युग्मं पष्ठे प्रीक्तं मिदं दयम् ।  
 सप्तमे हं परीत्नेषां माधुच्छन्दसं मांयास्यम् ।  
 तं वः सखा दयः प्रोक्तं मष्टमे च प्रपाठके ।  
 प्रसोमदे ऽभिसोमस्य च हं ऽभिवत्तं तथैव च ।  
 अभिदुम्नं हृद्गुप्राणा पवतेह्यंतस्तथा ।  
 अभिसोमा प्रसोदयं तं वः सखाय अग्रियहि ।  
 उक्ता नवैव नवमे दशमेऽपि नव स्मृताः ।  
 पवस्वमध्विति प्रोक्तं मिडासंज्ञासंज्ञकम् ।  
 परिप्रधन्वा ऽऽइन्द्रा पुन्ना आयन्ता आयाकुचा ।  
 इन्द्रायेंद्रो भदंवओ पाहिनी दैषं संज्ञकम् ।  
 एकादशे च कथितं मडेवैकसंज्ञकम् ।  
 भद्रो नो अग्नेवजाद्यं स्थावाश्वाख्यं विशोविशः ।  
 प्रसोमासो प्रधन्वासो प्रसुनां वाश्वसंज्ञकम् ।  
 अतः परं त्रयोदशे मञ्जैव पत्रिकथ्यते ।  
 पवस्वमेति चावनं स्वादिष्टये न्द्रमच्छं च ।  
 अत्रैव्योषूपमित्याद्यः पुनानुस्तोमधेत्यथ ।

\* गौरीवितं मिति 'अद्यप्रपाठके' इत्यसौ 'विशेषण' काश्चिन्व्यर्थम् ।  
 † मास्काप्रनिधनार्थः प्रहितव्यादेः स्वह न युक्तं मन्त्रं अग्नेकदेशाभियतत्वात् ।



पवस्वमा चतुर्दशे षोडशे त्रय भिष्यते ।  
 परिप्रिया प्रसुन्वाना ऽभिसोमस्य मतः परम् ।  
 पत्न्यं वासितोत्तरं प्रोक्तं च सप्तदशके ।  
 सोमः सोमाश्च पर्येषु मार्च्यमानः सुहस्त्रिया ।  
 स्वादिष्ठयेति विंशतितमे चत्वार इतीष्टियाः ।  
 उपशिच्चाप-युगलं संसृत्वैयः मस्त्रिधा ।  
 पवस्ववाजसा-युग्मे पावास्व सोमा च स्मृतम् ।  
 सप्तैकविंशतितमे द्वाविंशतितमे स्मृतम् ।  
 श्वैतश्च नौधसञ्चैव पुरोजिती प्रकीर्तितम् ।  
 इत्यूनसप्ततितम माद्यञ्चैकञ्चसंज्ञकम् ॥ १ ॥ १८ ॥

( २३८ )

जहे गाने नंकारान्तं पदं प्रोक्तं मतः परम् ।  
 जतत्रिंशत्पदयुतं शतद्वयं मिति स्फुटम् ।  
 अभित्वाहृषभा दभन् गामिदं रसोवमाइन् ।  
 त्वास्मिन् नभिद्रीणा ऽक्षरन् हृषाशीणो प्रचोदयान् ।  
 कृण्वान् हृषामता इभविशान्मजनयन् मधुक्षन् ।  
 तवाहंसो तितानिति तितानिति हृषं स्मृतम् ।  
 विश्वोहायि स्वरान् तुवंहि षायारुः सोमःपुन्यं यान् ।  
 सोमः पवान् तिरेभन्विः स्तोमान् पश्यानश्चर्यम् ।  
 गामिन्नितीममी सारान् अर्षासोमिति साइठान् ।  
 सोमउष्वाणं इत्याङ्मानिन्दुदीहो ज्ञ दाइवान् ।  
 एतमुत्थं हि मधुमान् सुष्वाणसः समस्वरान् ।  
 प्राश्रया त्रिरहान् वयं हृषहृत्प्रघवम् तथा ।  
 हृत्तादिवः समीरायदं मधुयं मघवन् तथा ।

धर्मसामनि विधर्मा नर्कसुष्ये तथा योमान् ।  
असाविसो सरान् आयंसोदयन् प्रथमं स्मृतम् ।  
त्वच्छ्रद्धादेव वीषायानुदूत्येभुमत् स्वराज् ।  
प्रकाश्रि रेभान् प्रोवा हान् प्रसेमासीषि सक्षरान् ।  
वृषाशोणो प्रचोदयाज् कृण्वान् सुता क्षरान् ततः ।  
पवोही स्थायिरानस्या रेभान् सोमा रूपारहा ।  
अभिनि हावाज् शूर शत्रून् कृण्वान् वाजान् तुवा श्रववान् ।  
प्राणा हित्वान् सासरान् च साकमुत्तहये तथा ।  
जानताद्ये भान् स्तोमान् च ततः पश्यान् वीषुजानान् ।  
सोभोदुग्धाभिरामान् पुन् निन्दुर्वाजीति कथ्यते ।  
देवान् पुन्वानभिधाय यंश्वान् वृषामती विशान् ।  
नायानथ वयङ्गात्वा वृत्रहन्मघवन् तथा ।  
तिस्त्रीवाच उक्तमुद्रान् शिशुंयज्ञा तथैव साञ् ।  
धत्तोवा मीरयानिन्द्रकतु श्यैते च भौमसे ।  
अस्मिञ्च्छ्रु इति प्रोक्त अग्नीविष्वास वृत्रहन् ।  
मत्तम्योयु समास्वारं नृदशि यास्मिन्कथा इनाः ।  
अपपाजान् च स्तोभामान् च विश्वानिति तथा स्मृतम् ।  
उपव्राजा स्थिरानाचोधापूर्षेति स्वरान् इयम् ।  
तुवाञ्छ्रवत्प्रदेवेत्या गृस्मिन् यस्तेम सायिदान् ।  
तुवंहियं षयंज् लोकमूची यानित्यतः धरम् ।  
प्रवमानो अजीजनं राजान् दुःमानितीरितम् ।  
अग्नीविष्वास वृत्रहन् पवोही स्थायिरान् तथा ।  
इन्दुरश्वो वियोममन् अस्मान् पिबोक्तेभुमंजके ।  
इन्द्रमभोवेति च प्रज मुक्तेषु च समस्वरान् ।

साधीहीहाइ शान् प्रोक्त यस्तेमदो च साइदान् ।  
 आत्वाविशन्विन्दवस्व वृषन् च वृत्रहन् तथा ।  
 इदंविष्णा शुभान् यान् प्रसोमासा चरान् तथा ।  
 अभिप्रकल यान् मोषु वासान् यस्तेम सीदान् ।  
 यज्ञाङ्गनीये च इन्द्रायेन्द्रो वानित्यतः परम् ।  
 — — — दाइरान् च प्रकावियाम् च रायिशान् ।  
 प्रोया हान् शिगुंयज्ञा इये रिभान् तथैव मान् ।  
 इस्त्रिंहयं-यज्ञायज्ञीये देवान् प्रकीर्त्तितम् ।  
 अक्रान् धर्मान् तथा देवान् पुनर्देवा नमावसो ।  
 देधन् नात्वागृदिस्त्रिष्णान् पवमानो अनीजरात् ।  
 दुमान् द्वितीये च दुमान् प्रसो सुता चरान् ।  
 साकां प्रान् च कृईलेदं माहान् त्वमिन्द्रे अवान् ।  
 तुमंत्यत्र दामान् त्रि रावाविशन्तु वृत्रहन् ।  
 आवो दाइवान् तुवाहियं गेति यघीषयन् ।  
 अनूपेगो प्रोक्त माग्नान् धयांहाउ च वृत्रहन् ।  
 प्रसोसासोतः चरान् सुताइये चरान् भुवान् ।  
 तवाहंसो ऽर्कपुष्ये च मान् माण्डवे ज रातितान् ।  
 सोमउष्वा ततो अरभान् तृतीये रमन् ततः परम् ।  
 सृञ्चा-द्वितीये मान् पुभा-तृतीये मान् यशो योभान् ।  
 इन्द्रं विश्वा ऋवीवृधान् त्वमङ्गि ऽस्मान् इयञ्च भान् ।  
 तृतीयाया सृचि ततो मन्त्रि वाच तथैव वान् ।  
 अचिक्रददृष्टषा अहान् किमिद्विद्वानतः परम् ।  
 अभित्वाशूरनीनुमाऽऽन् च्छब्दः पारिकिर्त्तित ।  
 श्रीहीतुं हि मघवन् इयञ्च पाइवान् घनन् ।

शूधाद् दान् तयं सुता चरोन् क्रुवान् तनः परम् ।  
 इममिन्द्रसुता भियञ्जरानिमं राण् तथारणेम् ।  
 खेन् त्रितयं नतं सुष्वाशासोविष स्वारेण् ।  
 सोमःपत्वा चाळः मश्यान् शिशुञ्जलि पूर्ववत् ।  
 आक्रान् प्रक्वा शिशु चाक्रान् पुनरुक्ताश्च पूर्ववत् ।  
 एतामुख्यं तथा धूमा न्माद्वये च पूर्ववत् ।  
 अदर्शि यास्मिन्नितुक्तं नकारान्तं एदं तथा ॥ १ ॥ २२६ ॥

॥ जहगानस्य संपूर्णं मिदं सामप्रकाशनम् ॥

( इति जहगानस्य )

( अथ जहगानस्य )

अथातो जहगानस्य वक्ष्ये सोमप्रकाशनम् ॥

( १ )

एक मूह्ये चतुःसाम गीत मगेलवश्च ॥ १

एक जह्ये नीचसंज्ञः प्रस्तावे भूरिति श्रुतः ॥ २

एक जह्ये प्रकथितं त्वचदयविस्मिश्रितम् ।

यदिन्द्रचित्रमङ्गलि सामात्मीपङ्गसंज्ञकम् ॥ ३

स्त्रीभमय मेक मूह्ये व्याहृतौसंज्ञथ भूरिति ॥ ४ ॥ १

( २ )

यत्तं गीतं अतोक्त मूह्ये सामङ्गयं तत् ।

रथन्तरं च लहती लहद्रथन्तरिणं च ।

युक्तं सामद्वयमिदं स्वागुनेद्वक् प्रकीर्तितम् ॥ १  
द्वितीयः षष्ठ्यैकश्च हीम जह्ये प्रपाठकः ॥ २ ॥ २ ॥

( ६ )

आद्यर्चजात्र मेकर्चं भूह्यगाने षड्डीरितम् ।  
भद्वंश्रोदतीनाञ्च पुनानःसोम सप्तहम् ।  
पवतेह्यतो यस्तेप्रदश्च बलभित्नुद्वयम् ।  
अयम्पूतारविर्भगः परित्युह्यतुह्रिः ॥ १  
षट् सामानि खिलान्यूह्ये कथ्यन्ते तान्यतः परम् ।  
अग्ने तन्नश्च होहोत्र नूरादि व्याहृति तथा ।  
ए आग्नीवस्तथा प्रोषू अयः प्रोक्त मियेति षट् ॥ २ ॥ ६ ॥

( ८ )

जह्यगाने समुख्यातान्यष्टावाधर्वणानि च ।  
पर्वलदक्षसाधनं परीतोभिश्चतासुतम् ।  
पुरोजितीवीअन्धसः पुनानःसोमधारया ।  
अभिसोमासआयवः पारधीरतितादृष्टि ।  
तं वोदस्मृतीषह मूर्धप्रवःसुराधसम् ॥ १ ॥ ८ ॥

( १४ )

द्विस्वरं साम कोथेत श्रुह्ये सामचतुर्दश ।  
एकश्च प्रथमं धृषा चास्यप्रत्नमनुदुगता ।  
विभ्राड् बृहत्तुवाहंसो वणमहा मिन्द्रमित्तः ।  
इन्द्रक्रतुः पुरोजिती आयक्तद्भ्र चेत्यथ ।  
पर्येषु प्रधन्वा च्छथ पुरा सश्रीत्यसंज्ञकम् ।  
पुनः पुरोजिती प्रोक्त मखिनोर्वतंमुत्तरम् ।  
यवाः अतः द्वयः चैव पुनः स्वादिष्ठयेति च ॥ १ ॥ १४ ॥

( २८ )

उच्चैः सामाष्टादशैव प्रोक्त मेकैर्द्विसंज्ञकम् ।  
 आद्ये सूषा ऽथ तृतीये नदं वओदंती स्मृतम् ।  
 अयञ्चोक्तिं पुनानः सो होत्रायि पुनर्त्तं तथा ।  
 यस्तेमदो चेन्दुरश्वो भूरा इत्याश्रीण इत्यपि ।  
 तुर्ये द्विर्यश्च यदुक्त परिष्वाइणा ततः ।  
 परित्यंहर्यतं चोक्त मुक्तर्पाख्य मितोरितम् ।  
 पञ्चमे प्रत्न मितुक्तं सखेन्दुरश्व इत्यपि ॥ १ ॥ १८ ॥

( २१ )

जह्मगाने खासुसंज्ञ मेकविंशतिसंख्यकम् ॥ १ ॥ २१ ॥

( २३ )

त्रयोविंशतिमुद्दिष्टं सूह्य गाने गथन्तुरम् ॥ १ ॥ २३ ॥

( २४ )

जह्मगाने बृहत्संज्ञं चतुर्विंशति रीरितम् ॥ १ ॥ २४ ॥

( २६ )

उच्चैः स्तोभपरित्यक्तं नवसामात्रं कथ्यते ।  
 रूषाम् विभ्राट् बृहद् वात बणमहा इन्द्रमित्ततः ।  
 इन्द्रप्रातुः पुरोजिती मूर्धानन्दिक् इत्यपि ।  
 पर्युष्टिति नव प्रोक्तं मथान्यत् स्तोभसंबुतम् ॥ १ ॥ २६ ॥

( ४१ )

एकचत्वारिंशदुक्तं अन्त्यस्तोभविर्वर्जितम् ।  
 अस्तेमदः परीतोषी चतुर्थं भिति कीर्तितम् ।  
 असास्यप्रत्ना अयन्तं पुनः आयन्त इत्यपि ।  
 परि चोच्चा पुनः परी नदिदासं त्रिकदुके ।

नदं वओदरी धर्तः यस्ते च बलभित्तया ।  
 त्वमिन्द्रशंअसीति पुरो संमित्यसंज्ञकम् ।  
 इन्दुस्तथायंसोमश्च तिस्रोत्राचास्ततः परम् ।  
 आयांपूषेति तिस्रोवाच उदीरित इत्यपि ।  
 पारी स्वादिष्ठया हाइर्या परिस्वान इत्यतः ।  
 अभिप्रिया आयिणा च पुनानःसो पुरोजिती ।  
 पुत्रोदे ऽभिभवः पुना स्वादिष्ठया ऽयङ्गीस्तथा ।  
 पित्रासोमा शुधीहवां पुरोजितीव इत्यपि ।  
 अक्रानिति च संप्रोक्तं मन्यस्तोभविवर्जितम् ॥ १ ॥ ४१ ॥

( ५८ )

ऊह्य पदं नकाशात् मेकोनषष्ठितमं स्मृतम् ।  
 अभिसोमादिषु प्रोक्तं मन्तरिक्षेषु पञ्चसु ।  
 अक्रानिति ततो यद्या ह्येन ह्येति यस्मिन् ।  
 — — — — — आमा सरानिति द्वयम् ।  
 तदिदामा च तिशत्रुं चिराग्मानिति च त्रयम् ।  
 हर्षो यानत्र किसिद्विद्वान् त्वमिन्द्रशा अश्रवन् ।  
 एआया दयन्नभित्वा हृषभान् हृषा ऽक्षरान् ।  
 वर्धयन् च पवितर्न्ति अस्थिरभू च सुता ऽक्षरान् ।  
 ब्रुवातामी ह्येहन् हाउदर्यावंइ ह्यहान् ततः ।  
 इगःहाउ पित्रासोमा मभवन् च शुधीहधम् ।  
 विद्वानित्यथ वैरूपे सुतासोमेति चाक्षरान् ।  
 सुतासोमेत्यन्तरिक्षे क्षारान् ब्रुवानतः परम् ।  
 सोमंशष्वा-चतुष्टय आग्मानं सुतादये ऽक्षरान् ।  
 पवस्वसोम मन्दयान् हाहेत्यत्र तोअक्षरादे ।

तत्रै दावान् जूवानाक्रान् धर्मज्ञानं सुतान् पुनस्तथा ।  
देवान्-चतुष्टयं त्वग्मान्, नकारान्तं मित्तीरितम् ॥ १ ॥ ५६ ॥

॥ समांशुमिदं मूह्यस्य सामप्रकाशसंज्ञयाम् ॥

( इति ऊह्यगानस्य )

( अथ सर्वगानानाम् )

॥ इथास्यायै प्रकरणं कथ्यते सर्वगानजम् ॥

( १ ) .

याष्टक् त्रयं पृथग्वेये प्रतोच्चैः परिकीर्तितम् ।

• उह्ये त्वच मिदं प्रोक्तं मेकमेव च तादृशम् ॥ १

ऊह्यस्य प्रथमान्त्या च वेयगानस्य मध्यमा ।

• ऋक् सम्प्रोक्ता चैवात्र प्रवाहन्द्रेति कीर्तितम् ॥ २

• इन्द्रायाहि चित्रभाना वित्तुक्त्वाद्यां ऋग्गणिके ।

ऊह्ये नाथ धियेपिता, इमूह्ये प्रथमा स्मृता ॥ ३ ॥ १ ॥

( २ ) .

• ऋग्वेये स्तोभ आरण्ये तुल्यं पदद्वयं तथा ।

• अस्तोषत स्वभानवो विप्रा ऋविष्ठया मती ॥ १७ ॥

इन्द्र इयं उवासीन्नि वेयेऽप्यङ्गमौति च ॥ ३ ॥ २ ॥



( ७ )

ऋगाद्यन्ता च वैयस्य मध्यमोहस्य या स्मृता ।  
 एवं सप्त समाख्यातास्तासां भेदा तथाक्रमम् ।  
 पवस्वदेव आगुप्रक् प्रयुषदग्निगातुवित् ।  
 प्रदेवोदास इतुरक्ता मिन्द्रोमदा यथाहषम् ।  
 एषन्नह्नाय इत्येता ऋहे प्रोक्ता यथा स्थिताः ॥ १ ॥ ७ ॥

( ८ )

युग्मं द्वितीयं दीर्घं यत् तन्नवैच प्रकीर्तितम् ।  
 मिमीषते भिगुर्दीहिदेदिदीहिदि ( ? ) ।  
 मिमीते अस्य योजनायु पूर्याश्च पिपीषते ।  
 ग्वेखाविशुता च बउपमिमीत्रो गभीत्यपि ॥ ८ ॥

( १३ ° )

एकान्तरेण ये ख्याताः प्रस्तवास्ते तंगोदश ।  
 वेये प्र-णब्द इतुरक्त अकारः शाकारर्षमे ।  
 आ-शब्दो रैवते प्रोक्त मकारः सन्मित-द्वये ।  
 हुङ्कारे राजने प्रोक्तः सोमव्रते तु कथ्यते ।  
 ईकारः कृष्ट ँकारो महावैश्वानरव्रते ।  
 उर्गिति दीर्घ वाक्-चत्ति-तुर्गणने प्रकथ्यते ।  
 पवस्वराजसेत्यत्र प्रणवः शाकारर्षमे ।  
 व्याहृती भूरिति प्रोक्तस्योदशैक कीर्तिताः ॥ १ ॥ १२ ॥

( १४ )

ऋगन्तेषु समाख्यातं त्रिषु मः खण्डमुत्तरे ।  
 आद्यावा मध्यमाथाश्च खण्डस्तदत्र लेप्यते ।  
 ऊहं ऊह्ये च कथ्यन्ते चतुर्दशात्र यत्र च ।

अतिमृगदधी परिस्नानो मधेः सर्वथा ।  
 इन्द्रनोगधिप्रियेति पतिर्दिवस्ततः पस्म ।  
 आघायेअग्निमित्यन्ते येषामिन्द्रो दणकइत ।  
 इन्द्रोअहं स्वादोरित्या वस्वीमंस्तीममर्हते ।  
 अत्रैव सख्येमारिषमिन्द्रयाहिर्दिवोअसु ।  
 उभेयदिन्द्ररोदसौ त्रिकस्येन सतः पणम् ।  
 अग्निन्तमीन्ये यइष महिसुजात इत्यपि ।  
 प्रतिप्रियतमं माध्वी प्रोषु ज्याका अवेति च ॥ १ ॥  
 चतुर्दशसमाख्यात युग्माद्य दीर्घं मन्त्रम् ।  
 क्मदोहिन्दोदिवः प्रतरां दौदिहोति च ।  
 इहोहोदोदिवः शुचयो दिदिवा मरुचत् ।  
 प्रावोविष दशशुभ वग्नेदोदिहि च स्मृतम् ॥ २ ॥ १४ ॥

( ४० )

शकारयुगलङ्गीतं चत्वारिंशत् प्रकीर्तितम् ।  
 जबाय शश्वते शिशो अमशुवन् शश्वत्तमं ततः ।  
 अशिखितत्तथा सान्त्वाशिशेति शश्वतीः स्मृतः  
 अशमशुभिर्दोषुवच्च मृथिव्या निःशशा अहिम् ।  
 शश्वच्छश्वद्वेशिशानः कलशे शमया नथा ।  
 शिशुंनय शिशुंनय प्राणाशिशुंमर्ही तस्था ।  
 सर्वः शिशुमती शब्दः शिशुकानिति चेन्नितः ।  
 चिनुयांमः श्वशदग्निः — शिशिरस्ततः ।  
 शशमानायसुत्वते दिवःशिशु मशुशुभम् ।  
 अशिशुशुशुवसा च शशुवो नो हि शश्वतः ।  
 क्कद्राचनः शश्वद्विशशाशुविष्टः शिश्वरीशिव ।

बृहिशश्वतान्दारेतः शिश्विः शश्वतीरपः ।  
 शिशुश्च देवानं तु शिशुः शिशुञ्जाविशश्वयोः ।  
 शश्वन्तद्भयन्ति च त्रीणी शिशुन्ममातरा ।  
 वर्जं शिशलिः शिषणा प्रोक्तं तालव्ययुग्मकम् ॥ १ ॥ ४० ॥

( ४१ )

ऋक् चरण मेक मुक्तं गाने स्थान्दयं साम ।  
 सत्ताक्षरादिसंयुक्तं तदेवात्र विलिख्यते ।  
 अङ्गि के यद् भवेत् पदं गाने तन्न भवेत् क्वचित् ।  
 न लिख्यते तदेवात्र निदर्शन मथोच्यते ।  
 प्रमिन्दूतं यजिष्ठन्वा अस्ययज्ञस्यसुक्रतुम् ।  
 मिद्विविश्वः यद्दीडावि वसुस्पाहंतदाभर ।  
 इमाउत्तरः सुतेसुते आत्वागिरं रथीरिवा ।  
 गोवोक्त्सनधेनुषु अभिप्रगो अभिप्रवा ।  
 इन्द्रमर्चयथाविदे सदसस्यतिमद्भुतम् ।  
 अभीनवन्ते द्विर्यपः प्रियमिन्द्र काम्यं त्रिषु ।  
 येतेपन्था येभिवियेन्यास्ते येभिव्यश्वमैर्यः ।  
 वातआवातु दधिक्रावणः प्रणआयूषितारिपत् ।  
 आत्वासहस्रं एहदेवाम् कहन्तुसोमपीतये ।  
 इन्द्रमिहेवताः पिदासान्नि इन्द्रन्धनस्यसातये ।  
 इमाउत्वापुह्वसरेगिर इन्द्रमीशान्मोजसः ।  
 अभिस्तोमैरनूषता उदुत्येमभु पदस्सोभगान्द्रयन् ।  
 वाजयन्तो यच्छुक्रासि दक्षिद्वित्वा ऽऽविवासति ।  
 गुनोतसोम दिवधीयूषं सोममिन्द्रायवज्जिणे ।  
 पाहिगः प्रन्धसः इन्द्रइक्षयोस्सचा इन्द्रोवर्षीहिरण्ययः ।

इम इन्द्राय सुन्विरे तेषूतामः सोमासोदध्युशिरः ।  
 तसु अभि पान्त्वद्वितीयां ऋक् पुरुहुतम्पुरुष्टुतम् ।  
 इत्याहि सोम इन्द्रसुभ्यमिन्द्रिवः ।  
 प्रेह्यभीहि धृष्युहि अर्चं वनुस्वराज्यं त्रिषु ।  
 अक्षत्रमी उमीषुश्रुष्टुही संघातं वषणं योजान्विन्द्रतेहरी त्रिषु ।  
 अक्षत्रमीमद उवो प्रथमे अस्तोषतं स्वभान्तो विप्रानविषयामती ।  
 आर्ते अग्नइधी अग्निर्त्स्यन्ये इषुस्तोष्टभ्यभाभर ।  
 अग्नित्रस्ववृत्तिभिः अग्न आयाह्यग्निभिः होतास्त्वाहृणीमहे ।  
 अग्निं होतारं पुरुप्रशस्तमूतये सङ्गस्ते जातकेदसंम् ।  
 इन्द्रायेन्द्रो पदस्वमधुमत्तम इन्द्राय सोमेति च ।  
 वषाह्यसिभानुनां तंत्वाधर्त्तासोण्याः पवंमानः स्वर्दृशम् ।  
 पुनानः सोमधारया अनुशूरवीरामसि उक्ता देवो हि सुख्यय  
 प्रसोमदेव पक्वानस्यते कवे अच्छोको गमधुसुतम् ।  
 पवस्व वाजसातमः अक्रान्त्वसुद्रः प्रथमे विधर्मन् ।  
 एषस्य तं मधुमा ऋक्तावा ज्योतिर्यज्ञस्य मदिन्तमोमस्वरः ।  
 वषामतीनां अवद्युतानः कलशा अचिक्रदत् ।  
 प्रधन्वा सोम त्वसुश्वाणो द्युमन्तश्शुभमाभर ।  
 वृनप्रत्नेमदच्युतम् एतमुत्थम्यदच्युतं सङ्गस्वधारं पभम् ।  
 सनु इन्द्राय असा इन्द्राय वरुणाय मङ्गदः ।  
 एनविश्वानिः ससुष्ठवामियसु सिषासन्तीवनामह ।  
 इन्द्रानस्यसातवे सख्येत इन्द्रवाजिनो जेतारमपरं जितम् ।  
 एवमवित्याद्यारथ्ये विदायाञ्च ।  
 वरिवोधातमो भुवः उभेत्तोकेतनये परिरेत्सोमघोनाम् ।  
 त्रिकदंकेषुकेतनं मुपोषुजातं तमिद्वदन्तुनो गिरः ।

सुताइन्द्राय सुता भस्मा च वर्जित मेकविंशत्यक्षरं तुल्यम् ।  
 मकरासः प्रिप्रदेवाय राजादेवकृतं कृत्वात् ।  
 मूनोस्यिन्महोमिहो इषन्तीकाय  
 अस्मभ्यः सोमावृक्षः आपवस्वसहस्त्रिणमिति पादद्वयम् ।  
 अर्षर्जिकलशाः सदीवनेषु मोद्वान्कृत्तिर्नवजयुः ।  
 पवस्ववाजसातथे अयं दत्तायसाधनो देवेभ्योमधुमत्तरः ।  
 ज्योतिर्यज्ञस्य ऋतस्य जिह्वा पवर्तमधुप्रियम् ।  
 रसन्ते मित्र स्तवत्यइन्दो पवमानस्यमरुतः ।  
 आनःसोम इन्द्रस्यरुदेम पवमानजर्भिणा ।  
 शिशुञ्जज्ञानःऽहृरिं शिशुञ्जज्ञानऽहृर्यतं ।  
 शिशुञ्जज्ञानऽहृ०-०मृञ्जन्मोति नवाक्षरं तुल्यम् ।  
 असुप्रियोमृञ्चतं वषट्तेविष्णुत्रा यूयम्यातस्वस्तिभिस्सदानः ।  
 इदंश्रेष्ठं ज्योतिषा ज्योतिरिति नवाक्षरं तुल्यम् ।  
 तऽहोतारमध्वरस्यप्रचेतस मिष्कर्तारमध्व-  
 रस्यप्रचेतस मिति दशक्षरं च तुल्यम् ॥

स्तान् मकराणां पदानि त्यक्तानि बहुत्वात् ॥

मिश्रित मिट मिति सुखदं कौतुकसहितं दुर्घटश्लोकैः ।  
 प्रीतिकरेण यथाक्रममुदीतं सामग्र्यस्य सर्वस्य ॥ १ ॥

इति प्रीतिपरत्रिवेदिप्रणीतं सामप्रकाशनं समाप्तम् ॥















